श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः ।

श्रीबिहारीसतसई ।

सटीक ।

हरिप्रकाश टीका सहित ।

जि मन्महाराजाधिराज महाराज नाहरसिंह
जू. बहादुर शाहपुराधीश की आज्ञानुसार
औ उन्हीं की सहायता से बाबू रामकृष्ण
र्मा भारतजीवनसम्पादक ने छापकर
प्रकाश किया ।

काशी ।

भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुई ।

सन् १८८२ ई० ।

PRINTED AT BHARAT-JIWAN PRESS.
BENARES CITY.

भूमिका ।

पाठकगण,

अत्यन्त हर्ष का अवसर है कि श्रीयुत बिहारीदासजी के सतसई की एक अपूर्व टीका लेकर मैं आपलोगों के सन्मुख उपस्थित हुआ हूं। बिहारीजी के दोहों का लालित्य जगत् में वैसाही प्रसिद्ध है जैसे श्री तुलसीदासजी की चौपाई की भक्ति वा गिरधर या खानखाना की कुण्डलिया का रस। स्थान स्थान पर ये दोहे अत्यन्त कठिन हैं और एक एक दोहों में कईएक अर्थ हैं उन सभों के स्पष्टीकरणार्थ टीका की अत्यन्त आवश्यकता पड़ती है। छपरानिवासी श्रीयुत हरि कवि जी ने जो हरिप्रकाश नामक टीका इस पर की थी उसकी प्रशंसा प्रायः सुना करते थे सो विदित हुआ कि शाहपुराधीश श्रीमन्महाराजाधिराज महाराज नाहरसिंह जू देव के सरस्वतीभवन मे है। हमारे निवेदन करने पर उक्त महाराजा साहब ने निज सरस्वतीभण्डाररक्षक पण्डित रामचन्द्रजी को आज्ञा दी कि यह ग्रन्थ हमे दिया जाय। उक्त पण्डितजी ने हमे इस कार्य्य मे बहुत सहायता दी है जिसके लिये हम उन्हे हृदयसे धन्यवाद देते हैं। महाराजासाहब की सहायता से हमने उस ग्रन्थ को छापकर प्रकाश किया, जो आपलोगों के सन्मुख उपस्थित है, किन्तु हम अपना परिश्रम समीर को तभी सफल समझेंगे जब आप सरीखे रसिकमलिन्द इस काव्यकमल का मकरन्द पान कर इसके विकाशक रविकुलतिलक उक्त महाराजा साहब का यश चतुर्दिक विस्तार करेंगे।

आपका कृपाकांक्षी
रामकृष्णवर्म्मा
काशी।



श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः ।

सवैया ।

तुलसीदल माल तमाल सो स्याम अनङ्ग तें सुंदर रूप सोहांहीं । श्रुतिकुण्डलके मनिकी झलकें मुखमण्डलपैं बरनी नहिं जाहीं ॥ सखि देखि पियूष मयूषहु तें सुखमा अति आनन की सरसांहीं । बिहरैं हरि गोपसुता संग कान्ह निसीथिनि * में बनबीथिनि मांहीं ॥

मूरति को भेद अरु सूरति को भेद नहिं मोहन सौं भेद मत वेदनि के ग्राम को । नेह परिपूर वृषभानुनन्दिनी को नूर देखि जात रूप को गरूर कामवाम को ॥ आनन अनूप वारिजात को है भूप किधौं भासै न समान उपमान सुधाधाम को। करुना अगाधा हरै संतन की बाधा ऐसी कहै विन राधा फल आधा कृष्ण नाम को ॥ २ ॥

श्री को निवास सुगंध को बास औ रूप अनूपमता पहिचानी । राधिका की चरनच्छविकंज कही मैं लही विधि सौं यह बानी ॥ धूरि सौं पूरि पराग मिसै करतार दियो रिस की रुख बानी । पानी गयो लजि बारिज को ठहरै फिरि बारिज पैं नहिं पानी ॥ ३ ॥

* रात्रि में

दोहा ।

मो हिय राधा कान्ह को निस दिन बसौ विहार ।
जिहिं सुमिरत प्रत्यूह के बिनसत जूह अपार ॥४॥
तीरथ सेवन करत हरि प्रेमभक्ति को मूल ।
धन्य कलिंदी कूल लखि लोभे पीतदुकूल ॥५॥

अथ कवि की स्थिति ॥

राजत सुबेबिहार मै है सारनि सरकार ।
सालग्रामी सुरसरित सरजू सोभ अपार ॥ ६ ॥
परगन्ना गोआल सै गांव चैनपुर नाम ।
गंगा सों उत्तर तरफ सो हरि कवि को धाम ॥ ७ ॥
सरजूपारी द्विज सरस बासुदेव श्रीमान ।
ताको सुत श्रीरामधन ताको सुत हरि जान ॥ ८ ॥
नवापार मैं ग्राम है बढ़या अभिजन जास ।
हरि सुविहारीसतसई टीका करत प्रकास ॥ ९ ॥
फेरि बिहारी पढ़न कों परै न काहू पास ।
ऐसो टीका करत है हरि कवि हरि परकास ॥ १० ॥

अथ श्रीबिहारी सतसई



मेरी भवबाधा हरौ राधा नागरि सोय ।
जा तन की झाईं परें स्याम हरित दुति होय ॥१॥

पुरुषोत्तमदासजी को बांध्यो क्रम है ताके अनुसार टीका ।

श्रीवृषभानुनन्दिनी औ श्रीकृष्णजी को शृङ्गारवर्नन होयगो, मेरो मन विकार कों न प्राप्त होय यातें कवि शांतरस में आशीर्वाद रूप मंगलाचरन करत है।

मेरी भवबाधा इति—मेरी हमारी, जो भवबाधा फेरि फेरि जन्म लेनों सो है दुख ताकों हरौ, भव नाम जन्म को औ संसार को, बाधा दुख, हे राधा नागरि प्रवीन, तुम भक्तवत्सल हौ, भक्त के दुख देखि तुमैं दया आवति है, सोय को अर्थ प्रसिद्ध, वेद पुरान तुम्हारी स्तुति करैं हैं। और भी तुमारे सुजस कहत हौं, जा तन की झाईं परें, जो तुमारे तन की झाईं प्रतिबिम्ब परै तें स्याम जो हैं श्रीकृष्ण, सो हरितदुति होत हैं, डहडहे होत हैं, आनन्द होत हैं। राजो करिवे कों लक्ष्मी सेवा करति हैं, तो भी इतनो राजी नहीं होत हैं, किंवा तुमारो रंग है पीत, श्रीकृष्ण को रंग है स्याम, स्याम पीत मिलें हरित द्युति होति है, यह प्रसिद्ध है, यहां काव्यलिंग अलंकार है, यथा—

भाषाभूषन—"काव्यलिंग जहँ जुक्ति सों अर्थ समर्थन होय"

भवबाधाहरन श्रीराधिकाजी के प्रभाव करि समर्थित कियो ।

एक अर्थ के अलङ्कार लिखेंगे—और श्लेष सों जितने अर्थ करेंगे ता सब के अलंकार लिखें ग्रन्थ बहुत बाढ़ेगो ।

किंवा, मेरी जो है ममता सोई है संसार विषैं बाधा दुःख ऐसो जानिये। किम्वा, ध्यान में तुमारे तन की भांई परैं स्याम जो है हमारे हृदय को अंधकार, सो हरित होत है, हयो जात है। दुति कहिये प्रकास,सो होत है। किम्वा, शृङ्गारप्रधान ग्रन्थ है, तामें शृंगारही को मंगलाचरन चाहिये,तहां ऐसो अर्थ, कि नायिका कों मानिनी देखि नायक प्रार्थना करत है, मेरी भौबाधा, तुमारी मान देखि, हमारे भौ कहिये डर, तासौं भई है जो बाधा दुख, ताकौं हरौ, मान छोड़ो यह अर्थ, हे राधानागरि कहा करिकै, सोय, याकों अर्थ हमारे पास सयन करिकैं। तुमारे तन की भांई परैं सों स्याम जो है हमारो यह तन, सो सानन्द होत है। किंवा, तुम्हारे तन की भांई जब हमारे तन में मिलाप समय परै है तब रंगही सौं स्याम लीजिये शृंगार (साध्यवसाना लच्छना करिकै) किंबा काम सो पल्लवित होत है, ॥

साध्यवसाना लच्छना लच्छन, सभाप्रकास "रौप्यमान जहँ रहत है रौप्य विषै नहिं होय। रौप्य विषै लाग्यौ परै साध्यवसाना सोय"।

रौप्यमान इहां स्याम गुन, रोप्य विषय शृंगार काम सो जान्यौ परै है, किंवा तुमैं देखे बिना तुम सौं मिलै विना हमैं कछु नजर नहि आवै है, तुमारे तन की भांई जब हम विषैं परै है तब हमैं स्याम अंधकार जो है हरित दिसा ताहि विषैं दुति प्रकास होत है, जासों अति आसक्ति होय ताहि विना अंधकार जगत में और कविन ने कह्यो है, हमारो बनायो मोहनलीला ग्रन्थ वाको कवित्त—

लोचन की गति कौं गहि चित्त कियो हरि माधुरी मांहि बसेरो,

जौ लगि गाय चरावन जाय विते छनहूं दिन ज्यों विधि कैरो,
कोटिक भानु उगैं असमान मैं ह्वै किन पूरनचंद को घेरो ।
तौहू सखी सुनि गोपसुतानि कौं कान्ह विना व्रज होत अंधेरो ॥
दोहन के बहुत अर्थ होत हैं, चमत्कृत अर्थ लिखैंगे ।

सीस मुकुट कटि काछनी कर मुरली उर माल ।
यह वानिक मो मन सदा बसौ बिहारीलाल ॥२॥

सीस मुकुट इति— यह दोहा मों कवि ध्यान करि उपास्य श्रीकृष्णचंद्र कौ ग्रन्थ करे है। सीस विषैं मुकुट है, कटि विषैं काछनी है, कर विषैं मुरली है, उर छाती ता विषैं माल है, काछनी गोपनि कौ पहरन, यह जो वानिक वनाव है, नटवर वेष है, या वेष सों हे विहारीलाल, तुम सदा मेरे मन मों वसो। इहां स्वभावोक्ति अलंकार है—याकौं जाति अलंकार भी कहत हैं।

"जैसो जाको रूप गुन तैसो कहै सुजाति" ।

कितने कवि ऐसे भी या दोहा के अर्थ करे हैं, कि सीस सौं मुकुट सों जैसो वानिक है वनाव है, सीस विना मुकुट और ठौर नहीं रहै, या तरह सौं हमारे मन विषैं तुम वसो, तुमैं विना मन और ठौर में अच्छौ न लगै, याही तरह कटि काछनी इत्यादि लगाइये। यह वानिक इति, या वानिक सौं तुम मेरे मन विषैं वसौ, किंवा, तुमारी यह वानिक में मेरो मन बसै। किंवा खंडिता की उक्ति नायक सौं हैं ॥ प्रात समय नायक आयो है तव नायिका कहै है। पूर्वार्द्ध को वही अर्थ ॥ यह वानिक जो तुमारो नटवर-वेष, परस्त्रीन को राजी करिवे को वेष तासौं मेरे मन मैं वसौ, मेरे पास मति वसो। क्यों तुम विहारीलाल हौ, ठौर ठौर वि-

हरत फिरत हो। किंवा, वि कहिए दूसरी नायिका, ताकों हार गल में राखे हो, ओ लाल हो, राति जगे हो, तासों नेत्र लाल हैं॥ पान की पीक जावक मिहँदो लागी है, तासों लाल भये आये हो॥ २॥

मोहन मूरति स्याम की अति अद्भुत गति जोय।
वसति सुचित अंतर तऊ प्रतिबिम्बितजग होय॥३॥

मोहन मूरति इति—गुरु शिष्य कों कहत हैं, कि स्याम श्रीकृष्ण तिनकी मूरति मोहनी है, ताकी गति क्रिया अति अद्भुत है, सो तू जोय अर्थात देख। सुन्दर चित्त के अन्तर नाम भीतर वसत हैं, तौभी जगत में प्रतिविम्बित होत है प्रतिविम्बित को अर्थ लच्छना करि भासति है, जो कोईके हृदय में भगवान आवत हैं ताहि सब जानत हैं यह प्रसिद्ध है। इहां अति अद्भुत काढ़नों चाहिये, दीप फानूस में रहत है वाहिर भी भासै है। इहां अन्वय जानिए।

अन्वय को लच्छन, "अन्वय पद सम्बन्ध पद निकट रहै कै दूरि, अर्थ करत मिलजात है यह जानौ सबसूरि"।

जो पद जाहि पद सों अन्वित होय ताके निकट रहै किंवा दूर रहै अन्वय न करो तो नजक धरत इत्यादि दोहा नहीं लगै। ऐसें लगाइये स्याम की अति मोहन मूरति है, और जो देखे सो मोहित होत है, स्याम के रूप गुन सुनत मोहित होत है, ताकी अद्भुत गति देख, वसति सुचित अन्तर, सुन्दर जो दृढ़ चित्त ताके अन्तर नाम भीतर वसति है, तऊ जगत में भासै

है, जो वस्तु दृढ़ वस्तु में रहै सो बाहिर भासै नहीं, कोठी मैं दीप धरो बाहिर भासै नही, इहां विसेष अलङ्कार है, ।

"तीन प्रकार विशेष हैं अनाधार आधेय"। चित्त कल्पित आधार है जैसें आकास, और मूरति आधेय है।

तीसरो अर्थ— स्याम की मूरति कहिये प्रतिमा मोहिनी है, ताकी गति जो है क्रिया, सो अति अद्भुत देख, प्रतिमा को नाम देव दूध पिआयो पीगई प्रतिमा के अन्तर मध्य जो सुचित कहिये निर्मल चित्त भक्त को बसै, तरु जगत मैं वह भक्त प्रतिविम्बित होय भासमान होइ अर्थात् सब वाकों सिद्धजानैं। किंवा वाको संपूर्न जगत प्रतिविम्बित होय भासमान होय, ताकौं लोक देखैं ऐसी सिद्धि होइ।

चतुर्थ अर्थ— मोहन मूरति स्याम की है, ताकी अति अद्भुत गति देखो, बसत सुचित अन्तर सूचित किये सों अर्थात् गुरु के कहे सौं, सिष्य के अन्तर हृदय में बसै है, इहां सुचित है सूचित क्योंकरि लगै सो कह्यो है—

"गुरु लघु लघु गुरु होत है निज इच्छा अनुसार"

तौभी जगत में प्रतिविम्बित होत है, काहे सौं मनमैं बसैं यह अद्भुत, लोक में जाहिर होत है यह अति अद्भुत।

पंचमार्थ—नायक मान छोड़ाइवे आयो है, मानिनी सौं नायक के पक्षकी सखी को वचन, तौ स्याम की है तिय स्याम की ति कहिये कान्ता तू स्याम की है, ति भी स्त्री कौ कहै हैं॥

'बाँधी रसरीति रसरी ति डारी कूप में"

मोह न मूर, तोहि मोह अर्थात प्यार न, मूर अर्थात कछु भी

नहीं, अति अद्भुत गति की अति अद्भुत तरह की तू जोय, । है। जैसे कोई कहै है फलाना अजब तरह को आदिमी है यह बोलनि है ॥ किंवा तू आपनी अति अद्भुत गति नाम तरह ताको जोय, जोय को अर्थ देख, बसत सुचित नायक के सुन्दर चित्त में बसै है, तऊ अर्थात् तौभी अन्तर जुदागी राखै है, यह बात जगत कहिये ब्रज किंवा सखीगन तामें प्रतिबिम्बित होति है नाम जाहिर होति है। जगत कहें संसार जानिये, थोरो भी जान्यौ जात है। यथा विहारी—

" जग जानी बिपरीति रति लखि बिंदुली पियभाल "

इहाँ थोरी सखी कौं जगत कह्यौ। किम्वा नायक तेरे चित्त में बसै है, तोभी अन्तर राखति है।

षष्टार्थ— स्याम की अति मोहन मूर्ति जो है राधिका जी, तिनकी अति अद्भुत गति देखौ, सुन्दर दृढ़ चित्त के अन्तर बसै हैं, और अर्थ वैसेंही जानिए ॥ ३ ॥

तजि तीरथ हरि राधिका तन दुति करि अनुराग।
जिहिं ब्रज केलि निकुंजमग पग पग होत प्रयाग॥४॥

तजि तीरथ इति—गुरु सिष्य कौं उपदेस करै है। हे सिष्य तू तीरथ कौं तजि छाड़ ॥ हरि राधिका कौं जो है तन औ द्युति तामें अनुराग कहिये प्यार कर, कहा सुन्दर अङ्गन की बनावट है, कहा सुन्दर कान्ति है। जो सिष्य कहै कि तीर्थनि में विशेष फल है, तब गुरु कहै है कि जिहि ब्रज विषें क्रीड़ा करिवे को जोहै निकुञ्ज ताको जो है मग नाम पथ, तहां पग पग में, एक एक

ौ पग प्रमान जोहै धरती, तामे प्रयाग, जो है तीरथराज, सो होत
ह है ॥ लच्छना सौं ताको फल होत है। तात्पर्य्य यह कि तीर्थ
ो मति जाय ब्रज मैं बैठि श्रीराधाकृष्ण में प्रेम करि ॥ काव्यलिंग
में अलंकार है ॥

भाषा भूषन – "काव्य लिंग जब जुक्ति सौं अर्थ समर्थन होय"

तीर्थ त्याग कौं जुक्ति सौं समर्थन कियो ठहरायो।

दूसरो अर्थ—उद्धवजी ब्रज सो लौटिके ब्रजदेवीन की हकीकति श्रीकृष्ण सौं कहत हैं ॥ जो राधिका जी जानती कि तुम फेरि नहो आवोगे तो हे हरि राधिका जी तुमारे रथ कौं तजती नाम क्या कभी छोड़ती ? अर्थात् पकरि राखती, नही आवने देती क्यौं तुमारे तन धो द्युति में अनुराग करिकै। अब वहाँ की कहा दसा है सो सुनो कि जिहि ब्रज विषै क्रीड़ा करिवे को जो है निकुञ्ज ताको जो है मग पथ तहाँ पग पग में प्रयाग होत है ॥ पीछली लीला सुधि आवै है तो रोदन करे है। आंसू को रंग है स्वेत, तुमारे रहते जो कज्जल दियो थो तासौं स्याम होत है, पाँव मे लगी जावक सौं मिलि के लाल होत है। गंगाजी को जल स्वेत, जमुनाजी को जल श्याम, सरस्वती को जल लाल, यातें प्रयाग होत है ॥

तीसरो अर्थ— हैमी अनेकार्थ दो अक्षर कथान्त प्रकरण में तीर्थ नाम दर्शन को है। "योनौ पात्रे दर्शनेषु" नायक और स्त्री कौं देखै है, तब नायिका के पक्ष की सखी नायक सौं कहै है कि हे हरि तनु दुति जो है नायिका, तनु कहिए थोरी है दुति जामें ऐसी जो नायिका ताको तीर्थ नाम दर्शन ताको तजो, रा-

धिका में अनुराग सोभा को आधिक्य कहे है ॥ जिहि धिका। सों वृज-केलि-निकुञ्ज-मग जो है सो पग पग में प्रयाग होत है। देखि कै पाँव धरनो कह्यो है ॥ जहां पाँव धरे हैं तहां दृष्टि ो। प्रतिबिम्ब स्वेत स्याम और पाँव को प्रतिबिम्ब लाल परे है ा ो। प्रयाग होत है। भूमि में भी प्रतिबिंब परे है दुपहरिया सी फूल आगे कहेंगे ॥

चतुर्थार्थ—जमुना के तीर नायक और स्त्री कूं देखे है तहां नायिका की सखी कहे है। जमुना को जो है तीर ताको है नायक थहरि कहिये आपनी प्रिया सों भय मानिकें जो डरे है सो थहरे नाम काँपे है ॥ तजि को अर्थ तजो जो नायिका सुनैगी तो मान करैगी। राधि का तनु दुति थोरीहै दुति जामें ऐसो नायिका को राधि को अर्थ राजी करिकै ॥ का को अर्थ कछु नहीं, करि को अर्थ करी, जैसें कोई कहे है कितू फलानी बात करि। करी अनुराग वासों जिहिं नायिका सों वृज केलिनिकुंज-मग पग पग मे प्रयाग होत है ऐसी सोभा है ॥ अर्थ पिछिलो जानिए ॥ ४ ॥

सघन कुंज छाया सुखद सीतल मंद समीर ।
मन ह्वै जात अजौं वहै वा जमुना के तीर ॥ ५॥

सघन इति—श्रीकृष्णजी मथुरा गये तब विहार को कुंज देखि सखी सों नायिका को वचन। हे सखि सघन निविड़ कुंज है, ताकी छाया भी सुखद है। तहां सीतल मन्द सुगंध समीर पौन है। मन ह्वै जात अजौं वहै। जब आवें थीं तब जमुना को

वा जो तीर है कुंज तहाँ नायक कों बैठो पावैं थीं॥ अजौं अब भी वहै मन ह्वै जात है कि वहां बैठे पावैंगे। विरहिनी कों सीतल मंद समीर सुखद क्यों कह्यो? जब जान्यो कि नायक उहां बैठ्यो है तब विरह कौ भयो नास, तासों छाया सुखद सीतल मंद समीर कह्यो। इहां स्मृति अलंकार है॥

"सुमिरन भ्रम सन्देह जहँ लच्छन नाम प्रकास"।

किंवा—नायिका उहाँ गई है नहीं, दूर सौं कहति है, कि सघन कुंज की छाया सो सुखद है औ समीर सुखद है, अब भी कोई उहां जाति है ताको मन वहै वैसोई ह्वै जात है, जैसो श्री कृष्णजी के रहते राजी होतो तैसोई राजी होत है। स्थान ऐसो है जाहि देखि लागत है कि अबहीं श्रीकृष्ण उठि कै और कुंज में गये हैं। जमुना कै वा तीर मे। ह्वै को अर्थ होत है यथा॥

"मद हँसे सुख प्रीतम को मुख चौंपनि की उपमा तब ह्वै"।

तीसरो अर्थ—खंडिता नायक सौं कहति है। घन को अर्थ कठोरता, कठोरता सहित सो सघन हम तुमैं देखें बिना दुखी होति हैं तुमैं दया नही आवति है॥ यातें कह्यो है सघन कुंज बैठी छाया सुखद जो वह नायिका है, छाया कहिए कान्ति सो जाको तुमकों सुख की देनेहारी है, सपत्नी की उक्ति व्यङ्ग लिये जोवन की जो कान्ति सो तुमकों सुखद है वाके अङ्ग अच्छे नहीं वचन अच्छा नही यह खण्डिता को लच्छन है।

"कहे बात जो चित चढ़ै अनुचित उचित समाने"।

जैसी खद्योत मे राति के समय में जोति आवै है पै अङ्ग सुन्दर नाही। किंवा जाकी कान्ति सुखद है सुख कौं खण्डन क-

रमैवाली है जाहि देखें सुख जातो रहै ऐसी तुमारे मन वसी है। हे मन्दमूढ़ तू रूप गुन में समुझत नहीं, जहाँ सीतल समीर है। ह्वै को अर्थ करि भी है जैसे या राह ह्वै आए; या राह आये जानिये। मन ह्वै मन करि जात हौ अजौं अब भी वहै नायिका जहाँ है वाकौं ऋख करि पच्यौ अँगुरी सौं वतावे है। "वा देखो जमुना के तीर में" ॥ ५ ॥

सखि सोहति गोपाल के उर गुंजन की माल ।
वाहिर लसति मनो पिएं दावानल की ज्वाल॥६॥

सखि सोहति इति। नायिका को वचन सखी सों। हे सखी गोपाल के उर विषें छाती विषें, गुंजनिकी माला सोहति है, मानो पियें सो दावानल की ज्वाला वाहिर लसति है सोहति है। इहाँ उक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा है। एक वस्तु दूसरी वस्तु करि जहाँ सम्भावन कहिये डोल कीजिये सो उत्प्रेक्षा, गुञ्जमाल वस्तु विषें ज्वाला वस्तु की संभावना है।

"संभावना उत्प्रेक्षा वस्तु हेतु फल लेखि। वस्तु दुविध उक्तास्पद अनुक्तास्पद पेखि"।

सन्देह—गोपाल के उर विषें दावानल की ज्वाल हित सौं नहीं कही जाति है तब ऐसो अर्थ, मानो गुंजा की माला ने दावानल की ज्वाल पोई है सो वाहिर लसति है। भगवान ने दावानल नहीं पियौ, शक्ति नें पीयौ। औ उत्प्रेक्षा में यह भी अर्थ संभवै है मानो माला ने दावानल पियौ तोभी कठोर माल हृदय पें रहै है सो प्रेमी को नहीं सही जाति है तब ऐसो अर्थ कीजिये कि नायक के गरकी माला सपत्नी के गरमें देखिकें नायिका कहै

है. हे सखि गोपाल के उर कौ गुंजनि की माला या नायिका के
ार में ऐसी सोहति है भासति है, संभावना करै है. मानौं माला
ने दावानल पिई है सो वाहिर लसति है, क्योंकि हमारे नेत्र
देखें सों वरत हैं ॥ ६ ॥

जहां जहां ठाढ़ौ लख्यौ स्याम सुभग सिरमौर ।
उनहूं बिन छिन गहि रहति दृगनि अजौं वह ठौर ॥७॥

जहाँ जहाँ इति—यह दोहा विहारी को नहीं। जब श्रीकृष्ण मथुरा गये हैं तव नायिका सखी सों कहति है, जहाँ जहाँ स्याम कौं ठाढ़ो देख्यौ, कैसे है स्यामसुन्दर जिनको सिर को मुकुट है अति सुन्दर यह अर्थ, उनहूं विन, वे नहीं है तोभी ठाढ़े होने को जो है ठोर सो अजौं अव भी दृगनि कौं गहि रहति हैं पकरि राखति है, वा ठौर देखि नायक याद आवै है नेत्रनि में नायक को रूप वसि जात है तातें और ठौर नेत्र जाय नहीं सकैं। इहाँ प्रथम विभावना अलङ्कार है।

"होति छ भांति सभावना कारन विनही काज"।

दृगनि के गहिवे को कारन नायक सो नहीं है, कारज दृग कौ गहनों है। स्मृति अलङ्कार भी जानिये ॥ ७ ॥

चिरजीवो जोरी जुरै क्यों न सनेह गंभीर ।
को घटि ये वृषभानुजा वै हलधर के वीर ॥ ८ ॥

चिरजीवो इति—सखी सों सखी की उक्ति। यह जो राधा कृष्ण की जोरी है सो चिरजीवौ, जुरै मिलें सों क्यौं नहीं गंभीर प्रीति होय, होतही है। प्रीति वरोवरही सों सोभा पावति है।

"लायकही सों कीजिये वैर व्याह अरु प्रीति"।

यामें को घटि है? दोऊ बरोबरि हैं। राधा वृषभानु की बेटी है, वे जो कृष्ण सो हलधर बलदेवजी तिनके वीर कहिये भाई हैं यहाँ सम अलङ्कार भयौ। "अलङ्कार सम तीनि विधि जोग को संग"। यहाँ वचन को मेल नहीं भयौ, जो इनैं वृषभानुजा कह्यौ तौ उनैं नँदनन्दन कह्यौ चाहिये। मान में सखी को वचन, तहाँ नायिका कौ वचन, सखी कहै है चिरजीवौ या जोरी जुरें मिलें क्यौं नहीं गंभीर सनेह होत है इहाँ घटि कौन हैं वृषभानुजा, तब नायिका की उक्ति वे हलधर के वीर हलधर पद सों गँवार जानिये ताकौ भाई गँवार॥ ८॥

नितिप्रति एकतही रहत बैस बरन मन एक।
चाहियत जुगलकिसोर लखि लोचन जुगल अनेक॥९॥

नितिप्रति इति—भक्त की उक्ति भक्त सों। श्रीकृष्ण बलभद्र नितिप्रति कहिये सदा एकतहीं रहत एकत्रहीं रहत हैं, बैस बरन बैसवयः क्रम ताकों तूं वरन वर्नन कर, कहा अच्छी उमिरि है। औ मन जाकौ एक है, ये जो जुगलकिसोर हैं दोऊ किसोर हैं तिनैं देखि कैं लोचन जुगल कौ अर्थ लोचन के जुगल जोड़ा, अनेक चाहियत है। एक जोड़ा नैन सों रूप देख्यौ नहीं जात है, सौन्दर्य्य को आधिक्य व्यङ्ग। किंवा वर्ननीय वर्नन करिवे लायक, वयस अवस्था, सो एक है औ मन एक है। किंवा जुगल के किसोर, नन्दजी के कृष्ण वसुदेवजी के बलभद्र तिनें देखिकैं और पीछिलो अर्थ। किंवा, श्रीकृष्ण कों वसुदेवजी को पुत्र जानत हैं,

ऐसो कोई मुनि की उक्ति मुनि सों। औरि सब अर्थ वैसेंही, वैस वरन मन एक, इतने को अर्थ—वयस उमिरि, वर्न जाति, औ मन जाको एक है, एकतहीं कहिये श्रीवलभद्र औ श्रीकृष्ण दोउ भ्राता संगही चलिवो इत्यादि जानिये। किंवा, जुगलकिसोर कों देखि कें लोचन जुगल अनेक चाहियत है, नितिप्रति एकत्रही रहत हैं। वैसवरन याको अर्थ, वे श्रीकृष्ण औ वलभद्र एक वरन हैं, नाम समान जाति हैं, औ मन जाको एक है। किंवा वयस के वरन अच्छर औ मन एक है। जो किसोर ये हैं सो किसोर ये हैं, या अर्थ मे सखी सों सखीवचन जानिये। किंवा सखी सों सखी राधाकृष्ण की तारीफ करै है। वयसवरन जाति एक, गोप जाति एक है। किंवा, राधिकाजी को वयस उमिरि ताके वरन अच्छर करिकैं एक हैं, सोरह वरिस की स्त्री स्यामा कहावति है, कृष्ण स्याम हैं, स्यामा मै आकार है, स्याम मै अकार है। आकार अकार समान वर्न है। व्याकरन रीति सों जुगलकिसोर इहाँ किसोरी किसोर भी जानिये। जुगल जो किसोरी किसोर। पहिले अर्थ में भी राधा कृष्ण जानिये। इहाँ समालङ्कार है।

"अलङ्कार सम तीन विधि यथाजोग को संग"

खण्डिता की उक्ति में भी लगै है। प्रात समै नायक आयोहै, तहाँ नायिका को क्रोध देखि नायक के पक्ष की सखी कहति है येतो औरि नायिका पास जात नहीं हैं, तूं क्यों मुख फेरि वैठी है, इनकी ओर देख, तव नायिका कहति है कि नितप्रति एकतही रहत अर्थात् ये तो सदा एकत्र रहत हैं। इनको उनको वैस एक है वरन रंग एक जैसो काले ये हैं तैसी काली वे हैं, मन

एक है। जैसो कुटिल मन इनको तैसो कुटिल मन वाको है, ये जुगलकिसोर हैं, किसोरी किसोर है, हृदय में इनके वही बैठी हैं, ताकों देखिबे कों लोचन जुगल अनेक चाहिये। इन दोय नेत्र सों कहा देखों।

"देखनें न देहों इनें योंही तरसैहों अब, हियही की आँखिनि दिखैहों रूप रावरो"। ऐसें खण्डिता कहति हैं।

मोरमुकट की चंद्रिकनि यों राजत नँदनंद।
मनु ससिसेखर के अकस किय सेखर सतचंद॥१०॥

मोरमुकट की इति—सखी नायक को अद्भुत रूप सुनाय कैं नायिका कों मिलायो चाहति है। मोर को जो है मुकुट ताकी जो है चन्द्रिका चँदवा, तासों यों या तरह सों राजत हैं सोभत हैं नँदनन्दन, तहाँ सम्भावना करै है कि मानौ शशिशेषर जो हैं महादेव, ससि नाम चन्द्र सो है सेखर कहिये मस्तक विषें जाके तिनकी अकस सों अकस कहिये ईर्षा, सहि नहीं सकै हैं। जो भी शिव सों ईर्षा नहीं तो भी मानि लीनी। ससिसेखर पद सों यह अर्थ निकस्यो। शिवजी ने चन्द्रमा धार्यो है, तो मैं आपने मस्तक कों शतचन्द्र करों, या ईर्षा सों सेखर सतचन्द किये कोई कहै है शिव ने काम जरायो है, श्रीकृष्ण ने उपजायो यह ईर्षा। यह तो ब्रजलीला है तब काम की उत्पत्ति नहीं। नोचेत् कही कई वार लीला प्रगट होति है, तब काम उपजाइवे की ईर्षा क्यों कही, वानासुर को युद्ध की ईर्षा क्यों न कही, औ जो ईर्षा होय तो उत्प्रेक्षा साँच में नहीं होय। हेतु, अकस मोरचन्द्रिका में ससि की उत्प्रेक्षा। असिद्धास्पदहेतूत्प्रेक्षालङ्कार॥१०॥

नाचि अचानकही उठे बिन पावस बन मोर ।
जानति हौं नंदित करी यह दिस नंदकिसोर ॥११॥

नाचि इति—लच्छिता नायिका सौं भूत सुरत जानिकैं सखी कहति है। घनस्याम रूप श्रीकृष्ण कों देखि कैं, ता दिन पावस वरषा ऋतु बिना बन में मोर अचानक नाचि उठे, मोर वर्षा ऋतु में नाचतु हैं, याही लच्छन सों मैं जानति हौं, कि या दिसा विषें नन्दकिसोर तोहि नन्दित करी राजी करी । किंवा हम तोहि नायक कों बुलाइवे कौं पठाई थी, नन्दकिसोर साथ तूं या दिसा कौं नन्दित करी, तर्थात् यह हमें बेराजी करी। तहाँ अन्यसम्भोग-दुःखिता हुई । किंवा, उत्का नायिका सों सखी को बचन कि श्रीकृष्ण कों तूं आयौ जान। किंवा, विरहव्याकुल नायिका कौं धैर्य्य देति सखी को बचन। अनुमानालङ्कार—"हेतु पाय निश्चय करै काहू को अनुमान"। इहाँ मोर नाचिबो हेतु तासों श्रीकृष्ण को आइबो जान्यौ ।

अथ लच्छितालच्छन—सभाप्रकास।

"प्रीति आदि प्रिय की भई लखै सखी जब ताहि।
लच्छन तें वह लच्छिता कविगन कहत सराहि। १ ॥
पिय जो तिय सों रति करै ताहि देखि अनखाय।
अन्यभोगदुखिता कहैं हरि कवि ताहि बनाय" ॥ २ ॥

'प्रीतम कौंने कारने आये नहिं सङ्केत। चिन्ता जो मनमें करै उत्का सो यह हेत'

प्रलय करन बरषन लगे जुरि जलधर इक साथ ।
सुरपतिगर्व हर्‌यौ हरषि गिरिधर गिरि धरि हाथ॥१२॥

प्रलय इति—बीर पति नायिका कौं इष्ट है। सखी नायक

को बीर गुन सराहति है, प्रलय कहिये नास । किंवा अंग चेष्टा जाती रहै, प्रलय करिबे कौं बरिसिबे लगे, प्रलयकाल मेह औ सदा बरिसे हैं सो मेह जुरिकैं कहिये मिलिकैं, एक स. ही बरिसन लगे। प्रलय बिना हम नहीं बरिसैंगे यह अपेक्षा नहीं राखी, तब गिरधर श्रीकृष्णजी ने हरषि कैं राजी ह्वैकैं हरष को स्थाई है यासौं बीरत्व आयौ, गिरि जो गोवर्द्धन ताकौं हा पर धरि कैं, सुरपति इन्द्र के गर्व कौं हर्यौ । इहाँ काव्यलि अलङ्कार है। "काव्यलिंग जहँ युक्ति सौं अर्थ समर्थन होय" ह पैं गिरि धरि यातें सुरपति को गर्वहरनो समर्थित भयो ॥१२॥

डिगत पानि डिगुलात गिरि लखि सब ब्रज बेहाल। कंप किशोरी दरस तें खरे लजाने लाल ॥ १३॥

डिगत इति—सखी सौं सखी वचन । पानि जो हाथ सो डिगै है, तासौं गिरि भी डिगै है काँपै है, लखि, सब ब्रज बेहाल कहिये व्याकुल भयो, लोगन के देखत यदि जोर के कार्य में बल हानि होय तो पुरुष कौं लाज होय । पानि डिगें तें लाज भई फेरि लोगनि जान्यो कि किसोरी के दरस तें कम्प है, तब लाल खरे लजाने। 'कम्प किसोरी दरसि कैं' यों भी पाठ है, किसोरी कौं भी कम्पा भई सो देखिकैं लाल लजाने, इहाँ कृष्ण कौं शृङ्गार रस भयो। लाज सञ्चारी, कम्पा सात्विक, ब्रजवासिनि कौं भयानक रस । हेतु अलङ्कार—"हेतु अलङ्कृति होत जब कारन कारज संग"। ब्रजविहाल अरु कंपा कारन, लाज कार्य। काव्यलिङ्ग भी संभवै है॥ १३ ॥

लोपे कोपे इंद्र लौं रोपे प्रलय अकाल ।
गिरिधारी राखे सबैं गो गोपी गोपाल ॥ १४ ॥

लोपे इति—उद्धव सों गोपी सब श्रीकृष्ण को गुन कथन करैं हैं। लौं को अर्थ इहाँ पर्यन्त, इन्द्र लों इन्द्र पर्यन्त जेते कोपे ब्रज पर कोप किये, मेघ पवन बिजुरी औ तृनावर्त आदि, तिनैं सबैं लोपे, कोई कों भजाये कोई कों मारे, जिनने अकाल असमय मैं प्रलयकाल रोपे प्रलय करिवे लगे, गिरिधारी ने राखे सबैं सबकों राखे, गो गोपी गोपाल, इनकी रच्छा करी। कोई ऊपरी ब्रज में आई है तासों कोई गोपी कहै, तो सबै कहिये है, सबै सखि, सबय सखी जानिये, इहाँ परिकराङ्कुर औ वृत्ति अनुप्रास। "साभिप्राय बिसेष्य जहँ परिकर अंकुर नाम"। गिरिधारी यह नाम साभिप्राय है, कछु आशय लिये है, पहार धारन करि कैं रच्छा करी। "आवृत्ति बर्न अनेक की सुहै वृत्ति अनुप्रास" फेरि बर्न कौं पढ़नो सो आवृत्ति पकार लकार आदि जानिए ॥ १४ ॥

लाज गहौ बेकाज कत घेरि रहे घर जांहि ।
गोरस चाहत फिरत हौ गोरस चाहत नांहि ॥ १५ ॥

लाज इति—दानलीला में गोपी को वचन नायक सौं। हम तो जगात दे चुकीं फेरि हमसों जगात मांगत हो तुमें लाज नहीं आवै, यातें लाज गहो बेकाज कत क्यों घेरि रहे? अब हम घर जात हैं। गोरस नेत्र को रस देखनो सो चाहत फिरत हो, गोरस कों नहीं चाहत हौ। किंवा, स्वयंदूतिका नायक सौं कहति है। लाज गहो तुम स्त्री के मन की बात नहीं जानत हौ यातें

अनभिज्ञता की लाज गही, फेरि कछू प्रगट करि कहै है, वेकाज कत घेरि रहे; जो कछू तुमैं कर्त्तव्य होय सो करी, अर्थात् हमैं वन में ले चलौ। या ठौर हमैं रोको हौ कोई देखै तो घर जाहि, घर जातो रहैगो, घर हमसो छूटि है. तुम गोरस दूध दही चाहते फिरत हो, गोरस इन्द्रियनि को रस नहीं चाहत हौ, जो इन्द्रियन के रस चाहत हो, तो मिलौ यह ध्वनि, जामैं ध्वनि होय सो उत्तम काव्य। इहाँ जमक अलंकार—"जमक शब्द को फिरि श्रवन अर्थ दूसरो जानि"। गोरम गोरस। पर्य्यायोक्ति अलंकार है।

"पर्जायोक्ति प्रकार है कछु रचना सौं बात" ॥ १५ ॥

मकराकृति गोपाल के कुण्डल सोहत कान।
धर्‌यो समर हिय गढ़ मनौं ड्योढ़ी लसत निसान।१६।

मकराकृति इति—नायक के पक्ष की सखी नायिका कौं आश्चर्य्य सोभा सुनाय कैं मिलायो चाहति है। मकर जो ग्राह, ताकी है आकृति स्वरूप ताके ऐसे जे कुण्डल, सो गोपाल के कान सौं सोहत है, सोभा पावत है। किंवा कान में सोहत है, तर्क करै है, समर जो है काम सो हिय जो है मन सो है गढ़, तामैं पैठ्यौ है। श्रवन द्वारैं तेरो रूप गुन सुने तें मानौ ड्यौढ़ी पैं यह निसान लसत है। काम मकरध्वज है. कुण्डल वस्तु में निसान की सम्भावना। उक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ॥ १६ ॥

गोधन तू हरष्यो हिये घरीक लेहि पुजाय।
समुझि परैगी सीस पर परत पसुन के पाय॥१७॥

गोधन इति—कोई दुष्ट पुरुष कौं राजा को अधिकार मिल्यो

है। ताकों सुनाय गोधन सों कोई कहत है॥ हे गोधन तू हिय मे मन मे हरख्यो। घरी एक तूं पुजाय लेहि॰ आदर कराय लेहि॥ तब तुमें समझि परैगी जब तेरे सीस पर पसुनि के पाय परैंगे। जब राजा तुम पैं बेराजो होयगो, तब जानहुगे॥ किम्वा कोई पापिष्ट कों सुनावे है। पाप सों पिपीलिका को, कृमि को जन्म पावोगे तब पसुनि के पांव परत कैं जानोगे॥ गूढ़ोक्तिअलङ्कार है, याकों अन्योक्ति कहत हैं॥

भाषाभूषन 'गूढोक्ति मिस और के कीजे पर उपदेश'।

किम्वा, नायक कोई स्त्री सों कहत है वह गुरुजन में बेठी है। धन कहिए स्त्री, सीत को सतायो धनरासि म परत है॥ इहां श्लेष मे स्त्री, हे धन गो कहिये नेत्र, किम्वा इन्द्रिय मात्र, हमें देखि हिय में हरख्यो। घरी एक पुजाय लेहि, हमसों आदर कराय लेहि। हमसों मिलो यह अर्थ॥ नायिका वचन। समुझि परैगी याको अर्थ, गो कहिये वचन जो समुझि परै॥ दोय अर्थ की बात है। यह कोई जानैं तो सीस पर परत॥ पराया के सीस परैं, सीस काटे जाहिं। हे पसु, जो जोई बड़े छोटे कूं न देखें सो पसुन के पायन का कहिये राह ताकों पाय कैं॥ यह श्लेष के राह सों कहत है॥ १७॥

मिलि परछाहीं जोन्ह सों रहे दुहुनि के गात ।
हरि राधा इक संगहीं चले गली में जात ॥१८॥

मिलि इति—सखी सों सखी कहति है। परछांहीं सों, जोन्ह चांदनी सौं, मिलि कैं दुहुंन के गात रहे हैं॥ नायक स्याम है सो

नायिका की परछाहीं सों मिल्यौ है। नायिका जोन्ह सों मिली॥ हरि औ राधा एकही संग गली में चले जात हैं। इहां संका, अवहित्था आपु को छपावनों॥ धृति संचारी, परकीया नायिका, संजोग सिंगार। मीलित अलङ्कार, ॥

मीलित सो सादृस्य तें भेद जबै न लखाय।

किम्वा, मान करावै मान छोड़ावै यह सखी को कर्म। सखी वचन नायिका सों॥ हे राधा, हरि एक नायिका के संगही गली में चले जात हैं। और वही अर्थ॥१८॥

गोपिन सँग निस सरद की रमत रसिक रसरास।
लहाछेह अति गतिनि की सबनि लखे सब पास॥

गोपिन इति—सखी सों सखी वचन। गोपिन के संग में, निसा राति सरद ऋतु की है॥ रमत को अर्थ क्रीड़ा करत है। रसिक जो श्रीकृष्ण, रस सों नाम अनुराग सों, रास गोपिनि को नृत्य, नाचन में गतिनि की जो अति लहाछेह है चंचलता हैं। नाच में लहाछेह उड़प तिरप इत्यादि गति चंचलगति, सो लहाछेह॥ तासों सब नायिकनि में सब नायिकनि के पास लखे हैं दिखे हैं। चातुर्य्य प्रगट भयो, ईश्वरता छपाई, तासों रस पुष्ट भयो॥ आश्चर्य्य संचारी दच्छिन नायक। बिसेषालङ्का॥१९॥

एक वस्तु को कीजिए बरनन "ठौर अनेक"।

मोरचंद्रिका स्याम सिर चढ़ि कत करत गुमान।
लखिवी पायनि पर लुठत सुनियत राधामान॥२०॥

मोरचन्द्रिका इति—सपत्नी ने नायक को सिंगार बनायो है।

सपत्नी के सुनत राधिकाजी के पच्छ की सखी मोरचन्द्रिका को मिस करिये कहति है ॥ हे मोरचन्द्रिका तू स्याम के सिर पें चढ़ि कैं कितनौं गुमान करति है। जबही देखौंगी. तोकों राधिकाजी के पायनि पर लोटत कैं॥ सुनियत है आजु राधिकाजी मान कियो है। नायक को शिंगार बनाय कैं तूं गुमान करति है, तेरो बनायो शिंगार श्रीराधिकाजी के पावनि पर लोटैगो। गूढ़ोक्तिअलङ्कार, ॥ २० ॥

"गूढोकतिमिस और के कीजे पर उपदेश"

सोहत ओढे पीतपट स्याम सलोंने गात।
मनों नीलमनि सैल पर आतप पर्‍यो प्रभात॥२१॥

सोहत इति—सखी नायक की अद्भुत सोभा सुनाय कैं नायिका कौं मिलायो चाहति है। सलोने गात, लावन्य सहित हैं अंग जाके. ऐसो जो स्याम कृष्ण. सो पीतपट ओढ़े सोहत हैं॥ किम्बा स्याम के सलोनेगात पर ओढ़े सों पीतपट सोहत है। नीलमनि को जो है सैल पहार, तापर मानौं परभात को आतप कहियें धूप परी है॥ इहां उक्तास्पदावस्तूत्प्रेक्षा। गात पट वस्तु है तापैं नीलमनि सैल की औ आतप की संभावना॥ २१॥

किती न गोकुल कुलवधू काहि न किन सिष दीन।
कौनै तजी न कुलगली ह्वै मुरलीसुरलीन॥२२॥

किती न इति—कोई नायिका कौं सिखावै है। तूं नायक की ओर मति देखे यह कुलबधू को धर्म नहीं॥ तहां अनुराग भरी नायिका को वचन। किती न गोकुल कुलबधू, कितनी नहीं गोकुल

२२८५

में कुलवधू हैं बहुत हैं यह अर्थ। कौंन कौं कौन ने सीख अर्थात् उपदेस नहीं दियो है ॥ दियोई है यह अर्थ। कौने तजी, कौन ने नहीं छोड़ी है कुलगली आपनो कुलपथ॥ कुल पथ छोड़्योई है यह अर्थ ॥ मुरली के सुर सों लीन होय कैं, नायक में आसक्त होय कैं। किम्वा मुरली के सुर में लीन होय कें, अति चित्त लगाय कैं कण्ठ को ध्वनि विसेख सों काकु तासों यामें प्रश्नही सों उत्तर निकस्यौ॥ चित्रालङ्कार, चित्रप्रश्नोत्तर दुहूं एकवचन में सोय। विसेषोक्ति भी जानिए, "विसेषोक्ति जो हेतु सों कारज उपजत नाहिं" ॥ सीख हेतु, तासों कुलगली को राखिवो नहीं भयो॥२२॥

अधर धरत हरिके परत ओठ डीठ पट जोति ।
हरित बांस की बांसुरी इंद्रधनुष सी होति॥२३॥

अधर इति—सखी आश्चर्य्यसोभा सुनाय कैं मिलायो चाहति है। जब बांसुरी कों अधर विषें ओठ विषें धरत हैं, तब हरि के ओठ की, डीठि की, पट की, जोति परति है तब हरित बांस की जो है बांसुरी सो इन्द्र के धनुष समान होति है। इन्द्र को धनुष जो मेघ में उगै है तामें भी अनेक रंग हैं॥ किम्वा नैन में स्वेतता है धनुष में नहीं, ऐसो अर्थ। ओठ की जोति, पट की जोति परति है सो तूं डीठ देख ऐसें जानिए॥ किम्वा ता समै छकनि भरे नैन हैं काह्न के रूप सों, तब नैन लाल हैं। तब लाल वरनत है कौन कवि ऐसो छके नैननि के रूपक है लाल लाल कोयनि में केते घर खोये हैं। यहां तद्गुन अलङ्कार है, ।

'तद्गुन तजि गुन आपनो संगति को गुन लेइ'।

जो कहिए औरि गुन यामें आए हरित गुन को त्याग नहीं

भयो तो उपमा भी है, धनुष उपमान, बांसुरी उपमेय, सी वाचक साधारन धर्म्म को लोप है ॥ २३ ॥

छुटी न सिसुता की झलक झलक्यौ जोबन अंग ।
दीपति देह दुहूनि मिलि दिपत ताफता रंग ॥२४॥

छुटी न इति—नायक सों सखीवचन। सिसुता लरिकाई की झलक नहीं छुटी है, जौबन अंग मे झलक्यौ है, आयो है नहीं। दोउ वयःक्रम सों मिलि कैं देह दीपति सोभति है। जैसें दोइ रंग सों मिलि कैं ताफता रेसमी कपरा होत है कोई वाकों देवांग कहैं हैं सो जैसें दीपै है। इहाँ वाचक लुप्त उपमालङ्कार है, देह उपमेय, ताफता उपमान, दीपिवो साधारन धर्म्म, जैसो तैसो इत्यादि वाचक सो नहीं है ॥ २४ ॥

तिय तिथि तरनि किसोरवय पुन्याकाल सम दौंन ।
काहू पुन्यनि पाइयत वयससन्धि संक्रौंन ॥ २५ ॥

तिय तिथि इति—वयस सन्धि वर्नन करि सखी नायक कों मिलायो चाहति है। बारह महीना के बारह सूर्य्य हैं, माघ में अरुन तपै है, फाल्गुन में सूर्य तपै है, चैत्र में वेदांग तपै है। ऐसें आदित्यहृदय में लिख्यो है। सूर्य्यमण्डल में कोई स्थान है तहाँ मासपूर्ण भयें पर कोई सूर्ज उठै है कोई सूर्य बैठै है याको नाम संक्रमन, सो अति सूछम है पुन्यकाल है। तिथि में संक्रान्ति होति है, तिय जो नायिका सो तिथि है, किसोर जो वयःक्रम है सो तरनि सूर्य है। सैसव जो सूर्ज सो बैठै है किसोर सूर्य को आवनो है, यह अर्थ न करै तो आगे वयस सन्धि पद

नहीं लगै, होय वय:क्रम होय तब सन्धि कहिये, इहां अन्तराल। 'पुन्यकाल सम दोन' दोन कहिए दोऊ एक अवस्था को जानो, दूसरी अवस्था को आवनो सो सूर्य को जो पुन्यकाल ताको समान है, अति सूक्ष्म है औ प्रशस्त है, तासौं सम कह्यौ, काहू पुन्यनि, कोई बड़ो पुन्य सों पाइयत है, वयस की सन्धि औ संक्रान्ति। पुन्य पुन्य की पुनरुक्ति मिटाइवे कौं ऐसो अर्थ करिये। हे पुन्य हे सुन्दर, 'काल सम दोन' याको अर्थ संक्रमन को काल औ वय: सन्धि को काल दोन कहिये दोऊ सम है, औरि अर्थ वैसिही जानिए। किंवा हे पुन्य यह जो काल है वय:सन्धि को ताकौं सम दोन, विदा यौ मति, जाने यौ मति यह अर्थ। हैमी अनेकार्थ में पुन्य सुन्दर को नाम, सुकृत को नाम, पावन को नाम है इहां रूपक अलङ्कार है।

"उपमानरु उपमेय में भेद परै न लखाय।
तासों रूपक कहत हैं सकल सुकवि समुदाय"॥

तिय सो तिथि है. तिय उपमेय, तिथि उपमान, ताको भेद नहीं जान्यौ जात है। पुन्य पुन्य में आवृत्ति दीपक पद की आवृत्ति है, अर्थ भिन्न है ॥ २५ ॥

ललन अलौकिक लरिकई लखि लखि सखी सिहाति।
आज कालि मैं देखियत उर उकसौंहीं भाति॥२६॥

ललन इति—सखी वचन। हे ललन वाकी जो है अलौकिक, अलौकिक लोक में नहीं ऐसी जो है लरिकाई ताकौं देखि देखि कैं, सखी सिहाति है, आजु काल में देखै है। कि उर जो छाती

सो उकसौंही भाँति है उकसिबे की तरह है, अथवा सोभा पावै है आजकाल में लोकोक्ति।

"लोकोकति कछु वचन जब लीने लोकप्रवाद" ॥ २६ ॥

भावक उभरौहौं भयौ कछुक पर्‌यौ भरुआय।
सीपहरा के मिस हियो निसदिन देखत जाय ॥२७॥

भावक इति—नायक सों सखी वचन। ज्ञातयौवना नायिका, भावक उभरौहौं भयौ, भावक एक भाव सों, एक तरह सों, सब तरह सों नहीं। आगें हियो देखत पद है तासौं कुच जानिये। उभार नहीं भयो है, उभार होतें सदृश भयो, ताहि कुच को कछु एक भरु कहिये भार सो आय पर्‌यौ है, तासौं सीपि के हार को मिस करिकैं छल करिकैं, तात्पर्य्य यह कि मैं हार देखौं हौं साँचे को है कै सीपि के मोती को है। हियौ छाती राति दिन मोती देखन के मिस वीतै है। पर्य्यायोक्ति अलङ्कार—

"छल करि साधै इष्ट जहँ जो कछु चित्त सुहात" ॥ २७ ॥

इक भीजे चहले परे बूड़े बहे हजार।
कितो न औगुन जग करत नै वै चढ़ती बार ॥२८॥

इक भीजे इति—कितनों औगुन जगत में नहीं करत है नय कहिये नदी औ वय कहिये वयक्रम ए दोऊ चढ़ती वार चढ़िवे के समय में, नदी जब चढ़े है तब एक भीजै है एक चहला में पड़ै है ऐसे जानिये। वयःक्रम जब चढ़े है वहां लगावनों, चारि प्रकार के दरसन हैं, श्रवन दर्शन, स्वप्न दर्शन, चित्रदर्शन, प्रत्यक्षदर्शन। जिनने नायिका को रूप सुन्यो सो भीजे, जो भीजै

है ताहि कम्पा होति है, इतै कम्पा सात्विक भयो, मिलन विना दुखही है, किम्वा खेद सात्विक भयो तासों भीजे, जिन स्वप्न में देखी सो चहलैं परे, चहला कीच तामें कोई जैसे परे कि निकरि नहीं सकै, स्तम्भ सात्विक भयो ।मिलन विना दुखही है, जिन चित्र में देखी सो बूड़े, चित्र देखतही जड़ से ह्वै रहे, प्रलय सात्विक, जिन साक्षात् देखी ते वाकों देखिवे को फिरे, जव नहीं देखैं हैं तव आँसू की धारा परे है, किम्वा एक कहिये प्रधान कौन है, नैन, तेतो भीजि रहे अश्रु सों, कज्जल में मन गड़ि रह्यौ, हजार मनोरथ बूड़े वहे सिद्ध नहीं भये, किम्वा मेघ वरसत के कितने नदी के पार अभिसार कै नायिका पास चले, एक भीजे औ चहला में पंक मे परे, कितने बूड़े, कितने वहे । हजार को अर्थ, है को अर्थ प्रसिद्ध, सव जानत हैं, जार नाम परपति । किम्वा है कि ठौर मेह है, वहे है जार, जैसे उनदोही अँखिआँ क कै, छन्द के लिये, कै कै क़ौं क कै पर्‌यौ । जगत में कितना औगुन को नहीं करत है, नय नवीन जो वय ताको चढ़ती और । किम्वा गुरु शिष्य सों कहत है, हे सिष्य चढ़ती नय चढ़ती वय जगत में कितना औगुन नही करति है, तू वारि तू रोकि औगुन आपने मन की मति करिवे दे. नै औ वय रूपक, नै को चढ़ती वार वै को चढ़ती वार एक क्रिया लगी यातें दीपक अलङ्कार ॥ २८ ॥

अपने तन के जानि कै जोवन नृपति प्रवीन ।
स्तन मन नैन नितम्व कौं वड़ौ इजाफा कीन॥२९॥

जोवन वर्णन, अपने इति—सखी नायक सों स्तुति करति है,

अपने तन कै, आपने पच्छ कै जान्यो, जोबन जो प्रवीन राजा है आपने शत्रु मित्र को जानत है। स्तन नाम कुच ताको, मन को, नैन को, नितम्ब को, बड़ो इजाफा अधिकाई कीनी, कुच को पहार करि बरनत हैं, नैन को कान ताईं बरनत हैं नितम्ब को बड़ो बर्नत हैं। मन तो बड़ोई है, इहां हेतूत्प्रेक्षालङ्कार, कै को अर्थ किधौं आपने अंग कै जानि हेतु, इजाफा को तर्क॥२९॥

देह दुलहिया की बढ़ै ज्यौं ज्यौं जोबन जोति ।
त्यौं त्यौं लखि सौतें सबैं बदन मलिन दुति होति॥३०॥

देह इति—दुलहिआ नवबधू ताकी देह में ज्यौं ज्यौं जोबन की जोति, किम्वा जोबन औ जोति बढ़ति है। त्यौं त्यौं पूरब की भाषा में, तैसे तैसे हे सखि तू लखि देख, सौति सब बदन विषे मलिन दुति होति हैं। सौतिन के मुख मैले होत हैं यह अर्थ, इहां उल्लासालङ्कार—'गुन औगुन जब एक तें और धरे उल्लास' गुन ते गुन, दोष तें दोष, गुन तें दोष, दोष तें गुन, इहां दुलही के गुन तें सौतिनि में दोष॥ ३०॥

नवनागरि तन मुलक लहि जोबन आमिल जोर ।
घटि बढ़ि ते बढ़ि घटि रकम करी और की और॥३१॥

नव नागर इति—सखी की उक्ति, नई जो है नागरि प्रवीन नायिका, ताको जो है तन सरीर, सो है मुलक देस, ताकों लहि कहिये पाय कै, जोबन सोई है काम को पठायो आमिल नाम हाकिम सो जोर, जोर को अर्थ जुलमी पापी जानिये। जे रकम कहिये वस्तु बढ़ी थी ते कहिये ताको घटि करी, कटि बढ़ी थी ताकों

घटिकरी।जो घटि छोटी थी ताको वढ़ाई, नितम्ब अरु आँखि को बढ़ाई, करी शब्द दोय ओर में लगाइये देहलीदीपकन्याय करि, फेरि और की और करी, जो कछू बालकपन में स्वरूपक्रिया थी सो अब नहीं, औरही सी भासति है। सैसव को मारि डार्यो यह पापीपना, रूपकालङ्कार—

'उपमानरु उपमेय में भेद न परै लखाय ।
तासों रूपक कहत हैं सकल सुकवि समुदाय' ॥ ३१ ॥

लहलहाति तन तरुनई लचि लगि लौं लफि जाय।
लगै लांक लोयन भरी लोयन लेति लगाय ॥३२॥

लहलहाति इति—नायक सों सखी वचन। तन विषैं तरुनई जवानी लहलहाति है लहलह करै है। लांक लोइन भरी याको अर्थ, लांक कटि, लोयन लावन्य भरी है सो, फेरि कैसी है 'लचि लगि लों लफि जाय' चलत कै लचि कहिये लचकि कैं, लगि लों बेत की वाँस की छरी ताकी तरहँ लफि जाति है, पसरि जाति है यह अर्थ। लोयन नेत्र वासों लगैं तो लोयन लेति लगाय, तौ लोयन कौं लगाय लेति, वसि करि लेति है। पूर्णोपमालङ्कार—

उपमेयरु उपमान जहँ बाचक धर्म्म सु चारि।
पूरन उपमा होय तहँ लुप्तोपमा विचारि ॥

लगि उपमान, लांक उपमेय, लौं बाचक, लचि लफि साधारन धर्म,॥ ३२ ॥

सहज सचिक्कन स्याम रुचि सुचि सुगन्ध सुकुमार।
गनत न मन पथ अपथ लखि बिथरे सुथरे बार ॥३३॥

सहज इति—सहजें स्वभाव तें बिना फुलैल लगाएं चिक्कन हैं स्यामकान्ति हैं। सुचि संस्कार किए सों पवित्र हैं औ सुकुमार हैं; ऐसे सुथरे बार कों बिथुरे बिखरे देखि कैं, मन जाय चढ़े है, पथ अपथ नहीं देखै है, चिकने पर पाव नहीं ठहरै, बार अपथ है चढ़िबे कौं बिरला पथ है, सीढ़ी की आकृति है। नायक नायिका के केस कों स्मरन करै है। स्मृति अलङ्कार—

"सुमिरन भ्रम संदेह यह लच्छन नाम प्रकास" ॥ ३३ ॥

वेई कर व्यौरनि वहे व्यौरो क्यों न बिचार ।
जिनही उरझ्यौ मो हियो तिनहीं सुरझे वार ॥३४॥

वेई इति—सखी नायिका के केस सँवारै है । तब नायक पीछे सों आय सखी को उठाय करि आपु केस सँवारै है । तब नायिका नायक के कर को परस पिछानि कैं कहति है। आगें भी हमारे केस सँवारे थे वेही कर वेही हाथ हैं। व्यौरनि वहै, वहै सँवारनो है। रे मन तूं व्यौरो भेद क्यौं न बिचारै, कि यह भेद है। जिनहीं सों हमारो हियो मन अरुझायो है तिनही सों हमारे बार सुरझे हैं। विभावना अलङ्कार—"कारज होय विरुद्ध तें यह विभावना जानि"। अरुझाइबे को कारन नायक, तिन सों बार सुरझे ॥ ३४ ॥

कच समेटि भुज कर उलटि खरी सीसपट डारि ।
काको मन बाँधै न यह जूरो बाँधनिहारि ॥ ३५ ॥

कच इति—नायक जूरा बाँधत देखि कैं स्मरन करै है। केस कों एकत्र करिकैं भुजा औ हाथ याकौं उलटि करि सीस को

पट सो खरी कहिए काँधे परि डारि कैं कौन को मन कों नहीं वाँधि सकै, यह कहिए या तरह सों जूरा वाँधनिहारी जितनी जगत में नायिका हैं। स्वभावोक्ति अलङ्कार, जाको जैसो रूप गुन होय तैसो कहै ॥ ३५ ॥

छुटैं छुटावैं जगत तैं सटकारे सुकुमार ।
मन बाँधत वेनी बँधे नील छबीले वार ॥ ३६ ॥

छुटे इति—नायक स्मरन करे है। नील छबीले वार जब छुटैं हैं तब देखतही जगत तें छुटावत हैं, जगत को व्यवहार नहीं करिबे देत हैं, कैसे हैं सटकारे हैं, सुकुमार हैं। हमारे मन को वांधत कै बेनी चोटी बँधे है। किंवा नायिका बाँधे है, गुरु लघु कियो है, बेनी में श्लेष काढ़े चमत्कार नहीं करे। चतुर्थ विभावना—"जबैं अकारन वस्तु तें कारज परगट होइ" मन बांधिबौ बेनी बांधिबे को कारन नहीं ॥ ३६ ॥

कुटिल अलक छुटि परत मुख बढ़िगौ इतौ उदौत ।
वङ्क विकारी देत ज्यौं दाँम रुपैआ होत ॥ ३७॥

कुटिल इति—सखी की उक्ति नायक सों। कुटिल जो अलक है सो मुख पर छूटि परत कै इतनो उदोत प्रकास बढ़ि गयो। वङ्क कहिये टेढ़ी जो विकारी ताके देतही जैसे दाम को आँक रुपैआ होत है। पूर्णोपमालङ्कार—"उपमेयरु उपमान जहँ वाचक धरम सुचारि। पूरन उपमा होय जहँ लुप्तोपमा विचारि" मुख अलक उपमेय, दाम विकारी उपमान, ज्यों वाचक, उदोत माधारन धर्म्म । ३७ ॥

ताहि देखि मन तीरथनि बिकटनि जाय बलाय ।
जा मृगनैनी के सदा वेनी परसत पाय ॥ ३८ ॥

बेनी वर्णन ॥ ताहि देखि इति—सिष्य काहू पर आसक्त है मानस विचार करै है, गुरु तीर्थ करिवे कों पठावै है । जाहि मृगनैनी के पाव कों सदा वेनी पर्सै है, अर्थात् पाय पर्यन्त दीर्घ केस हैं। यामैं रूप की वडाई, श्लेष मैं त्रिवेनी परसै है छूवै है । यामैं माहात्म्य; ताहि देखि कै, हे मन कठिन तीर्थनि सैं बलाय जाय। काव्यलिङ्ग अलङ्कार। तीर्थ नाहीं जानौ, याकों समर्थित कियो। किंवा, ता राधिका जी को हि कहिये हृदय मैं देखि कैं रे मन, और वैसेंही; इहाँ वेनी त्रिवेनी सै लीजिए ॥ ३८ ॥

नीको लसत ललाट पर टीको जटित जड़ाय ।
छविहिं बढ़ावत रवि मनौं ससिमंडल मैं आय ॥३९॥

टीको वर्नन ॥ नीको इति—सखी नायिका की स्तुति करै है नायक सौं । जराऊ सौं जग्यो जो है सोने को टीको टीकौ, सो ललाट पैं नीको सोहत है। टीका भयौ रवि, ससिमण्डल है मुख, तामैं आय कै मानो छवि कों वढ़ावै है, आकाश मैं घटावै है । यहाँ उक्तास्पदवस्तूत्प्रेच्छालङ्कार । टीको वस्तु उक्त है, तामैं रवि की सम्भावना ॥ ३९ ॥

सबै सुहाएई लगैं बसत सोहाये ठाम ।
गोरेमुख वेंदी लसै अरुन पीत सित स्याम ॥ ४० ॥

वेंदी वर्नन ॥ सबै इति—रोरी, केसरि, चन्दन, कस्तूरी की बेंदी की वर्नन सौं नायिका की स्तुति। सबै सब, यहाँ कविवचन

है किंवा, नायक सखा सों कहै है। हे सवय हे सखा, सोहावनी ठौर में वसै सों सोहावनोई लगै। अरुन पीत सित कहिये सपेद औ स्याम जो है वेंदी सो गोरे मुख सों लसत है। किंवा, वेंदी तें मुख सोहत है। इहाँ दृष्टान्तअलङ्कार—"भावविम्ब प्रतिविम्ब को जहँ दृष्टान्त सुजान"। सोहावनी ठौर में वसै सो सोहावनो लगै, ज्यों गोरे मुख वेंदी ॥ ४० ॥

कहत सबै वेंदी दिये आंक दसगुनों होत।
तिय लिलार वेंदी दियें अगनित बढ़त उदोत ॥४१॥

कहत इति—नायक नायिका सों कहत है। सब कहत है, वेंदी शून्य दिये सों आंक दसगुनो बढ़त है। हे तिय तेरे ललाट में वेंदी दिये सों अगनित उदोत कहिये प्रकास बढ़त है। यहां व्यतिरेकालङ्कार—

"व्यतिरेक जु उपमान तें उपमें अधिको देख"।

अंक दसगुनो तें भाल में अगनित उदोत। किंवा नायक के ललाट में वेंदी देखि कैं खण्डिता की उक्ति। तिय के ललाट की वेंदी दिये सों पुरुष कों अगनित उदोत बढ़त है। "धीरा बोलै वक्रविधि" आधे दोहा को वही अर्थ ॥ ४१ ॥

भाल लाल वेंदी छये छुटे वार छवि देत।
गह्यो राहु अति आह करि मनु ससि सूर समेत ॥४२॥

भाल इति—सखी नायक कों मिलायो चाहति है, रूप की प्रशंसा करिकैं। भाल विषें लाल जो है वेंदी, किंवा है लाल भाल विषें जो है वेंदी कुंकुम केसरि की, ताकों छाय कैं छुये यह पाठ

है तो छुट्ट के । छूटे जे हैं बार ते छवि देत हैं, मुख की सोभा वढ़ावत है । तहाँ संभावना करै है, कैस राहु है, तातें अति आह करि अँटकल करिके सूर्य चन्द्रमा कों एकही ठौर पकरि ल्यौं, राहु ने अति आह करिकैं, मानो ससि समेत सूर्य कौं प कह्यो है। जा समय ग्रहन लगै है ता समै ससि सूर्य की सोभा नहीं रहै है। इहां कह्यो 'छुटे वार छवि देत' कैसे लगैं, यौं अर्थ करिए मानौं ससि सूर्य मिलिकैं अति आह करिकैं राहु कौं गह्यो है। शत्रु के पकरें सौं जयश्री चढ़ो है, याही तें कह्यो वार छवि देत है। उक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा, भाल में ससि की, वेंदी में रवि की वार में राहु की तर्कना ॥ ४२ ॥

पायल पाय लगी रहै लगे अमोलक लाल ।
भोड़लहू की भासिहै वेंदी भामिनि भाल ॥ ४३ ॥

पायल इति—औरि के छल सौं कोई कहत है। पायल जो चरनभूषन सो पाव में लगी रहति है, कैसी है जामें अमोलक जाको मोल नहीं, ऐसे लाल रत्न लगे हैं । भोडर अभ्रक ताहू की जो वेंदी टीकी ताकी भास कहिये सोभा भामिनि नायिका ताके भाल में है। उत्तम जो निर्धन होय तौभी उच्च आसन के जोग है । नीच धनिक है तो भी सेवकता के जोग है । इहाँ अप्रस्तुत प्रशंसा अलङ्कार है, याकों अन्योक्ति कहत हैं ।

"जहां डारि सिर औरि के कहै और की बात ।
तासों अन्योकति कहत जे कवि रस सरसात ॥"

किंवा प्रास्ताविक दोहा में नहीं कह्यो तासों और अर्थ भी जानिए। सखी अभिसार करावति है, तूं परमसुन्दरी है समय

रूप सिंगार काहे कों करति है। पायल तो तेरे पाय में लगीही रहति है, सदा पहरें रहति है, श्रौ संकेत भी दूरि नहीं है, लगे कहिए नजीकही, अमोलक लाल नायक है, अमोलक कहिये जाके गुन रूप कहिवे में नहीं आवति है। अब भी कहत हैं फलाना अमोलिक आदिमी है, भामिनि तेरे भाल में भोड़लह्ल की वेंदी भासि है सोभैगी, किंवा वेंदी सूं तूं सोभैगी ॥ ४३ ॥

भाल लाल वेंदी ललन आषत रहे विराजि ।
इंदुकला कुज में वसी मनो राहुभय भाजि ॥ ४४ ॥

भाल लाल इति—सखी नायिका की सोभा बखानि लै जानै चाहति है। हे ललन भाल विषे लाल जो है वेंदी तामें आषत कहिये अचत विराजि रहे हैं, मानो चावल नहीं है इन्दु की कला है, वेंदी सो कुज मंगल है तामें वसी है, राहु के डर सों भाजि कें, वेंदी आषत में सम्भावना, राहु को भय सो हेतु है। इहां हेतु उत्प्रेच्छा ॥ ४४ ॥

मिलि चंदन वेंदी रही गोरे मुख न लखाय ।
ज्यों ज्यों मदलाली चढ़े त्यों त्यों उघरति जाय ॥ ४५ ॥

मिलि चन्दन इति—नायिका को तारीफ करै है, मदपान समै। गोरे मुख में चन्दन की किंवा रक्त चन्दन की वेंदी मिलि रही थी, न लखाय थी, अब ज्यों २ मदपान किये सों लाली चढ़ति है त्यों २ उघरति जाति है, मद की लाली सों वाको रंग फीको परत है। इहां उन्मिलित अलंकार है—"उन्मीलित सादृश्य तें भेद फुरे तव मान" इहां मद की लाली तें जानी गई॥

तियमुख लखि हीराजरी वेंदी वढ़ै विनोद ।
सुत सनेह मानो लियो विधु पूरन बुध गोद ॥४६॥

तिय मुख इति—नायक वचन, हे तिय तूं आपनो मुख दर्पन में देखि, हीरासों जरी जो है वेंदी तासौं कैसो विनोद (इहां विनोद को अर्थ आनन्द लीजिये) आनन्द बढ़ै है। पूरन जो विधू चन्द्रमा है, ता ने सुत नाम पुत्र के स्नेह सों बुध कों गोद मे लियो है, जोति मे बुध को रंग हरित है, सो फल के साधन के लिये देखिवे मे सित नजरि आवै है। यह दोहा आक्षिप्त है, वस्तूत्प्रेक्षा अलंकार ॥ ४६ ॥

गढ़रचना वरुनी अलक चितवनि भौंह कमान ।
आद्य वँकाईही वढ़ै तरुनि तुरंगम तान ॥ ४७ ॥

भौंह वर्नन। गढ़ रचना इति—नायक के रूप सों नायिका कों अति आधीन देखि कैं सखी उत्कर्ष सिखावै है। हे सखि इतने वस्तु विषें आद्य जो है आदर सो वक्रता सों बढ़ै है। गढ़ की रचना औ वरुनी पक्ष्म अलक चितवनि, भौंह,औ कमान औ तरुनी औ तुरंगम कहिये घोरा तान गाइवे में, भौंह वर्नन केवल नहीं। दीपक अलंकार—

उपमानरुउपमेयसौं इकपदलगतसुहाय। दीपकतासोकहतहैं जो कवि मैं सरसाय।

इहां आद्य वँकाई पद सव सों लगत है ॥ ४७ ॥

नासा मोरि नचाय दृग करी कका की सौंह ।
कांटे सी,कसकति हिए वहै कटीली भौंह ॥ ४८ ॥

नासा मोरि इति—नायक की उक्ति सखी सों नायिका के

रकीया । नाक कौं मोरि कैं लोचन नचाय कैं काका की सौंह करी । काँटा की तरह कसकै है साले है, वहै को अर्थ हमारो मन जानै है, कटीली टेढ़ाई लिये जे हैं भौंहैं । इहां स्वभावोक्ति अलंकार है, औ उपमालंकार, दोऊ आपस में निरपेक्ष है यातैं संसृष्ट । "जहां रहै ऽलंकार वहु निरपेक्ष सुसंसृष्टि" । "स्वभावोक्ति यह जानिये वर्नन जाति सुभाव" भौंह उपमेय, काँटा उपमान, लौं यह वाचक, कसिकवो साधारन धर्म्म ॥ ४८ ॥

खोरि पनच भृकुटी धनुष बधिक समर तजि कानि ।
हनत तरुन मृग तिलक सर सुरक भाल भरि तानि॥४९॥

खोरि इति—नायक स्मरन करै है, तिरछा तिलक सो खोरि सो है पनच गुन भृकुटी सो धनुष, व्याध काम है । कानि कहिये मरिजादा ताकौं छोड़ि कै मारत है । तरुन पुरुष हमें सुख देत है, ताकी कानि नहीं करै है तरुन जो पुरुष सो है मृग खोरि के बीच में जो तिलक सो सर है, नाक पर को तिलक सो, सुरुक सोई भाल फल ताकौं भरि तानि, पूरो खैंचिये यहां सर्वाङ्ग रूपक—

"उपमानरु उपमेय सौं भेद [illegible] न लखाय ।
तासौं रूपक कहत हैं सकल सु कवि समुदाय" ॥ ४९ ॥

रस सिँगार मंजन किये कंजन भंजन दैन ।
अंजन रंजनहूं बिना खंजनगंजन नैन ॥ ५० ॥

नेत्र वर्णन ॥ रससिंगार इति—सखी नायिका की स्तुति करै है । किम्वा नायक स्मरन करै है । कमल की, खञ्जन की उपमा नेत्रनि को देत हैं, ताको तिरस्कार वर्णें है । कमल तो जल सों मञ्जन करै है, इन सिंगाररस सों मञ्जन किये हैं, किम्वा इन

सिंगाररस को मञ्जन किये हैं। सिंगार को व्यक्त किये है, मांजे सों वस्तु साफ होत है, सिंगार को प्रगट किये हैं यह अर्थ, यह दोय अर्थ सों कञ्जन के भञ्जन कहिये भंग देनवाले हैं, सो नहीं सम्भवे, लच्छना करि तिरस्कार जानिये, अञ्जन सों रँगे विना खञ्जन के गञ्जन करनवाले नैन हैं, सहजैं कजरारे हैं। अति चञ्चल हैं, सिंगार सो है रस जल यासों तो रूपक औ चतुर्थ प्रतीप—

"उपमे को उपमान जब समता लायक नाहि।

वृत्ति अनुप्रास—बहुत बार अच्छर कहै वहै वृत्ति सो जान" ॥ ५० ॥

खेलन सिखये अलि भलें चतुर अहेरी मार ।

काननचारी नैन मृग नागर नरनि सिकार ॥ ५१ ॥

खेलन इति—सखी की उक्ति नायिका सों परिहास करे है। हे अलि चतुर जो अहेरी सिकारी मार काम है, ताने काननचारी जे हैं नैन, ताकों मृग जे हैं नागरनर प्रवीननर ताकी सिकार खेलन को भले सिखाये हैं। काननचारी को अर्थ कान ताईं गये हैं, ऐसे बड़े हैं, औ काननचारी वनचारी, जैसे चीता स्याह गोस को सिकार सिखावे है, किम्वा यह आश्चर्य्य, कि काननचारी नैनमृग को नागर नरनि को सिकार ऐसे जानिये। नागर नरन यहां बहुवचन है तासों नायिका सामान्या होती है। तहां ऐसे जानिये, कि काननचारी नैन मृग ताकी नागर नर नाय, न सिकार अर्थात् सिकार नहीं है। तौभी सिकार सिखाये, जैसे एक ने सिखायो सुक सों कबूतर को सिकार, नैन सों मृग, यहां रूपक, कानन यहां श्लेष, मृग सों नर की सिकार अद्भुत, रससिंगार में॥

अर तें टरत न बरपरे दई मरुक मनु मैन ।
होड़ा होड़ी वढ़ि चले चित चतुराई नैन ॥ ५२ ॥

अर तें इति—सखी नायक सों कहति है, अर तें हठ तें नहीं टरत हैं। वर परे बल भरे हैं, मानो मैन काम मरुक दीनी है, उत्कर्ष दियो है, देखो कौन जीते याको नाम मरुक, चित चतुराई औ नैन होड़ाहोड़ी वढ़ि चले हैं। असिद्धास्पदहेतूत्प्रेक्षा, मैनमरुक हेतु है मानो ॥ ५२ ॥

सायक सम मायक * नयन रँगे त्रिविध रँग गात ।
झखौ बिलखि दुरि जात जल लखि जलजात लजात ॥

सायक इति—सखी वचन नायक सों। रँगे त्रिविध रंग गात, तीनि तरह के रंग सों अंग रंगे हैं, यातें नैन सायक वान ताके सम हैं, खेत हैं स्याम हैं लाल हैं, "सितासित लोचन में लोहित लकीर किधौं वाँधे जुग मीन लाल रेसम के जाल में" सायक सम हैं, ए मायक हैं, कछू इनमें माया है। जाहि देख झख जो है मीन सो विलखाय के जल में छपि जात है, देखि के कमल लजात है। अर्थ यह याको सो रूप हमारो नहीं नेत्र अति सुन्दर हैं, यहां व्यतिरेकालङ्कार है, "व्यतिरेक जु उपमान तें उपमे अधिको देखि" नेत्र में मायकता अधिक ॥ ५३॥

जोग जुगत सिखये सबै मनो महामुनि मैन ।
चाहत पिय अद्वैतता कानन सेवत नैन ॥ ५४ ॥

जोग इति—सखी की उक्ति नायक सों। मैन काम सो महामुनि है, तानें जोग कहिये योग, औ जोग मिलन ताकी जुगति

* कहीं सायक सम घायक भी पाठ है।

मानो भले सिखाई, मुनि जोग सिखावे है काम मिलन की जुक्ति सिखाई। पिय सों अद्वैतता एकता चाहत हैं, यातें नैन कानन (श्लेष) सेवत हैं कान ताई नेत्र है। जो कोई जोगी होत है ब्रह्म सों अद्वैतता चाहत है। सो कानन बन सेवत है, यहां जोग औ कानन में श्लेष, महामुनि मैन यहां रूपक, मानो सिखये यहां उत्प्रेक्षा ॥

वर जीते सर मैन के ऐसे देखे मै न　।
हरिनी के नैनान तें हरि नीके ए नैन　॥ ५५ ॥

वर जीते इति—नायक सों सखीवचन। वर कहिये श्रेष्ठ जे हैं मैन काम ताके सर मोहनादि ताकों जीते हैं, किम्वा वर कहिये बल तासों काम के सर जीते हैं। ऐसे देखे मै न, ऐसे या तरह के मैं को अर्थ हम नहीं देखे। हरिनी मृगी ताके नैननि तें हे हरि ए नैन नीके हैं। किंवा, हरिनी सुन्दरी जे स्त्री हैं ताके नैननि तें ए नैन नीके हैं। "हरिणी चारुयोषिता,, हेमकोष है, याको अर्थ हरिणी शब्द चारु सुन्दरी योषित स्त्री विषे हैं। किवा, बात कों दृढ़ करिवे को दोय बार सम्बोधन। हे हरि नीके जे हैं नैन तातें हे हरि ए नीके नैन है। किवा, हरिनी नाम एक अप्सरा है ताके नैननि तें हे हरि ए नीके नैन हैं, नीके नैन कहि के मैन के सर जीतिवो दृढ़ कियो।

"काव्यलिङ्ग जब युक्ति सों अर्थ समर्थन होय"। औ जमक शब्दालङ्कार है। "जमक शब्द को फिरि श्रवन अर्थ जुदो है जानि" हरिनी के हरि नीके।५५।

संगति दोष लगै सबै कहे जु सांचे बैन　।
कुटिल बंक भ्रू संग तें भए कुटिलगति नैन॥५६॥

संगति इति—नायिका की उक्ति नायक सों। किंवा, न

की उक्ति खण्डिता नायिका सों। नायिका वचन ॥ संगति की दोष सबकों लगै है। 'कहि जु साँचे वैन' साँचे लोगनि ने यह वैन वचन कहे हैं। किंवा, साँचे बचन कहे हैं, हे कुटिल त्रिभंगी, बाँकी जो हैं भृकुटी ताके संग तें, ए नैन कुटिलगति वक्रगति भये हैं। नायक की उक्ति में, हे कुटिल टेढ़ी बात बोलै है गुन में दोष निवारै है, किंवा कुटिल वङ्क बोलनि है, टेढ़ी बाँकी, पूरब में टेढ़वां कुच कहत है, ऐसी भृकुटी के संग तें, कोई कुटिल दुखदाई कों कहत है। किंवा, पूर्वार्द्ध को और अर्थ वैसेही। नायक के सुनाय सखी सों खण्डिता कहति है। हे सवय सखि, कुटिल दुखदाई जो वह नायिका है, फेरि कैसी है वङ्कभ्रू है कर्कसा है, सदा भौंह चढ़ाये रहति है, ताके संग तें नायक कुटिलगति भये हैं दुखदाई की तरह लिये हैं। क्यों इनकों नै कहिये नीति सो नहीं है, पहिलें प्रीति करैं, पीछे त्याग करैं, यह अनीति। इहां उल्लास अलंकार है—"गुन औगुन जब एक तें और धरैं उल्लास" भौंहनि को दोष नैननि में लाग्यो ॥ ५६ ॥

दृगनि लगत वेधत हियौ विकल करत अँग आन।
ए तेरे सब तें विषम ईछन तीछन वान ॥ ५७ ॥

दृगनि इति—नायक की उक्ति नायिका सों। नैन हमारे दृगनि सों लागत हैं, हृदय को वेधत हैं, आन और अंग कों विकल करत हैं। हे वाल! तेरे जो यह ईछन नैन हैं सो तीछन वान हैं, सब तें बरछी तीर कटारी तें विषम हैं, सनेह नहीं जात हैं, असंगति अलंकार को प्रथम भेद है। 'तीनि असंगति काज अरु कारन न्यारे ठाँव' दृगनि में लागें, चाहिये कि ताही कोंभेदैं। कार्य्य भेदियो सो और ठौर भयो, ऐसे आगे भी जानिये ॥ ५७ ॥

झूठे जानि न संग्रहे मनु मुँह निकसे वैन ।
याही तें मानो किये वातनि को विधि नैन ॥ ५८ ॥

झूठे इति—नायक नायिका नेत्रनि सों इसारा करैं हैं, सो देखि कैं सखी पीछे कहति है। सन्सार में सत्पुरुष हैं, तिन ने मुंहनिकसे वैन, मुख तें निकसे जे वचन हैं ताकों झूठो जानि कैं मानो नहीं संग्रह किये हैं। अर्थात् यह नहीं प्रमान किये हैं, याही कारन तें विधाता ने साची वातनि कहिवे कों नैन किये हैं, वनाये हैं, मानो इसारे को वात सत्यही है। इहां सिद्धास्पद हेतूत्प्रेक्षा है। मुख की वात मिथ्या यह हेतु, नैन के वैन सिद्धास्पद ॥ ५८ ॥

फिरि फिरि दौरत देखियत निचले नेंकु रहे न ।
ए कजरारे कौन पै करत कजाकी नैन ॥ ५९ ॥

चितवनि वर्नन। फिरिफिरि इति—परकीया नायिका सों सखी अजान सी होय कें हँसी करति है। मिलि कैं फिरत हैं फेरि दौरत देखिये हैं। कजाक लुटेरा की भी यही तरह है, निश्चल थोरी भी नहीं रहत है, ए जो तेरे कजरारे काजरसहित नेत्र हैं सो कौन पें कजाकी करत हैं। जौ नायक सों सखी को वचन होय तौ विना काजरही कजरारे नेत्र जानिये। इहां लुप्तोपमालंकार है, नैन उपमेय है, दौरिवो धर्म है, वाचक उपमान को लोप है, कजाक सि इतना ऊपर तें जानिये ॥ ५९ ॥

खरी भीर हू भेदि कै कित हू ह्वै इत आय ।
फिरै डीठि जुरि दुहुँन की सव की डीठि वचाय ॥ ६० ॥

खरी भीर इति—परकीया नायिका, सखी सों सखीवचन ।

खरी अति जो है भीर ताकों भेदि कैं फारि कैं, कितहू ह्वै कहूं और सौं होय कैं दूत आय, या ओर आय। नायिका को नायक को ओर आय, दोउन की डीठि जुरि कहिए मिलि कैं फिरी। सबकी दीठि कौं बचाय करि। इहां विभावना अलंकार है— "प्रतिबन्धक कैं होतहू कारज पूरन मानि" भोरि प्रतिबन्धक है, तौभी दृष्टि को मिलिबो कार्य्य भयो ॥ ६० ॥

सब ही तन समुहात छिन चलति सबनि दै पीठि ।
वाही तन ठहराति यह कविलनुमा लौं दीठि ॥६१॥

सबही तन इति—सखी सौं सखीवचन। सबही तन सबही की ओर सन्मुख होति है, छन एक फेरि सबन कौं पीठि दै करि चलति है। 'वाही तन ठहराति यह' यह दृष्टि वाही नायिका की ओर किंवा नायक की ओर ठहराति है। कविलनुमा सौ, कविलनुमा लोह की पूतरी अँगूठी में रहति है। पच्छिम की खानि को चुंबक वामें लग्यो रहत है। कोई तरफ पूतरी को फेरै तौभी पच्छिम तरफ कौं वाको सिर रहै। इहां पूर्णोपमालंकार है, डीठि उपमेय, कविलनुमा उपमान, लौं वाचक, समुहानो धर्म ॥ ६१ ॥

कहत नटत रीझत खीझत मिलत खिलत लजियात ।
भरे भौंन मैं करत हैं नैननही सौं बात ॥ ६२ ॥

कहत इति—लोगनि सौं भौन भर्यो है तहां नैननही सों बात करत हैं, कहत हैं। नायक तौ संकेट चलिवे को इसारा करत है तब नायिका नटै है नाहीं करै है, नाहीं कहिवे सों जो सोभा विसेष होत है, तासों नायक रीझत है, तब नायिका खीझति है

कोई जान लेगो, फेरि नायक के नेत्र मिलि कैं खिलत हैं, फूलत हैं, तब नायिका लजाति है, यह सब देखि कैं एक सखी दूसरी सों कहति है, परकीया नायिका है । इहां विभावना अलंकार है "प्रतिबन्धक के होतहू कारज पूरन मान" । भयौ भौंन बाधक है तौभी बातें करत हैं । आधा दोहा में कारक दीपक ॥ ६२ ॥

सब अँग करि राखी सुघरि नायक नेह सिखाय ।
रसजुत लेति अनन्तगति पुतरी पातुरराय ॥ ६३ ॥

सब अँग इति—नायिका वासकसज्जा । ताकी चंचल दृष्टि देखि सखी नायक सों कहति है । वा नायिका को आँखि की जो पुतरी है सो पातुरराय है, पातुरिनि की सरदार है । सरदारपनों निवाहत है । नाच के चारि अंग हैं, नाचिवो, गाइवो, बजाइवो, भाव बताइवो । नेह रूपी नायक नचावनिहार ताने सब अंग करि काहिवो नटिवो रीझिवो खीझिवो यह जानिये । चारिहु अंग में सिखाय कै सुघरि करि राखी है, और पातरि एक दोय अंग में सुघरि प्रवीन होति है, रस सों जुक्त होय कैं अनन्तगति लेति है । इहां रूपकाऽलंकार है—

उपमानरु उपमेय में भेद परै न लखाय ।
तासों रूपक कहत है सकल सुकवि समुदाय ॥ ६३ ॥

कंजनयनि मंजन किये बैठी ब्यौरति बार ।
कच अँगुरिन बिच डीठि दै निरखति नंदकुमार ॥६४॥

कञ्जनयनि इति—सखी सों सखीवचन । कमलनयनी [नाय]िका स्नान करिकैं बार कों सुरभावति है, केस औ अँ[गु]।

बीच में दृष्टि देइकें नन्दकुमार कों निरखै है । किंवा, नायिका नायक सों कहति है, हे कुमार ! कच अँगुरिन विच डीठि देकें हमारी नन्द जो है नँनद, सो देखति है । किंवा, नायिकावचन सखी सों, हमारी जो नन्द सो कुमार कों निरखति है । इहां पर्य्यायोक्ति अलंकार है—"मिसि करि कारज साधिये जो है चितहिं सुहात" इहां छल करि दरसन साध्यौ ॥ ६४ ॥

डीठ वरत बाँधी अटनि चढ़ि धावत न डेरात ।
इत उत तें चित दुहुनि के नट लौं आवत जात ॥६५॥

डीठि इति—सखो सों सखीवचन । दृष्टि सोई है वरत रसरी, आपनी आपनी अटारी सों नायक नायिका ने वाँधी है लगाई है, तापैं मन दौरत है । कोई देखत कैं देखि लेइगो तासों नहीं डरत हैं, इहां उहां दम्पति के मन आवत जात हैं । किंवा, दोउ की दृष्टि भई एक वरत, तापैं एक नट यहां सो जात है, दूजो नट उहां सों आवत है, डीठि वरत इहां रूपकालंकार, पूर्णोपमालंकार भी है । मन उपमेय, नट उपमान, लौं वाचक, आवत जात साधारन धर्म ॥ ६५ ॥

जुरे दुहुनि के दृग झमकि रुके न झीने चीर ।
(हलकी फौज हरौल ज्यौं परत गोल पैं भीर)॥ ६६ ॥

जुरे दुहुनि इति—सखी सों सखीवचन । झमकि को अर्थ इहां सितावी लीजिये, सितावो करि दुहुन के नैन जुरे मिले, झीने चीर सों रुके नहीं । जैसें हरोल की थोरी फौज होय तो गोल की फौज जो है वड़ी फौज तापर भीर परै है, नायिका की

ओर घूंघट हरोल है, नायक की ओर हरोल कौन? नायिकाकी आँखि पातशाही फौज, नायक के नेत्र दखिनी जानिये, हरोल की रीति नहीं। इहां दृष्टान्त अलंकार जानिये, जहां एक बात में एक बात की छाया परै। "भावविम्ब प्रतिबिम्ब कौं दृष्टान्त सुनै है नाम" ॥ ६६ ॥

लीने हूं साहस सहस कीने जतन हजार ।
लोयन लोयन सिंधु तन पैरि न पावत पार॥ ६७ ॥

लीनेहू इति—धृष्टता सहित जो जोरावरी सो साहस, नायिका किंवा नायक कहत है। हजार साहस लिये नाभी को रूप आवर्त तामें नहीं अटकेंगे, जड़ता आदि सात्विक दृढ़ चित्त करि नहीं होने देंहिगे। ऐसें हजार जतन किये भो लोयन जे हैं नेत्र सो लोयन लावन्य जाहि रूप में प्रतिविम्ब परें सो लावन्यता को समुद्र, नायिका के किंवा नायक के तन, ताकौं पैरि कैं पार नहीं पावत है। गुन कहे है तासों पूर्वानुराग जानो जात है, औत्सुक्य संचारी, लोयन सिंधु, तन रूपक, उपमान उपमेय को अभेद। लोयन लोयन, जमकालंकार पद की आवृत्ति सौं ॥ ६७ ॥

पहुंचति दटि रनसुभट लों रोकि सकै सब नाहि ।
लाखनहू की भीर मैं आँखि उतै चलि जाहि॥ ६८॥

पहुंच इति—सखी सों सखीवचन। पहुंचत हैं, दटि को अर्थ अँटकर करिकैं, रन में सुभट की तरह, सब नहीं रोकि सके है, लाखनहू की भीर है तो भी आंखिनु तें नायिका की ओर

नायक की, औ नायक की ओर नायिका की आखें चलि जाति है, लों वाचक रनसुभट उपमान आंखि उपमेय पहुंचिवो साधारन धर्म्म, उपमा अलङ्कार, और प्रतिवन्धक तोभी नैन को जानो विभावना,—"प्रतिवन्धक के होतहूँ कारज पूरन मान" ॥ ६८ ॥

गड़ी कुटम्ब की भीर मे रही बैठि दै पीठि ।
तऊ पलक परि जात उत सलज हँसौंही डीठि॥६९॥

गड़ी इति। सखी सों सखीवचन—कुटुम्ब की भीरि में गड़ी है। गड़ी को अर्थ यहां नजरि नहीं आवति है, वही कुटुम्ब यह भी पाठ है। पीठि दैके नायक सों बैठि रही, तऊ तौभी पलक उतही को परि जाति है, जो भी सहजैं लजौंही डीठि है। विभावना—"प्रतिवन्धक के होतहू कारज पूरन मान" ॥ ६९ ॥

भौंह उचै आंचर उलटि मौर मौरि मुँह मोरि ।
नीठि नीठि भीतर गई डीठि डीठि सौं जोरि॥७०॥

भौंह इति। नायक को वचन सखी सों—चेष्टा वर्णन, भौंहनि कौं ऊँचौ करि आँचर कौं उलटि कै, मौर कों मोरि कं, नीठि नीठि कैसेहूँ कैसे भीतर गई। डीठि सों डीठि जोरि, स्वभावोक्ति—"स्वभावोक्ति तिहि जानिये वरनैं जाति सुभाव" ॥ ७० ॥

ऐंचत सी चितवनि चितै भई ओट अलसाय ।
फिरि उझकनि कौं मृगनयनि दृगनि लगनिया लाय ॥

ऐंचत सी इति। नायक की उक्ति सखी सों—ऐंचत सी मनों खींचि लेति है। ऐसी चितवनि चितै कै, अलसाय कै काहू की ओट भई, फिरि उझकव कों ऊँची कै देखिवे कौं, मृगनैनी नै

दृगनि कों लगनि आसक्ति लगाई। फेरि कहूं देखें तौ भलौ, जो नायिका आपनी हकीकति कहै तौ मृगनयनी सखी कौ सम्बोधन जानिये। अभिलाष संचारी अलसाइवो अनुभाव। ऐंचत सी इहाँ क्रिया के आगे सी वाचक है तासों उत्प्रेच्छा। मृगनयनि इहाँ लुप्तोपमालङ्कार है ॥ ७१ ॥

सटपटाति सी ससिमुखी मुख घूंघट पट ढाँकि ।
पावकझर सी झमकि कै गई झरोखा झांकि ॥७२॥

सटपटाति इति। नायक की उक्ति सखी सों—सटपटाति सी, मानौ छटपटाति है, व्याकुल, यह अर्थ। चन्द्रमुखी मुख कों घूंघट के पट सों ढाँकि के अग्नि की ज्वाला सी झमकि कैं झरोखा में झाँकि कै गई। सटपटाति सी इहाँ उत्प्रेक्षा, पावकझर सी पूर्णोपमा, ससिमुखी लुप्तोपमा जानिये ॥ ७२ ॥

लागत कुटिल कटाछ सर क्यों न होंहि बेहाल ।
कढ़त जु हियो दुसार करि तऊ रहत नटसाल ॥७३॥

लागत इति। सखी की उक्ति सखी सों—कुटिल टेढ़ा किंवा कुटिल दुखदाई जो कटाच्छ सोई है सर ताके लागतही नायक क्यों नही बेहाल होइ। दुसार तीर जो छेदि कैं कढ़ि जाय, नट साल टूटि कै भाल अंग में रहै। कढ़त जु हियो दुसार करि, हृदय कों दाइसार कहिये छेद सों करिकें काढ़त है, तौ भी नटसाल रहत है। वितर्क संचारी। काव्यलिंग। बेहाल होनो कुटिल कटाच्छ के लागे सों समर्थित कियो। किंवा विरोधाभास।

"भासत जहां बिरोध सो वहै बिरोधाभास" ॥ ७३ ॥

नैन तुरङ्गम अलक छवि छरी लगी जिहि आय ।
तिहिं चढ़ि मन चञ्चल भयो मति दीनी बिसराय॥७४॥

नैन तुरंगम इति—विहारी को दोहा नहीं है । सखी सों सखी वचन—नैन सोई घोरा, अलक छवि सोई छरी, सो जाकों लगी आय । ताहि पर चढ़ि कै मन चंचल भयो, मति विसराय दीनो । रूपक अलंकार । नैन सो घोरा ॥ ७४ ॥

नीचीए नीची निपट डीठि कुही लौं दौरि ।
उठि ऊँचे नीचे दियो मन कुलंग झकझौरि ॥७५॥

नीचीए इति । निपट नीची दृष्टि जो है सो है कुही पंछी सी दौरि कैं फिरि दृष्टि ऊँची उठी । याको अर्थ ऊँची होय कै, नायक कहत है । हे सखि हमारा जो मन है, सो कुलंग पछी विशेष ताकों झकझोरि कै नीचैं दियौ । कुही याही तरह उड़ै है । पूर्णोपमा ॥ "उपमेयरु उपमान जहँ वाचक धर्म सु सारि । पूरन उपमाहीन जहँ लुप्तोपमा बिचारि" ॥ दृष्टि उपमेय, कुही उपमान, लौं वाचक, दौरिबो साधारन धर्म, ऐसे जानिये ॥ ७५ ॥

तिय कित कमनैती पढ़ी बिनु जिह भौंह कमान ।
चित वेझै चूकति नहीं वंक बिलोकनि बान ॥७६॥

तिय कित इति । नायक किंवा सखी कहति है । हे तिय तूं कित कहाँ कमनैती कमान चलायबो पढ़ी? । जिह गुन बिना भौंह कमान है, चित जो देखिवे में नहीं आवै सोई है वेझा निसाना ताकों चूकै नहीं । वङ्क टेढ़ी जो बिलोकनि सो बान है,

टेढ़ा तीर निसाना में लागे नहीं, सबही आश्चर्य्य। दूसरी बिभावना। "हेतु अपूरन तें जबै कारज पूरन होय"। बिन गुन धनुष इत्यादि। चित्त निसाना में नहीं चूकत है, यह कार्य्य, याको अर्थ मारै है ॥ ७६ ॥

दूरे खरे समीप को मानि लेत मनमोद　।
होत दुहुँन के दृगनही बतरस हँसी बिनोद ॥७७॥

दूरे इति। सखी सों सखीवचन—दम्पति दूरे खड़े हैं, समीप को मन में मोद आनन्द मानि लेत हैं, किंवा दूरि है तौ भी खरे समीप को अति समीप को आनन्द मानि लेत हैं। दुहुनि के नैनही मों बात को रस औ हँसी औ बिनोद होत है। इहां हर्ष संचारी, परकीया नायिका। विभावनाऽलङ्कार—"होति छ भाँति बिभावना कारन बिनही काज"। दूरि है तो भी अति समीप को मोद ॥ ७७ ॥

छुटै न लाज न लालचौ प्यौ लखि नैहर गेह　।
सटपटात लोचन खरे भरे सँकोच सनेह　॥ ७८ ॥

छुटै न इति। सखी सों सखीवचन—लाज नहीं छूटै है, औ लालच मिलिबे को नहीं छुटै है। प्यौ नायक को नैहर के घर में, स्त्री के पिता को घर सो नैहर, जाकों प्यौसाल कहै हैं देखि कै, लोचन नायिका के सटपटात हैं कहा करों क्योंकरि मिलै ऐसें। खरे संकोच सों खरे सनेह सों भरे हैं, नायिका मध्या, भाव सन्धि है, सभाप्रकास—

"एक हेतु के मिस ते भाव भिन्न जुत होय।
सन्धि सराहति कबि कहै उदाहरन रस सोय।"

नायक कारन, लज्जा प्रीति की सन्धि, पर्यायालङ्कार, "है पर्याय अनेक को क्रम तें आश्रय एक"। नेत्र में व्याकुलता लज्जा प्रीति ॥ ७८ ॥

(करे चाह सों चुटुकि कैं खरे उठौंहैं मैन ।
लाज नवाये तरफरत करत खूंद सी नैन) ॥ ७९ ॥

करे इति। सखी नायिका की चाह देखि सखी सों कहति है—चुटुकि कें याकौ अर्थ घोड़ा कों पाव सों छड़ी सो चुटकै है जलद करे है, मैन चाह रूपी जो छड़ी तासों मारि के अति उठौंहौं किए, लाज सोई है वाग तासौं खींच्यौ तरफराय कै नैन खूंद सी करत है, नाचत से हैं, खूंद क्रिया है, ताके आगे सी वाचक है, जहां क्रिया के आगे वाचक तहां उनुक्तास्पद वस्तूत्प्रेक्षालङ्कार जानिए ॥ ७९ ॥

नावक सर से लाय कैं तिलक तरुनि इत ताकि ।
पावक झर सी झमकि कै गई झरोखा झांकि ॥ ८० ॥

नावक इति। सखी सों नायक वचन—नावक नलिका कै सर समान तिलक लगाय कैं तरुनी इत हमारी ओर देखि, अग्नि की ज्वाल सम झमकि कैं झरोखा में झाँकि गई है। उपमा है ॥ ८० ॥

अनियारे दीरघदृगनि किती न तरुनि समान ।
वह चितवन औरै कछू जिहिं वस होत सुजान ॥ ८१ ॥

अनियारे इति। नायिका की स्तुति सखी करै है—अनियारे नैन

सों दीरघ नैन सों कितनी तरुनी तोहि समान नहीं है। अर्थ यह जो हैं, किंवा कितनीं तरुनी समान गर्व नहीं है, वह तेरी अनिर्वचनीय चितौन कछु औरै है जासों सुजान प्रवीन नायक बस होत है। किंवा सुन्दरी तरह जान जीव बस होत है। इहां व्यतिरेकालङ्कार औ भेदकातिशयोक्ति है।

व्यतिरेक जु उपमान तें उपमेय अधिको जान॥
अतिसयोक्ति भेदक वहै यहि बिजि बरन्यो जात।
औरै हँसिबो देखिबो औरै याको बात॥ ८१॥

चमचमात चंचल नयन बिच घूंघट पट झीन।
मानहुं सुरसरिता बिमल जल उछरत जुग मीन॥८२॥

चमचमात इति। नायक की उक्ति सखी सों—नायिका के चंचल जे नैन हैं, सो झीने महीन जो है घूंघट को पट तामें चमचमात हैं। सुरसरिता गंगा जी ताको निर्मल जल में मानो जुग कहिये दोय मीन उछलत हैं। वितर्क संचारी वचन अनुभाव तें अनुराग व्यङ्ग है। इहां उक्तास्पद वस्तुत्प्रेक्षा। पट में जलकी सम्भावना, नैन में मीन की सम्भावना॥ ८२॥

फूले फदकत लै फरी पल कटाछ करवार।
करत बचावत बिय नयन पायक घाय हजार॥८३॥

फूले फदकत इति। नायिका नायक कों देखति है, सो देखि कै सखी सों सखी कहति है—आनन्द सों फूले हैं मानो फदकत हैं फाँदत हैं, लै को अर्थ लेकरि फरी जो ढाल सोई है पलक, औ कटाछ सो है करवाल तरवारि। बिय नयन पायक

बिय कहिये दोऊ के नायक नायिका के नैन सो पायक प्यादे हैं, करत बँचावत, घाय हजार याको अर्थ, हजार घाव करत हैं, औ बँचावत भी हैं, आपु घायल नहीं होत हैं, यह अर्थ अच्छो नहीं, किंवा हजार घाव करत हैं। बिय कहिये दूसरा जलदी सों तासों बचावत है। दुर्जन कोई देखि न लेइ, किंवा, दोऊ के नैन पायक हैं सो हजार घाव कौं करत हैं औ दम्पति कौं बचावत हैं, अर्थ यह जो दम्पति कों कटाच्छ की चोट न होय तौ अकुलाय मरै, किंवा नेत्रनि पर, नेत्रनि की कटाच्छ की चोट न होय तो नेत्रही अकुलाय मरै। टाँड़ फरी खिले है सो आपु कौं बचावत है, हर्ष संचारी, कटाच्छ अनुभाव, घाव शब्द लक्षक है घाव को अर्थ घाव नहीं, नैन सो पायक यातें रूपकालङ्कार॥ ८३॥

यदपि चवायनिचीकनी चलत चहूँदिस सैन।
तऊ न छाड़त दुहुँन के हँसी रसीले नैन॥ ८४॥

यदपि इति। सखी सों सखीबचन—जदपि जौ भी चवायन निन्दानि सहित बातनि सों चीकनी पुष्ट चहुंदिस सों सैन इसारा होत है, तौ भी दुहुन के दंपति के रसीले जे नैन हैं, वै हँसी नहीं छाड़त हैं, पूर्वानुराग धृति संचारी, सैन पद तें परकीया व्यङ्ग। विशेषोक्तिअलङ्कार—"विशेषोक्ति जहँ हेतु सों कारज उपजतु नाहि"। सैन हेतु सो हँसी को त्याग नहीं भयो॥८४॥

जटित नीलमनि जगमगति सींक सुहाई नाँक।
मनो अली चम्पक कली वसि रस लेत निसाँक॥८५॥

(नासिका वर्नन) जटित इति। सोने की सींक ऊपर चौड़ी

होति है, जराव जरी होति है। नीलमनि सों जटित जगमगाति है, ऐसी जो सींक तासों नाक सोहाई, किंवा, नाक सों सींक सोहाई। तहां संभावना। मानो भौंर चम्पा की कली पर बैठि कै निसङ्क रस लेत है। सखी नायक की चाह बढ़ावति है, चलै नहीं तासों निसाँक पद कह्यौ। इहां वस्तुत्प्रेक्षालङ्कार है॥८५॥

बेधक अनिआरे नयन बेधत कर न निषेध ।
बरबस बेधत मो हियो तो नासा को बेध ॥ ८६ ॥

वेधक इति। नायक की उक्ति नायिका सौं—लोचन नेत्र कै कोन ताकों अनी कहत हैं, बरछी को छुरी को अग्रभाग सो अनी तैसे जाकि कोन, अनियारे नेत्र बेधक हैं सो बेधत हैं, ताकों तूं निषेध मति करै, बरबस जो रावरी सो मेरी हियो बेधत है। तेरी नासिका को वेध, अति सौन्दर्य्य व्यङ्ग्य। अभिलाष दसा। चौथी विभावना। "जबै अकारन वस्तु तें कारज परगट होत।" वेधिबे को कारन वेध नहीं ॥ ८६ ॥

जदपि लौंग ललितौ तऊ तूं न पहिरि इक आँक ।
सदा संक चढ़िए रहैं अहै चढ़ीसी नाँक ॥८७॥

जदपि इति। सठ नायक कहत है—सापराध देखि नायिका ने मान की चेष्टा बनाई है सो देखि कें। जदपि जौं भी लवंग सुन्दर है तो भी तूं एक आँक न पहिरि, एक आँक को अर्थ निश्चय न पहिरि, लवंग है कटु तासों सदा मान की संका हृदय में चढ़ी रहति है। सुभावही तें यह तेरी चढ़ी सी नाक है।

"मुंह मीठी बातें करें निपट कपट जिय जानि।
जाहि न डर अपराध को सठ कहि ताहि बखानि।"

रसिक प्रिया को लच्छन । लेषालङ्कार, लौंग ललित कहि दोष दियो । 'गुन में दोषरु दोष में गुन कल्पना सुलेष' ॥८७॥

वेसरि मोती दुति झलक परी ओठ पर आय ।
चूनो होइ न चतुरि तिय क्यौं पट पोछो जाय ॥८८॥

वेसरि इति । नायिका सखी सौं छपाय कैं नायक सों रति करि आई है, ओठ अगौंछा सों पोंछति है तहां सखी चूना को छल करि कहति है, वेसरि मोती झलक को दुति अधर में आय परी है, चूना नहीं है । हे चतुर तिय तूं सब बात तें जानति है, पट सों क्योंकरि पौंछो जाय, "पोंछि कपोल अँगोछति ओठ अमेंठति आंखि निरावति भौंहैं"। सुरतांत में ऐसो वर्नन है। परकिया नायिका, पर्यायोक्ति अलंकार। "पर्यायोक्ति प्रकार है कछु रचना सौं बात।' जौ चूना को भ्रम सौं नायिका पोछति है तौ, भ्रान्त्यापह्नुति है । "भ्रान्ति अपह्नुति वचन सौं भ्रम जब पर को जाय"॥

इहि द्वैही मोती सुगथ तूं नथ गरवि निसांक ।
जिहि पहिरे जग दृग ग्रसत लसति हँसति सी नांक॥

इहि द्वै इति । नायक को वचन—यह जो द्वै मोती है सोई सुगथ गथ नाम द्रव्य को सुन्दर द्रव्य । किंवा, सुगथ सुन्दरी तरह सौं गूंथ्यो है, तासों हे नथ तूं निसङ्क गरब कर, जिहि तोहि प[हि]रे सो जग के दृग कों ग्रसै है । किंवा, जग में हमारे दृग क[ों] ग्रसति है, ग्रसति को अर्थ वस करिबो लच्छना सो जानिये । [अ]रु हँसति सी मानौ हँसै है, ऐसी नाक लसै है, सखी को उक्ति में जग दृग श्रीकृष्ण जानिये । अन्योक्ति में भी लगति है । उत्[प्रे]क्षालङ्कार । हँसति यह क्रिया है ताके आगे सी है तासों ॥८९॥

वेसरिमोती धन्य तूं को पूछै कुल जाति ।
पीवौ करि तिय ओठ को रस निधरक दिन राति॥९०॥

वेसरि इति । विरह में नायक को प्रलाप—हे वेसरिमोती तूं धन्य है, कुल जाति कौं कौन वूझै है, सीपि को कुल जाति पत्थर, तिय के ओठ को रस निधरक निसङ्क पियो करौ, दिनरात में; यह दोहा अन्योक्ति में भी लगै है, धन्य तूं यातें स्तुति सों, निन्दा, व्याजस्तुति।

"निन्दास्तुति सौं होत जहँ स्तुति निन्दा को ज्ञान" ॥ ९० ॥

वरन वास सुकुमारता सब विधि रही समाय ।
पँखुरी लगी गुलाब की गाल न जानी जाय ॥९१॥

कपोल वर्नन—वरनवास इति। सखी की उक्ति नायक सों सुन्दरता सराहति है—वरन रंग, वास गन्ध, औ सुकुमारता तासों सब विधि सब तरह सों समाइ रही मिलि रही। गुलाब की पँखुरी गाल में लगी है, सो नहीं जानी जाति है। किंवा, वरन वास सुकुमारता याको अर्थ, वर कहिये श्रेष्ट नहीं है वास औ सुकुमारता, जो गुलाब की पँखुरी की सब विधि रही समाय। मिलिवे को जो सब विधि है वास औ सुकुमारता सो गुलाब की पँखुरीही में समाय रही कपोल में नहीं फैली जैसे दीपक की जोति दिन में दीपक में समाय रहति है, वाहिर नहीं फैलै है, तैसें पँखुरी लगी हे गुलाव की गालन में सो जानी जाति है। पहिला अर्थ में मीलित अलङ्कार—"मिलित सी सादृश्य तें भेद जवै न लखाय।" दूसरा अर्थ में विशेष है। "इहै विशेष विशेष पुनि फुरै जु समता माहि" ॥ ९१ ॥

लसत सेत सारी ढक्यौ तरल तरौना कान ।
पर्यौ मनो सुरसरिसलिल रविप्रतिबिम्ब विहान ॥९२॥

श्रवन वर्नन—लसत इति। सखी वहुत नायिका सों आसक्त जो है नायक ताकौं छवि सौं ललचाय कैं नायिका पास ले जानि कौं चाहति है। हे तरल चञ्चल, अनेक ठौर में फिरत रहत है। मैं वाके एक अङ्ग की छवि बरनति हौं सो सुनौ—सफेद सारी सों ढँप्यौ तरिवना तरकी वाके कान में लसति है। सुरसरित गंगाजी तिनके सलिल जल में मनो प्रातःकाल को सूर्य्य ताको प्रतिविम्ब पर्यो है। किंवा, नायक नायिका सौं सुरत की बात कहत है। तब नायिका माथो हिलाय कै नाहीं कहत है, तब तरिवना चंचल होत है, सो देखि कैं सखी सौं सखी कहति है, इहाँ वस्तूत्प्रेक्षालङ्कार। सारी में, तरिवना में, गंगाजल रवि को तर्क ॥ ९२ ॥

सुदुति दुराये दुरति नहिं प्रगट करति रतिरूप ।
छुटै पीक औरै उठी लाली ओठ अनूप ॥९३॥

ओठ वर्नन—सुदुति इति। अन्यसम्भोग दुःखिता नायिका, वक्रता सों आदर करि कहति है—हे सुदुति हे सुन्दरि दूती दुरायें छपायें दुरति है नहीं, तू आपने रूपही सों नायक की रति कौं प्रगट करति है सो रूप कहति है, नायक ने तेरो अधर पान कियो है, तासों पीक छुटि गई है और लाली ओठ विषें अनूप उठी है। किंवा, लक्षिता सों सखीवचन तहाँ ऐसो अर्थ। सुन्दरि जो दुति सो दुरायें नही दुरति है, रति के रूप कौं

करति है, और वैसेही, पहिला अर्थ में स्तुति सों निन्दा व्याज स्तुति। "निन्दास्तुति सों होत जहँ स्तुति निन्दा को ज्ञान"। और पद सों दूनौं पक्ष में अतिशयोक्ति।

"औरैं पद जहँ दीजीये अधिकाई के हेत।
अतिसयोक्ति भेदक यहै कहत सुकवि सिरनेत" ॥ ९३ ॥

कुचगिरि चढ़ि अति थकित ह्वै चली डीठि मुख चाढ़।
फिरि न टरी परियै रही परी चिबुक की गाढ़ ॥९४॥

चिबुक वर्नन—कुच इति। नायक स्मरण करै है—कुच सोई है गिरि पर्वत तापैं चढ़िकैं अति थाकि कैं जो थाकै है सो विश्राम करै है, कुछ वार विश्राम करिकैं। दृष्टि जो है सो मुख की चारु मुख की चाह सों आगे चली, चिबुक की गाड़ खाड़ तामें परी, फेरि नहि टरी औरि ठौर नहीं गई परीए रही, कुच गिरि इहां रूपक चढ़िवो हेतु थकित होनो हेतुमान तासों।

"हेतु हेतु को बरनई हेतुमान के संग" । ९४ ॥

ललित स्यामलीला ललन चढ़ी चिबुक छबि दून।
मधुछाक्यौ मधुकर पर्यौ मनो गुलाबप्रसून ॥९५॥

ललित इति। सखी को उक्ति नायक सों—हे ललन ललित जो स्यामलीला गोदना है, तासौं चिबुक में दूनी छवि चढ़ी है, बढ़ी यह भी पाठ है। मधु मदिरा, मधु फूल को रस तासौं छक्यौ मधुकर भौंरा सो मानो गुलाब के प्रसून फूल तामें पर्यौ है। किंवा, हे ललन याकै चिबुक सों दूनी छवि चढ़ी, और ठौर में जो याको छवि है सोई रहति है, स्यामलीला में, चिबुक में, भौंर को औ गुलाब प्रसून की तर्का, उत्प्रेक्षालङ्कार ॥ ९५ ॥

डारे ठोढ़ी गाढ़ गहि नैन वटोही मारि ।
चिलक चौंधि मैं रूप ठग हांसी फांसी डारि ॥९६॥

डारे ठोढ़ो इति । सखीवचन नायिका सौं—तेरो रूप सो ठग है, ता ने चिलक चोंध में अङ्ग को जो चाकचक्य तासों भई जो चोंध, चकचोंधी । जैसें सूर्य्य कों देखि आँखि में चोंध परत है, पहिलें गहि कै फिरि हाँसी सोई है फाँसी, ताकों डारि कैं नाइक के नैन सोई वटोही ताकों मारि कै ठोड़ी को जो गाड़ है तामें डारयो, तहांई नैन है, तहां सों अन्यत्र जात नहीं। इहां रूपक सर्वाङ्ग है, उपमान उपमेय सों अभेद कियो ॥ ९६ ॥

तो लखि मो मन जो लही सो गति कही न जाति ।
ठोढ़ी गाढ़ गड्यौ तऊ उड्यौ रहै दिन राति ॥९७॥

तो लखि इति । साभिलाष नायक को वचन नायिका सों । तोहि देखि कैं मेरे मन ने जो गति लही है, सो काहू सों कही न जाति है, आश्चर्य है । ठोड़ी के गाड़ में खाड़ में पयो है तौ भी दिन राति उड़यो रहत है, विलास करिवे के अनेक मनोरथ रूप पौन में पयो है, विरोधाभास है । "भासै जहाँ विरोध सो वहैं विरोधाभास" । गाड़ में पयो है तो भी उड़यो रहै यह विरोध सो है ॥ ९७ ॥

लोने मुख डीठ न लगैं यौं कहि दीनौ ईठ ।
दूनी ह्वै लागन लगी दियौ दिठौना दीठ ॥९८॥

(डिठौना वर्नन) लोनै मुख इति। बालमुकुन्द के मुख पैं जसोदाजी की सखी ने डिठौना दियो है सो देखि कैं सखी सौं

सखी कहति है । लावन्य भयो जो मुख है तामें डीठि न लगै, काहू की, या तरह कहि कैं ईठ कहिये हितु ता ने दियो, सोभा विशेष बढ़ी, आगे एक गुनी लागी थी अब दिये हैं जो दिठौना ताकों डीठि कहिये देखि कैं दूनी होय कैं लागिबे लगी डीठि, यह अर्थ। डीठि को दूसरो अर्थ किये पुनरुक्ति दोष नहीं, किंवा, नायिका के प्रसंग में है तहां सखी सों सखीवचन, इहां विषमालङ्कार है। "जहां भलो उद्यम किये होत बुरो फल आय" डिठोंना दियो डीठ न लगै सो दूनी लागिये लगी ॥ ६८ ॥

पिय तिय सों हसि कै कह्यौ लखैं दिठौना दीन ।
चन्दमुखी मुखचन्द तैं भलौ चन्द सम कीन ॥९९॥

पिय तिय इति । पिय ने आपनी तिय सों हँसि कैं कह्यो, डिठौना दिये देखि कैं। हे चन्दमुखी तेरो मुख चन्द्रमा तें भलो थो सो तूं डिठौना दे कैं चन्द्रमा के समान कियो, डिठौना सो कलङ्क समान भयो। इहां प्रश्न। चन्दमुखी तो पहिले कह्यौ फेरि चन्द सम कौननहीं बनै, तहां ऐसो अर्थ करिये। हेमी अनेकार्थ में लिख्यो, चन्द्रो अम्बुज कामियो, चन्द्र नाम, अम्बुद को, काम्य की टीका लिखी प्रशस्य तारीफ करिबे लायक, भाषा में चन्द्र को चन्द कहत हैं। हे चन्दमुखी तारीफ करिबे लायक तेरो मुख है सो चन्द्रमा तें भलो है, सो तूं चन्द्र को समान कियो, किंवा जा काहू तें नायिका को शृङ्गार करि डिठौना दियो है पिय ने ताहि तिय सों हँसि कैं कह्यो है। हे चन्दमुखी सखी या नायिका को मुख चन्द्र तें भलो, सो तैं चन्द्रमा को सम कियो। चन्दमुखी

इहां लुप्तोपमा। वाचक साधारन धर्म, को लोप। किंवा है चन्द्रमुखी सखी याको मुख तें चन्द्रमा को समान कियो है तो भी भलो है। उपमान चन्द्र तातें उपमेय मुख सो भलो कह्यौ। व्यतिरेकालङ्कार—

"व्यतिरेक जु उपमान तें उपमे अधिको देखि" ॥ ९९ ॥

गढ़े बढ़े छवि छाक छकि छिगुनी छोर छुटैं न ।
रहे सुरँग रँग रँगि वही नह दी मँहदी नैन ॥१००॥

अथ मेंहदी वर्नन—गडे बड़े इति। नायक सखी सों कहत है—बड़े जो छवि के छाक मत्तता तासों छाकि कैं मत्त होय कैं हमारे नैन छिगुनी कनिष्टाङ्गुरी ताके छोर अग्रभाग तामें गड़े हैं कहिये लगे हैं, छूटत नहीं हैं। कनिष्टांगुरी की जो नख ताकी जो मेँहदी ताको जो सुरंग सुन्दर रंग, उही कहिये वोही सों रँगि रहे हैं, अनुरागी होय रहे हैं। नहँ को तहँा पञ्जावी भाषा में नहँदी कहत हैं। सुरंग को अर्थ लाल नहीं, अनुरागी कियो मेँहदी को रंग तो लाल नहीं है। गड़े बड़े छेकानुप्रास, रंग रंग इहां जमक, मानो वाही रंग में रँगि रहे हैं। लुप्तोत्प्रेच्छा ॥१००॥

इति श्रीहरचरणदास कृत बिहारीसतसई की टीका हरिप्रकाश नाम प्रथम सतक व्याख्या नामें प्रथमोल्लास: ॥ १ ॥

सूर उदितहुँ मुदित मन मुख सुखमा की ओर ।
चितै रहत चहूंओर तें निश्चल चखनि चकोर ॥१०१॥

मुख वर्नन—सूर उदित इति। नायिका की उक्ति सखी सों होय तो रूपगर्विता। किंवा, नायक सों सखी सौन्दर्य कहति

है, किंवा तारीफ करै है। सूर्ज के उगत भी मुदित मन सौं निश्चय मुख कौं चन्द्रही जानत हैं, तासौं मुख की जो है सुखमा परमसोभा चहूंओर पसरी, ताकी ओर, चितै रहत है चहूं ओर सों, निश्चल नेच सों चकोर, किंवा मुख सुखमा को औरप मुख मुख जो है सो सुखमा की ओर है, अवधि है याकी सी सुखमा अन्यत्र नहीं पता कौं चितैं रहत है चकोर। इहां भ्रांति अलंकार है ॥ १०१ ॥

पत्राही तिथि पाइए वा घर के चहुँ पास ।
निति प्रति पूनोंही रहै आनन ओप उजास ॥१०२॥

पत्राही इति। सखी नायक सों स्तुति करति है—और ठौर तो पत्राही में तिथि पाइये हैं जानिये। वा नायिका के घर के चहूंपास चहूंओर, नितिप्रति सदा पूनो पौर्णमासी रहति है। आनन को जो है ओप चमत्कार विशेष ताके उजास सों। जो कोई कहै उजास तौ एक ओर होत है, घरि के चहूंओर पूनों क्योंकरिकै पूनो को चन्द उगै है, वाग में वन में छाया रहति है तौभी उजास होत है, किंवा नायक औरि नायिका के पास सों रात्रि में आयो है, नायिका क्रोध सों दीया नहीं वाख्यो है, सो देखि कें नायक ने काह्यो है अंधेरो घर क्यों, घर में अमावस क्यों वसाय राख्यो है ?। तब खण्डिता की उक्ति नायक सों, पत्राही याको अर्थ, हमारोही कहिये हृदय सो पत्रा है, तामें तिथि जानी जाति है, वा घर के चहूंपास वा जो तुमारो घर है, जहां सों तुम आवति हो। किंवा घर कहिये लुगाई, ऐसो श्लोक है, गृह को नाम गृह नहीं, गृहनी को नाम गृह है।

"न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिनी गृहमुच्यते।"

ताकी चहुंपास चहुंओर नितप्रति पूनो रहति है, आनन की ओप की उजास सों, आनन को उजास नहीं कह्यो, ओप को उजास कह्यो, तासों यह जानिये । वाके आनन में तो उजास नहीं है, तुमारे प्रीति की खुसी सों जो है ओप ताके उजास सों पूनो रहति है । किंवा, सखी कोई सखी सों कहति है, वा घर नन्दजी को घर ताकी चहुंपास चन्दमुखी सर्व कृपा कों देखिबे आवति हैं, ताके आनन ओप उजास सों । पहिला अर्थ में परिसंख्या अलंकार—"परिसंख्या इक थल वरजि दूजे थल ठहराय" औरि ठौर पञ्च में तिथि पाई है, इहां नहीं, इहां पूनो रहति है

नेकु हसौंहीं बानि तजि लख्यो परत मुख नीठि ।
चौका चमकनि चौंध में परत चौंध सी दीठि॥१०३॥

हास्य वर्नन—नेकु हँसोंही इति। नायिका नायक पास बैठी है तहँा सखी तारीफ करति सीख देति है । नायक तेरे मुख की ओर देखि रह्यो है, तू नेकु हसोंही बानि को तजि तेरो मुख नायक कों कैसेहूं देख्यो जात है । चारि दांत अगिला सो चोका ताकी जो चमकनि ताकी जो चौंधि छविकी झलझलाहटि चाक चक्य तामें डीठि कहिये देखि कै चौंधी सी परति है । किंवा दृष्टि में चौंधी सी परति है । अभुक्तास्पदवस्तूत्प्रेचा । इहां काव्य लिंग अलंकार । मुख को नीठि देखिबो दांत की चमक सों समर्थित करै है ॥ १०३ ॥

चलन न पावत निगम मग जग उपज्यौ अतित्रास।
कुच-उतंग गिरिवर गह्यौ मैना मैन मवास ॥१०४॥

कुच वर्नन—चलन इति। कवि की उक्ति, निगम वेद, औ मग राह सो नही चलन पावत है। किंवा, वेद को कह्यौ पथ है सो नहीं चलन पावत है, परस्त्री को निषेध आदि जहां वेद मर्य्याद उठै है, तासों जगत में अति त्रास उपज्यो है, कुच सोई ऊंचो पहार है, ताको मैन जो काम सो है मैना कोल भिल्ल को भेद मैना, ताने मवास जानि गह्यौ है। दुर्गम जो स्थान सो मवासा। इहां उपमान उपमेय के अभेद सों रूपक अलंकार॥१०४॥

ज्यौं ज्यौं जोवन जेठ दिन कुचमिति अति अधिकाति।
त्यौं त्यौं छिन छिन कटि छपा छीन परति निति जाति॥

कटि वर्नन—ज्यौं ज्यौं जोवन इति। सखी नायक सों कहति है—जोबन औ जेठ को दिन तामें कुच औ मिति दिन प्रमान, कुच औ मिति जैसें जैसे अति अधिकाति है तिस घरी सों बहुत बढ़त है, त्यों त्यों ताहि तरह छन छन कटि सोई है छपा राति सो निति छीन परति जाति है। इहाँ रूपक—

"है रूपक द्वै भांति को मोलित रूप अभेद।" ॥१०५॥

लगी अनलगी सी जु विधि करी खरी कटि छीन।
किए मनो वाही कसरि कुच नितम्ब अति पीन॥१०६॥

नितम्ब वर्नन—लगी इति। सखीवचन नायक सों—विधाता ने कटि कों खरी कहिये अति छीन करी है, लगी अनलगी सी, सो यह पद सन्देह कों जतावे है, लगी है किंवा अनलगी है,

वाही की कसरि सों मानो कुच कों नितंब कों अति पीन अति पुष्ट किये है, लगी अनलगी सी। इहाँ सन्देह अलङ्कार, आधा में हेतूत्प्रेक्षा अलङ्कार है ॥ १०६ ॥

जंघ जुगल लोयननिरे करे मनो विधि मैन ।
केलितरुन दुखदैन ए केलि तरुन सुखदैन ॥१०७॥

जंघा वर्नन—जंघ इति । सखीवचन नायक सों—मैन जो काम सो मानो विधाता है, या नायिका के जो जंघ जुगल दोऊ जंघा सो लावन्य निरे केवल लावन्यही सों करे है, कैसे हैं केलि केरा, ताके जो तरु वृक्ष ताको दुःख देनेवाले हैं, आपनी सोभा करि वाके तिरस्कार करनेवाले हैं वाके दूषक है। रति समय विषें केरा के थंभ की आकृति होति है, हे तरुन केलि समै विषें सुख देनेवाले हैं, तरुन सम्बोधन करै तौ नायिका सामान्य होय। इहां वस्तूत्प्रेक्षा और जमक, निरे लोयन वस्तु, केलि तरुन केलि तरुन जमक। "जमक शब्द कों फिरि श्रवन अर्थ जुदोई जानि।" केरा के दुख देनवाले यातें आर्थी उपमा ॥ १०७ ॥

रह्यौ ढीठ ढाढ़स गहैं ससिहरि गयो न सूर ।
मुर्‌यौ न मन मुरवानि चुभि भो चूरनि चपि चूर ॥१०८

रह्यौ इति। नायकवचन सखी सों—हमारो मन ढीठ है सो ढाढ़स साहस गहे रह्यौ। ससिहरि गयो न, याको अर्थ ... नहीं गयो ऐसी सुन्दर ठौर में आसक्ति किये हमारी कहा दसा होयगी यह डर नहीं कियो। सूर है, हमारो मन मुरवानि सों मुरवानि सों चुभि मुर्‌यो नहीं, चूरा पाव को गहना तासों च...

कैं चूर भयो वा ठौर सौं औरि ठौर जाने की शक्ति नहीं रही। चूरा चूरन करिबे को कारन नहीं तासौं कार्ज भयो। विभावना, "जबै अकारन वस्तु तें कारन परगट होय" ॥ १०८ ॥

पाय महावर देन कैं नाइन बैठी आय।
फिरि फिरि जानि महावरी एड़ी मीड़त जाय ॥ १०९॥

एड़ी वर्नन—पाय इति। सखीवचन नायक सौं—पाव में महावर देने कौं नायिनि आय के बैठी, फेरि फेरि महावर कौं जानि कैं एड़ी कौं मीडति मसलति जाति है, जानै है मैं महावर दियो है, जो महावर होयगो तो मसले सौं उतरि जायगो, सहज की ललाई सौं, भ्रान्तिमान अलङ्कार भयो ॥ १०९ ॥

कौहर सी एड़ीनि की लाली निरखि सुभाय।
पाय महावर देइ को आप भई बेपाय ॥ ११० ॥

कौहर इति। नायक सौं सखीवचन—पाव में महावर देने कौं नायिनि आई, तब कौहर सी जे है एड़ी, कौहर लाल फल होत है पूरब में माहुरी कहत हैं, ताकी सुभावही की लाली देखि कैं, पाव में महावर देइ कौ, कौन देइ आपु बेपाय भई। बेपाय को अर्थ इहां बुद्धि नहीं चले, इहां पूर्णोपमा। कौहर उपमानि, एड़ी उपमेय, सी वाचक, लाली धर्म, पाय पाय सौं जमक।११०॥

किय हायल चित चाय लगि बजि पायल तुअ पाय।
पुनि सुनि सुनि मुख मधुर धुनि क्यौं न लाल ललचाय॥

पायल वर्नन—किय इति। नायिका सौं सखीवचन—चित के चाव सौं लगि के मन कौं रोचक तुमारे पाव में नूपुर बजि

कै नायक कों मिलन की उत्कण्ठा बढ़ी तासौं हायल मूर्छित कियौ। सखी कहै है हे सखी पुनि तू सुनि, कोई समय में तेरे मुख की मधुरधुनि सुनि के क्यौं नहीं लाल ललचाय। इहां सुनि सुनि पद की आवृत्ति है, तासौं आवृत्ति दीपक।

'पद अरु अर्थ दुहून की आवृत्तिदीपक मानि" ॥ १११ ॥

सोहत अँगुठा पाय के अनवटजऱ्यौ जराय ।
जीत्यौ तरिवन दुति सु ढर पऱ्यौ तरनि मनु पाय॥११२॥

अनवट वर्नन—सोहत इति। नायक सौं सखीवचन—सोहत अँगूठा पाय कै, अँगूठा को प्राप्त होय कै अनवट, अँगूठा को भूषन सोहत है, जराव सौं जऱ्यौ है, जो पाव के अंगूठा में ऐसो अर्थ करिये तौ अनवट पाँवहीं के अँगुठा को भूषन है, अधिक पददोष होय, सुढार जो तरिवन कर्नभूषन तामें दुति सौं जीत्यो है, तरनि रवि ताकों तरनि हरि कै मानो पाँव में पऱ्यौ है, रवि एक है तासों अनवट में तरिवन में जातिपक्ष सौं, एक वचन कियौ अर्थ यह एकही ने जीति लियो, यह दोहा सान्त में लगाये खैंच्यौ लगै चमत्कार नहीं भासै। इहां हेतु उत्प्रेक्षा है—"तरिवन में जीत्यौ यह हेतु" ॥ ११२ ॥

पग पग मग अगमन परत चरन अरुन दुति भूलि ।
ठौर ठौर लखियत उठे दुपहरिया से फूलि ॥११३॥

गति वर्नन—पग पग इति। पग पग डग डग मगु राह तामें अगुमन कहिये आगें कों परत हैं चरन ताकी जो अरुन दुति लालि कान्ति तासों भूलि कें लगि कै ठौर ठौर में देखियतु

दुपहरिया बंधुजीव सो फूलि उठे है, नायिका कूं जाति देखि सखी नायक कों छवि सों ललचाय कैं ले गयो चाहति है। सो को अर्थ इहां मानो दुपहरिया फूलि उठै है मानो, वस्तुतप्रेक्षा॥११३॥

दुरति न कुच बिच कञ्चुकी चुपरी सादी सेत।
कवि अङ्कनि के अर्थ लौं प्रगट दिखाई देत॥११४॥

वसनाभूषन वर्नन—दुरत इति। सखीवचन नायक सों—याके कुच कांचुकी चाली ताके बीच मैं दुरत छपत नहीं हैं, ऐसो स्तन को प्रकाश है, कैसी है चुपरी है सोंधा लगाई है, सादी है जामें कसीदा छापा नहीं है। फेर स्वेत है, कवि के आंकनि के अक्षरनि के अर्थ से प्रगट जाहिर देखाई देत है, तुरत अर्थ भासै सो तो दोष है, नैषध, किरात को अर्थ सबको तुरत नहीं भासै है, तहां ऐसो जानिये। कविन को आँकनि के अर्थ जैसें प्रगट देखाई देत है, तैसें कुच देखाई देत है। पहिला अर्थ में पूर्नोपमा अर्थ उपमान, कुच उपमेय, लों वाचक, देखाई देत साधारनधर्म दूसरा अर्थ म दृष्टान्त, किंवा कवि के आंकनि के अर्थ लों है तो प्रगट, कवि के अर्थ साफ है, औरनि कों देखाई देत हैं, देखाई देत शब्द थोरा दर्शनकौं कहत है॥ ११४॥

भई जु तन छवि वसन मिलि बरन सकै सु न बैन।
आँग ओप आँगी दुरी आँगी आँग दुरै न॥११५॥

भई इति। नायक सों सखीवचन—तन की छवि वसन सों मिलि कैं जैसी भई, अनूपम यह अर्थ, सो बैन बचन नहीं बरनि

सकै, आंग की ओप सों आँगी चोली दुरी छपी, आंगी सों आंग दुरै छपै नहीं, आंग ओप आंगी दुरी मीलित, आंगी आंग दुरा-इवे को कारन है, तामैं आंग को दरसन होत है याते तीसरी विभावना—"काहू कारन तें जबै कारज होय विरुद्ध"। किंवा चौथी विभावना जानिये ॥ ११५ ॥

भूषन पहिरत कनक के कहि आवत इहि हेत ।
दरपन के से मोरचे देह दिखाई देत ॥ ११६ ॥

भूषन इति। सखीवचन नायिका सों—भूषन तूं कनक के पहिरति है यह बात तोसो हेतु सों प्यार सों कहिबे में आवति है, भूषन पहिरि न कनक के यह भी पाठ है, कनक के भू-षन मति पहिरो ऐसे जानिये। तेरी देह में भूषन दरपन के मोरचा से देखाई देत है, यह मति जानै जो सखी निन्दा करति है इ-मारे अंग विषें सोभत नहीं है सो तेरी देह की सोभा कों भूषन मैला करत है। विषमालंकार—

"औरि भली उद्यम किये होत बुरो फल आय" ॥ ११६ ॥

मानहु विधि तन अच्छ छवि स्वच्छ राखिबे काज ।
दृग पग पोंछन कौं करे भूषन पायन्दाज ॥११७॥

मानहु इति । सखीवचन नायक सों—सौन्दर्य्य की स्तुति करति है । विधि विधाता ने याके तन की जो अच्छी छवि है ताकों स्वच्छ निर्मल राखिबे के लिये मानो दृग जो हैं नेत्र ताके पग ताकों पोंछन कों भूषन को पायन्दाज करे है, मानो संपूर्न वाक्य में यह ध्वन वाके अंग अति सुन्दर हैं, भूषन सों ।

सोभा बढ़ति है सो नहीं। बिछौना के नजीक पाय पोंछिवे को बिछौना रहै सो पायन्दाज कहावै। जो ऐसो अर्थ करै कि नीच लोग की दृष्टि भूषन पै परति है ताके पाव पोंछिवे को करै है, तो सांचही है संभावना नहीं बनै उत्प्रेक्षा अलंकार नहीं होय फेरि दृष्टि को पाव ठहरावनो चाहिए, तामें धूरि लागी ठहरावनो चाहिए, मानों पूर्वार्द्ध में उत्तरार्द्ध में लगाइए, क्रिया के आगे मानों को अन्वय यातें, अनुक्तास्पदवस्तु उत्प्रेक्षा, भूषन पायन्दाजरूपक,

"उत्प्रेक्षा सम्भावना वस्तु हेतु फल लेखि।
वस्तु द्विविधि उक्तास्पद अनुक्तास्पद पेखि॥
हेतु सुफल सिद्धास्पद असिद्धास्पद मानि।
पृथक पृथक इति को उत्प्रेक्षा पहिचान" ॥ ११७॥

सोनजुही सी जगमगे अँग अँग जोबनजोति ।
सुरँग कुसूम्भी कञ्चुकी दुरँग देह दुति होति ॥११८॥

सोनजुही सी इति। सखीबचन नायक सों—ताके अंग अंग के विषें जोबन की जोति सोनजुही पीत चँबेली सी जगमगे है, किंवा अंग विषें जो है जोवन औ जोति तासों नायिका सोनजुही सी जगमगाति है। सुन्दर है रंग जाको ऐसी जो कुसुंभी कुसुंभ सों रंगी चोली ताके प्रतिबिम्ब सों देह की दुति दोय रंग होति है, पीत और लाल। किंवा, देह की दुति सों कंचुकी दुरंगहोति है। अंग जोति उपमेय, सोनजुही उपमान, सी वाचक, जगमगाबो धर्म ॥ ११८॥

छप्यौ छबीलो मुख लसै नीले आँचर चीर ।
मनो कलानिधि झलमलैं कालिन्दी के तीर ॥११९॥

छप्यो इति। सखीवचन नायक सों—नील चीर के आँचा सों छप्यो ढक्यो, छबीलो सुन्दर जो है मुख सो लसै सोभै है। मानो कलानिधि जो है चन्द्रमा सो कालिन्दी श्रीजमुनाजी ताकि नीर में झलमलाति है। वस्तुत्प्रेक्षा ॥ ११९ ॥

लसै मुरासा तियश्रवन यों मुकुतनिदुति पाय।
मानो परस कपोल के रहे स्वेदकन छाय ॥१२०॥

लसै इति। सखीवचन किंवा नायकवचन नायिका सों—हे तिय तेरे श्रवन में कान में मोरासा जराऊ ताकी तरहकी जानिये हीनपद दूषन, विहारी को दोष नहीं। यों या तरह लसै है सोहै है मानो कपोल के परस सों भयो स्वेदरूप सात्विक ताकी कना सों छाय रह्यो है, मुकुता सो खेद विन्दु, परस हेतु खेद की सम्भावना। हेतुत्प्रेक्षा ॥ १२० ॥

सहज सेत पचतोरिआ पहिरें अति छवि होति।
जलचादरि के दीप लौं जगमगाति तनजोति ॥१२१॥

सहज सेत इति। सखीवचन नायिका सों—सेत जो है पचतोरिआ वस्त्र जातिविशेष अति महीन होत है, सारी ताके पहिरें सहजहीं भूषनविशेष नहीं पहिरें तो भी अति छवि होत है, जलचादर के दीप लों, पानी की चादरि छूटै है ताके पीछे ताख रहे है तामें दीआ राखै है, ताकी तरह तन की जोति जगमगाति है। इहां पूर्णोपमा। नायिका उपमेय, जलचादरि उपमान, लों वाचक जगमगाति धर्म ॥ १२१ ॥

सालति है नटसाल सी क्यौंहू निकसति नांहि ।
मनमथनेजा नोक सी खुभी खुभी जियमांहि ॥१२२॥

सालति इति। नायिका सों पूर्वानुरागी नायक को हकीकति सखी कहति है। 'खुभी खुभी जिय माहि' खुभी जो तेरो कर्न-भूषन सो नायक के जीव में खुभी है गड़ी है। अङ्ग में टूट्यौ तीर सो नटसाल सी सालति है, कोई तरह निकरति है नाहीं, कैसी है मनमथ जो काम ताको जो नेजा ताकी नोक अग्रभाग सोहै। किंवा, मनमथ को वान प्रसिद्ध है नेजा प्रसिद्ध नाहीं, प्रसिद्ध विरुद्ध दोष है, तो ऐसो अर्थ जानिए मन कों मथै पीड़ा देइ ऐसो जो कोई नेजा ताकी नोक सी। पूर्णोपमा॥ १२२॥

अजौं तर्‍योनाई रह्यो श्रुति सेवत इक अंग ।
नाक वास बेसरि लह्यो बसि मुकुतन के संग ॥१२३॥

अजौं तर्‍यौ इति। नायिका नायक रति करैं हैं सो देखि प्रिय नर्म सखी सों प्रिय नर्म सखी कहति है—हे अंग अंग तुल्य सखी, अजौं तर्‍यौनाही रह्यो है, श्रुति सेवति इक एक श्रुति कौं सेवत, एक कान में तरको रहि गई है औरि भूषन छूटि परे हैं, नाक में वास स्थिति बेसरि ने पायो है। 'बसि मुकुतनि के संग' मुकुता के संग में बसि कें, जामें मोती लगे हैं, सखी देखाय कै कहति है। प्रत्यक्ष अलंकार। किंवा, जीवनमुक्त जो हैं भक्त तिनकी प्रसंसा, गुरु शिष्य सों कहति है, 'अजौं अब भी तूं नाहीं तर्‍यौ, रह्यौ श्रुति सेवति इक अङ्ग, अङ्ग तरह, एक तरह सौं श्रुति वेद कौं सेवत रह्यौ। किंवा, एक अङ्ग विषें श्रुति को सेवन रह्यो

वाम मार्ग भी श्रुति में कह्यो है। अक नाम दुख को अक नाम पाप को स्वर्ग में दैत्यनि सों दुख कई वार होत है, नाहीं है, अक दुख जा विषें, ऐसो जो नाक वैकुंठ ताको वास, वेसरि ने पायो। सरि कहिए वरोवरि वेसरि कहिये नहीं वरोवरि को। नाक को वास वेसरि को जो प्योतनि पायौ। मुक्त जे जीवन्मुक्त वैष्णव तिनके संग में वसि कें, दोऊ अर्थ में दोहा क्लिष्ट है। किंवा अज जो ब्रह्मा सो भी अव तईं नहीं तज्यो श्रुति सो सेवत विचारत एक जो है ब्रह्म ताकों, है अंग मिच, संकराचार्य को मत है, ब्रह्मादिक कों तूने ज्ञान नहीं भयो जासों मुक्त होंहि, उत्तरार्द्ध वैसेही जानिए ॥ १२३ ॥ सोरठा।

मङ्गल विन्दु सुरंग मुख ससि केसरि आड़ गुरु ।
इकनारी लहि संग रसमय किय लोचन जगत ॥१२४॥

मंगल द्रति। सखी सों सखीवचन—सुरंग लाल जो रोरी को विन्दु सो मंगल है, मुख सो ससि है, केसरि को जो आड़ तिरीछा तिलक सो गुरु वृहस्पति है, ऐसी जो एक नारी स्त्रीनि विषें मुख्य स्त्री ताकों संग में लहि पाय कै रसमय अनुरागय किये हैं लोचन को जगत कै, सारी राति जागत कैं दूसरा अर्थ मंगल औ ससि को वृहस्पति एक नारी एक नाड़ी में एक राशि में संग में लहि कैं जगत कों रसमय जलमय किए है एतने ग्रह एक नाड़ी में आवें तो वृष्टि होय। रूपक अलङ्कार ॥ १२४ ॥

गोरी छिगुनी अरुननख छला स्याम छवि देय ।
लहत मुकुति रति छिनक ए नैन त्रिवेनी सेय १२५॥

गोरी इति। नायक नायिका कों देखि कें अपने नेत्र सों कहत है—छिनक ए नैन त्रिवेनी सेइ, हे नैन छिनक एक छन भी त्रिवेनो सेइ कें रति जो है रमन सो मुकति ताकों लहत है पावत है, छिगुनी कनिष्टा आँगुरी सो गोरी है सो गंगाजी जानिये। नख अरुन सो सरस्वती छला अँगूठी सो स्याम जमुनाजी है सो सोहत है, आगे त्रिवेनी कही है, तासों गंगा आदि की प्रतीति छिन किए ऐसो भी पाठ है। नायिका के नैन त्रिवेनी है तीनि रंग नेत्र में है याते नैन जो है त्रिवेनी ताकों सेय कें, बहुत काल लों देखि कै रतिरूप जो मुकुति ताका पावत है, कैसी नायिका है गोरी जाकी छिगुनी है, इत्यादि जानिए इहां नायक वचन सखी सों। रूपकालङ्कार ॥ १२५ ॥

(तरिवन कनक कपोल दुति विच बिचहीं जु बिकान।)
लाल लाल चमकत चुनी चौका चीन्ह समान॥१२६॥

तरिवन इति। सखीवचन नायिका सों—कनक को तरिवन तरकी, औ कपोल गाल ताकी द्युति के बीच बीचही बिकानो, बीचही बिकी, यह लोकोक्ति है। किनहूं मोल कराइवे पायो नहीं, लालि लालि चुनी चमकति है चोका दाँत काचिह्न समान। इहां मीलित अलङ्कार। "मीलित सो सादृश्य तें भेद लखै न लखाय"। सादृस्य सो न, पूर्नोपमा। किंवा, सखी सों सुरत चिन्ह दुरावति है रूपगर्विता गुप्ता नायिका भी जानिये॥

सारी भारी नील की ओट अचूक चुकै न।
मो मन मृग करवर गहैं अहे अहेरी नैन ॥१२७॥

सारी इति। नायक को वचन नायिका सों। किंवा सखी सों—नील की रँगी सारी सो है डारि, हरिन जो पकरत हैं सो आपना अंग में डार पात बाँधत है, ताकी ओट अचूक है चूकत नहीं है, दूसरे कहे सों अचूकपनो निपट दृढ़ भयो। किंवा अचूक बेतकसीर ताकों भी चूके नाहीं ताहि पकरत है, हमारो जो है मन सो है मृग करबर जातिविशेष। किंवा कार.बर बल करि गहे हैं। किंवा र ल एक है कल सों बल सों गहत है, अहेरी सिकारी नैन है, कोई कहत है, अहे नायिका की सखी अहेरी सिकारी नैन है, कोई कहत है, अहे यह पुरुष की बोलनि नहीं, अहे बहुत ठौर में आवत है, 'अहे दृहेंड़ी जिनि छुवै'। रूपकालङ्कार है॥ १२७॥

तन भूषन अंजन दृगनि पगन महावर रंग। नहिं सोभा को साजिए कहिवेही को अंग॥१२८॥

तन इति। सखीवचन नायक सों—तन विषे भूषन, दृगनि में अंजन, पावनि में महावर को रंग, नहिँ सोभा कों साजिये, ए सब सों वाकी सोभा नहीं साजिये नहीं बनायिये है, कौन वाको अंग कहिए सराहिए। सहज की जो सोभा है सो कही नहीं जाति है, कहिवेही को अंग, यह भी पाठ है, अंग में कहिवेही को है, इनसों सोभा नहीं। किंवा नहीं जाके मुख की सोभा कों करति है तो अंग कों न कहिए नाहीं कहवी सोभा कों बढ़ावै है। प्रमान। "ना कहिवे पर वार्यो है प्रान कहा अब वारिहै हां कहिवे पर"। मीलित अलङ्कार। भूषन आदि अङ्ग के रूप में मिलि जात हैं॥ १२८॥

पाय तरुनिकुच उच्चपद चिरम ठग्यो सब गाँव ।
छुटै ठौर रहिहै वहै जु है मौल छबि नाँव ॥ १२९ ॥

पाय इति । नायकवचन गुंजा की माला सों—हे चिरमि हे गुंजा, तरुनी को जो कुच सो है उच्चपद उच्चस्थान ताकौं पाय कैं, तैं सब गांव को ठग्यौ, तेरी ऐसो सोभा बढ़ी है जो कोई देखत है सो जानत है, कोई बहुमूल्य जवाहिर है, यह ठौर छुटें पर जो तुमारो मोल नाम चिरमी करजनी वहै रहि है, गुंजमाल नाम जातो रहैगो। इहां उल्लास अलङ्कार। कुच के गुन सों चिरमी में गुन। "गुन औगुन जब एक तें औरि धरै उल्लास"। कोई नीच बड़े ठिकाने पहुंचै तापैं भी लगै है। अन्योक्ति जानिये ॥

उर मानिक की उरबसी डटत घटत दृग दाग ।
झलकत बाहिर भरि मनो तिय हिय को अनुराग ॥

उर इति। नायक की उक्ति नायिका सों—तेरे उर विषें जो मानिक लाल मनि ताकी उरबसी चौकी ताकौं डटत अँटकार करत निरेखत दृग की जो दाग दाहवि रहै सों उपज्यो है सो घटत है छीन होत है । हे तिय, हमें विषयक जो तेरे हिय में अनुराग है, ताकौं भरि कैं ले कैं मानो बाहिर झलकत है, सखी उक्ति नायक सों होय तो, तिय की तुमें विषयक जो हिय कौ अनुराग है ताकौं भरि कैं बाहिर झलकति है, औरि वैसेंही जानिये। किंवा।

"धीराधीरा कहत है मध्या ताहि बनाय।
गुप्त प्रगट जाकौ कछू कोप पिछान्यो जाय"।

नायक सों धीराधीरा को वचन, सो तिय के गर की उरबसी पहिरें देखि कैं, आधा दोहा में गुप्त आधा दोहा सें कोप प्रगटत है। इहां वस्तूत्प्रेक्षा—

"ग्रौरि वस्तु करि वस्तु की संभावन जहं होय।
उक्तानुक्तास्पद तहां वस्तूत्प्रेक्षा जोय॥

एक वस्तु की दूसरी वस्तु करि जहां सम्भावना ठौर कीजिए सो उत्प्रेक्षा। सो होय तरह की एक उक्तास्पदा, एक अनुक्तास्पदा, उक्तास्पदा को अर्थ, सम्भावना करिवे की ठौर, जाहि विषें दूसरी वस्तु की सम्भावना कीजै सो ठौर जाको कहि दियो होय जाकी संभावना कीजिये सो सम्भाव्य मान। अनुक्तास्पदा। जाकी संभावना कीजिये सो होय, जा विषें संभावना कीजिये सो न होय, जहां क्रिया आगे वाचक आवै तहां अनुक्तास्पदा जानिए। खैंचत सी चितवनि चितें इत्यादि विषें, मानिक की उरबसी विषें अनुराग वस्तु की संभावना, उरबसी संभावना विषय, अनुराग सम्भाव्यमान॥ १३०॥

जरी कोर गोरे वदन बढ़ी खरी छबि देख।
लसति मनौ बिजुरी किए सारद ससि परिवेष॥

जरी इति। सखीवचन नायक सों, किंवा, नायकवचन नायिका सों—जरी की जो कोर किनारी तासों गोरे मुख में अति वढ़ी जो है छवि ताकों तूं देखि। सरद को जो चन्द्रमा ता. परिवेष मण्डल किए मानो विजुरी लसति है, इहां वस्तूत्प्रेक्षा मुख वस्तू विषें कोर वस्तू में चन्द्र विजुरी की संभावना॥१३१

देखति सोनजुही फिरति सोनजुही से अंग ।
दुति लपटनि पट सेतहू करत बनौठी रंग ॥१३२॥

देखति इति । नायिका बाग देखै है सखी नायक सों छवि सुनाय कैं ल्यायो चाहति है । नायिका सोनजुही पीत चँबेली देखति फिरति है, सोनजुही से जाके अङ्ग हैं, दुति को जो है लपटन तासों सेतहु जो पट है ताकों बनौठी रंग करति है, बनौठी रंग कपास को फूल समान रंग। इहां तद्गुन अलङ्कार है, आपनो गुन तजि आन को गुन ले है ॥ १३२ ॥

तीज परब सौतिनि सजे भूषन बसन सरीर ।
सबै मरगजे मुँह करी वहै मरगजे चीर ॥ १३३ ॥

तीज इति । सखी सों सखीवचन—तीज परब में सौतिनि भूषन बसन सों शरीर कों साजे सिंगारे । "वहै मरगजे चीर" वहै नायिका ने मरगजे मैले चीर सों नायक के प्रस्वेद सों भयो मैलो तासों सब सौतिनि कौं मैला मुंह को करी किंवा यह रूप के गर्व तें सिंगार नहीं कियो तौ भी ऐसी सोभा भई कि सौति सहि नहीं सकी, इहां ईर्षा संचारी व्यंग, असंगति अलङ्कार। जो मलिन पट पहिरै सो मलिन, सौति विषै मालिन्य, मरगजो चीर सौति के मुख मलिन करिबे को कारन नहीं तासों कार्य भयो, दूसरी विभावना भो जानि परति है ॥ १३३ ॥

पचरँग रँग बेंदी बनी उठी जागि मुखजोति ।
पहिरै चीर चिनौठिया चटक चौगुनी होति ॥१३४॥

पचरँग इति । नायिका सों सखी की उक्ति, किंवा नायक

की–रंग नाम तरह को भीहै, पँाच रंग अर्थात् पांच तरहकी वेंदी वनी है, तासों मुख की जोति जगि उठी है, लोकोक्ति है। बहुत प्रकासमान भई है, किंवा, पचरंग रंग कहि सो लच्छना करि पँच गुनि जानिए, नाहीं तो पचरंग वेंदो एतनाही कहते, फेरि चुनौठिया चीर जामें ललाई औ स्यामता है सो पहिरें, चटक चमत्कार चौगुनी होति है। वेंदो सों मुख में पचगुनी चीर के वानिक सों चौगुनी भई, पांचचौका वीस, वीस विस्वा की चटक यह अर्थ। अनुरागुन अलङ्कार—"निजगुन ज्यौं परसंग तें चढ़ै सुअनुगुनजान" चीर सौं चौगुनी भई॥ १३४॥

वेंदी भाल तँबोल मुख सीस सिलसिलेवार।
दृग आँजे राजे खरी एही सहज सिंगार॥ १३५॥

वेंदी दूति। सखी नायिका कौं अभिसार करावे है, तूं वहुत सिंगार काहे कौं करति है तूं योंही सुन्दरी है, लिलार में वेंदी, मुख में पान, सीस पै सिलिसिले चीकने वार, दृग अञ्जन, दिए है। एही जो सहज के सिंगार हैं तासौं तूं खरी अति राजै है, सोभै है। जाति अलङ्कार है॥ १३५॥

हौं रीझी लखि रीझिहौ छविहि छबीले लाल।
सोनजुही सी होति दुति मिलति मालती माल॥१३६॥

छवि वर्नन—हौं रीझी दूति। दूतीवचन नायक सों—हे छवीले लाल हौं मैं तो रीझी तुमभी वाकी छवि लखिकै रीझौगे, वाके आंग में मिलत कै लागत कै मालती चँवेली की जो मा.. है ताकी दुति अङ्ग की दुति सों सोनजुही पीत चँवेली की

द्युति है । इहां तद्गुन अलङ्कार—"तद्गुन तजि गुन आपनो संगति को गुन लेइ" । मालती की माल ने अङ्ग की पीतता लीनी ॥ १२६ ॥

झीने पट में झिलिमिली झलकति ओप अपार ।
सुरतरु की मनु सिन्धु में लसत सपल्लव डार॥१३७॥

झीने इति। नायक की उक्ति नायिका सों, किंवा सखी की उक्ति नायक सों—झीने पट में झिलिमिली कर्नभूषन जाकों पीपर पत्ता भौंटना कहत है, सो झलकति है, अपार ओप कान्ति सों, सुरतरु पारिजात, मन्दार, सन्तान कल्पवृक्ष, हरिचन्दन ताकी पल्लवसहित डार मानो सिंधु कहिये समुद्र में लसति है । उक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा है-"और वस्तु करि वस्तु की सम्भावन जहँ होय। उक्तानुक्तास्पद तहाँ वस्तूत्प्रेक्षा जोय" ॥ झीने पट में समुद्र की संभावना, झिलिमिली में पल्लव डार की सम्भावना ॥१३७॥

फिरि फिरि चित उतही रहत टुटी लाज की लाव ।
अंग अंग छवि झौंर में भयो भौंर की नाव ॥१३८॥

फिरिफिरि इति। नायिका की किंवा नायक की हकीकति एक सखी दूसरी सखी सों कहत है, फेरिफेरि चित उतही नायिका की ओर किंवा नायक की ओर रहति है। गुरुजन की लाज की जो लाव रस्सी सो टूटी अङ्ग अङ्ग मे जो छवि को झौंर समूह तामे चित्त है सो भौंर में की नाव भयो है। रूपक अलङ्कार॥१३८॥

केसरि कै सरि क्यों सकै चंपक केतिक रूप ।
गातरूप लखि जात दुरि जातरूप को रूप ॥१३९॥

केसरि इति । नायिका सों, नायक की औ सखी की उक्ति किंवा सखी की उक्ति नायक सौं—केसरि जो है, सो रंग की, सरि कहिए बराबरी क्यौं करि सकै, काकुस्वर सौं न करि सकै, चम्पा की केतिक कितनो रूप है, काकुध्वनि सों कछु नहीं, 'चम्पक कितक अनूप' यह भी पाठ है। गात को रूप देखिकैं जातरूप कनक ताको रूप दबि जात है, प्रतीपालङ्कार—"अनआदर उपमेय तें जब पावै उपमान" केसरि, चंपक, जातरूप ने अनादर पायौ ॥ १३९ ॥

वाहि लखे लोयन लगै कौन जुवति की जोति ।
जाके तन की छाँह ढिग जौन्ह छाँह सी होति॥१४०॥

वाहि लखैं इति । नायक को बचन पूर्वानुराग में सखी सों, वा नायिका कों देखे सों लोयन नेत्र लगि जात हैं, वासौं छूटत नहीं हैं, वा जुवती की जोति कौनि तरह की है सो कहिबे में नहीं आवति है। जाके तन की छाया के ढिग नजीक जोन्ह कहिये चांदनी किंवा पूरब में जोन्ह तारा को भी कहति हैं, सो छाया सी होति है। जोन्ह उपमेय, छाया उपमान, सी वाचक, साधारन धर्म मलिनता को लोप होय है। धर्मलुप्ता उपमा । किंवा, स्वकीया नायिका परकीया सपत्नी को देखि कैं सखी सौं कहति है, वाहि देखें हमारे नेत्र लगै हैं बरै हैं, कौन तरह को वा जुवती की जोति कांति है, न कछू, यह अर्थ। छाया सों अर्थात् छाया पड़ से तो जोन्ह मैली होसकी है, छाया के नजीक, व [illegible] मलिन । जोन्ह छाया सी मैली होति है ॥ १४० ॥

कहि लहि कौन सकै दुरी सोनजाय में जाय ।
तन की सहज सुवासना देती जौं न बताय॥१४१॥

कहि लहि इति। नायक को वचन सखी सों–सोनजाय में पीत चँवेली में, जाय कें दुरी छिपी थी तब याको कौन लहि सकै थोपाय सकै थौ, हे सखि यह तूं कह। किंवा कौन कहि सकै थो जो फलानी ठौर में है औ कौन पाय सकै थौ, तन की जो याकी सहज सुवासना है सो जौ वताय नहीं देती, इहां उन्मीलित अलङ्कार—"उन्मीलित साद्दश्य तें भेद फुरै तब मान"। तन की सुवास तें भेद फुर्यौ ॥ १४१ ॥

हरि छबि जल जब तें परे तब तें छन बिछुरैं न ।
भरत ढरत बूड़त तरत रहत घरी लौं नैन ॥१४२॥

हरि छवि इति । सखी सों नायिका की हकीकति सखी कहति है। हरि की जो छवि है सो जल है तामें जबतें नायिका के नैन परे तब तें छन भी विछुरत नहीं हैं, वही रूप में आसक्त हैं, आंसू भरे हैं ढरत को अर्थ आंसू ढारत हैं, आंसू में बूड़ि जात हैं, आंसू में तरत हैं, घरी की तरह रहत हैं। किंवा सखी नायिका सों कहति है, हरि के नैन तेरी जो छवि सो जल है तामें जब तें परे, ऐसे जानिए। घरी उपमान, नैन उपमेय, लौं वाचक, भरिवो आदि धर्म। पूर्णोपमा॥ १४२ ॥

रहि न सक्यौ कसि करि रह्यो बस करि लीनौ मार।
भेदि दुसार कियो हियौ तनदुति भेदै सार ॥१४३॥

रहि न इति। सखी सिच्छा देति है, तासों नायिका को

वचन—हियो मन हमारे नायक सों मिलिवे कों नहीं चाह्यौ, कस करि खैंचि करि रह्यौ, पै रहि नहीं सक्यौ। क्यौं मार जो है काम ताने वस करि लीनौं, नायक की तनद्युति ने भेदि कैं दुसार कियौ, वारपार कियौ तहां पूछै जो सखी तनदुति में एतनो जोर है, तहां कहति है तनदुति तौ सार जो कठोरता कौं भेदै यह अर्थ, जड़ कौं भी भेदै तौ मन को कहा वात है? विभावना अलङ्कार—"जबैं अकारन वस्तु तें कारज प्रगट"। लखात तनदुति भेदिवे को कारन नहीं ताने भेद्यौ ॥ १४३ ॥

पहिरतहीं गोरे गरे यौं दौरी दुति लाल।
मनो परसि पुलकित भई मौलसरी की माल ॥१४४॥

पहिरत इति। नायक ने माला पठाई है सो हकीकति सखी कहति है। हे लाल। मौलसिरी की माला गोरे गरे पहिरतही यौं दुति दौरी सोभा भई मानो तुमें परसि कैं पुलकित भई, तुमारो सम्बन्ध माला सौं है ताके स्पर्श तें सात्विक भयो, यौं छवि दौरी। किंवा, मानो वाके अङ्ग कौं परसि कैं माला पुलकित भई।

जहँ अहेतु को हेतु करि सभावन तिहिँ ठौर।
सिद्धासिद्धास्पद तहां हेतूत्प्रेक्षा और॥

पहिलो अर्थ में माला के स्पर्श सों उपजी है जो [illegible] में नायक को स्पर्शरूप जो हेतुता को संभावन। आस[illegible] हेतूत्प्रेक्षा। आस्पद संभावना को विषय जामें संभावना करिए

कहा कुसुम कह कौमुदी कितिक आरसीजोति।
जाकी उजराई लखे आँखि ऊजरी होति ॥ १४५

कहा कुसुम इति। सखीवचन नायक सों—कुसुम कहा कछु नहीं, कौमुदी चांदिनी कहा, कछु नहीं, आरसी की तो कितनी जोति है, वाके अङ्ग ज्योति के आगे जाकी उज्वलता सुद्धता देखि आंखि उजरी होति है, आंखिन में प्रकाश होत है। किम्बा, उज्वल नाम शृङ्गार को है, आंखि शृङ्गाररूप होति है। इहां प्रतीपालङ्कार—"अनआदर उपमेय तें जब पावत उपमान"। कुसुमादि को अनादर है ॥ १४५ ॥

कंचनतन घन बरन वर रह्यो रङ्ग मिलि रङ्ग ।
जानी जाति सुबासहीं केसरि लाई अङ्ग ॥ १४६ ॥

कञ्चन इति। घन यह पाठ है तहां सखी वचन—कांचन सौं तन को घन कहिए बहुत बरन रंग सो वर श्रेष्ट है यातें केसरि के रंग सों रंग मिलि रह्यो सुबासही तें अंग में केसरि लगी जानि परति है। धनि यह भी पाठ है, नायक किंवा सखी नायिका सों कहति है, हे धनि नायिके, कांचन सो तेरो गोरो तन सरीर है, बरन रंग श्रेष्ट है, किंवा बरन वर, बरन श्रेष्टनि नियाकानि तें तूं वर श्रेष्ट है, किंवा वर जो है तेरो दूलह ताको तोहि तें औरि कोई वर श्रेष्ट नायिका नाही है, सखी कहति है, तेरे रंग सों केसरि को रंग मिलि रह्यो है। तूं अंग में केसरि लगाई है। सो सुवासही तें जानी जाति है, किंवा तेरे अंग में सुवास है केसरि में बास है, ऐसें भी जानिए, रंग सों नहीं जानि जाति है, उन्मीलित अलंकार—

"उन्मीलित सादृश्य तें भेद फुरै जहँ भासि"। १४६ ॥

हैं बरोबरि दुति के हैं, परस सों छूए सौं पहिचाने जात हैं। भूषन कर में छूवत कौं करकस कठोर लागत हैं, उन्मीलित अलंकार है—

"उन्मीलित साहश्य तैं भेद करै तब मान" करकस यह भेद ॥ १५१ ॥

करत मलिन आछी छविहिं हरत जु सहज प्रकास।
अङ्गराग अङ्गनि लग्यो ज्यौं आरसी उसास ॥१५२॥

करत इति। रूपगर्विता को वचन—पिछले दोहा में जैसें वचन है तैसें, आछी जो छवि है ताकौं मलिन करत है, स्वभावही तैं जो है अंग को प्रकास ताको हरत है, अंगराग केसरि चन्दन सों अङ्गनि में ऐसो लग्यो है, जैसे आरसी में उसास, मुख की वाफ लागै। किंवा, सपत्नी को लगायो नायक के अंग में अँगराग देखि कें सखी सों नायिकावचन। विषमाऽलङ्कार— "औरि भलो उद्यम किए होत बुरो फल आय"। अँगराग सोभा के लिये लगायो सो सोभा बिगारत है औ उपमा भी है, अँगराग उपमेय, आरसी उपमान, ज्यौं वाचक, मलिन करनो, प्रकास हरनो साधारन धर्म ॥ १५२ ॥

अङ्ग अङ्ग प्रतिबिम्ब परि दर्पन से सब गात।
दुहरे तिहरे चौहरे भूषन जाने जात ॥ १५३ ॥

अंग अंग इति। सखी को वचन नायक सों, किंवा, दोउन के वचन नायिका सों—दर्पन से साफ गात हैं, परि की ठौर परे मानिए। अंग अंग में प्रतिबिम्ब परे हैं तामें एक भूषन दोहरे तिहरे चौहरे जाने जात हैं, कहूं प्रतिबिम्ब को प्रतिबिम्ब परिकें

दर्पन से इहां से को अर्थ मानो भी भासै है तासों । उक्तास्पद वस्तूत्प्रेक्षा। गात मानो दर्पन है, गात वस्तु विषैं दर्पन की सम्भावना उपमा लगावैं तो उपमा भी लगि जाय ।

औरि वस्तु करि वस्तु को सम्भावन जहँ होय।
उक्तानुक्तास्पद तहां वस्तुप्रेक्षा जोय ॥ १५३ ॥

अङ्ग अङ्ग छवि की लपट उपटति जाति अछेह ।
खरी पातरीऊ तऊ लगै भरी सी देह ॥ १५४ ॥

अङ्ग अङ्ग इति। सखी को वचन नायक सौं, किंवा दीज के वचन नायक सौं—अङ्ग अङ्ग विषैं छवि की जो लपट ज्वाला, किंवा, ज्वाल सारीखा प्रकास, सो उपटत जात है उघरत जात है, अछेहै, छेह कहिए अन्त, अछेह कहिए अनन्त, खरी अति पातरी है तऊ तौ भी, छवि सौं भरी सी पुष्ट सी देह लागति है मानो पुष्ट है । इहां भरी क्रिया शब्द है ताके आगे सी वाचक है तासौं, अनुक्तास्पदवस्तुत्प्रेक्षा । जा विषै संभावना करिये है सो नहीं कह्यो ॥ १५४ ॥

रञ्च न लखियत पहिरियै कञ्चन से तन बाल ।
कुँभिलाने जानी परै उर चम्पे की माल ॥ १५५ ॥

रंच न इति। सखी की उक्ति नायिका सौं–है बाल कंचन से रे तन में चंपा की माला, पहिरिएँ नाम पहिरे सौं, रंच थोरी ी न लखियतु है नहीं जानी जाति है, जब कुंभिलाति है तब र में जानी परै है–"उन्मीलित सादृश्य तें भेद फुरै तब मान"। भिलाइबो भेद ॥ १५५ ॥

भूषनभार संभारिहै क्यौं यह तन सुकुमार ।
सुधे पाय न परत धर सोभाही के भार ॥ १५६ ॥

सुकुमारता वर्णन—भूषन इति। रूपगर्विता, किम्वा नायक को वचन किम्वा सखी को वचन नायिका सों, यह जो सुकुमार तन है सो क्यों करि कै भूषन के भार कों सँभारिहै, धारन करिहै, धर कहिये धरा पृथ्वी तामें सूधा पाय नहीं परत है, सोभाही के भार सों, विधाता ने अति सुन्दरता राखी है ताके भार सों, किम्वा स्त्री की सोभा कुच नितम्ब है ताके भार, "श्लेष काकु करि होत जहँ औरि अर्थ को ज्ञान। वक्रोकति ताकों कहत जो जगमें सुज्ञान" कंठ की ध्वनि विशेष सो काकु, भूषनभार 'सँभारिहै यह अर्थ, सूधे पाय न परत तेरी टेढ़ी गति है, वक्रोक्ति अलङ्कार॥

न जक धरत हरि हिय धरै नाजुक कमला बाल ।
भजत भार भय भीत ह्वै घनचन्दन वनमाल॥१५७॥

न जक इति। सखी नायिका की सुकुमारता नायक सों कहति है—हेहरि नाजुक कोमल जो कमला लच्छिमी सदृस बाल है; सो घन चंदन वनमाल, घन बहुत जो चंदन किंवा घन कहिए घनसार कपूर औ चंदन औ वनमाला सो हिय पै हृदय पै धरे सो जक कल नहीं धरति, भार बोझ ताको भय सों भाजति है, ऐसी सुकुमारि है । कमलासी बाल इहां वाचक सीताको लोप है, बाला उपमेय, कमला उपमान, नाजुक साधारन धर्म, लुप्तोपमा अलंकार। दूसरो अर्थ। किंवा सखी नायक की बिरह दसा नायिका सों कहति है, हे नाजुक कमला बाल, बिरह में

दुखदाई जानि कैं घन चंदन वनमाल कौं हृदय पैं धरत कै हरि जो है जक नहीं धरत है। भार के भय सों भीत होय कै भाजत है, ऐसे विरह मे क्षीन भए हैं। तीसरो अर्थ॥ नायिका को विरहनिवेदन, सखी नायक सों कहति है, अर्थ वही, हे हरि घन चन्दन वनमाल हिय विषें धरैं सो वह नाजुक कमला वाल जो है सो, वाकौं यह सव गरम लागत है विरह मैं, भार के भय सों भार कहिए चूल्हा ताकि भय सों भीत ह्वै भजति है। घन चन्दन वनमाल कूं चूल्हा समान जानति है। चौथो अर्थ॥ सखी सों सखीवचन—हे सखि हरि आपने हृदय में नाजुक कमला वाल कौं धरे हैं, "घन, चन्दन वनमाल" हृदय पै धरैं जक कल नही धरत है, भार के भय सों भजत है, हमारे हृदय में नाजुक नायिका है, वा पर भार परैगो। पांचवां अर्थ॥ सखी सों सखी वचन—हे सखी नाजुक कोमल जो है हरि ताकौं कमला लक्ष्मी जो है वाला सो हृदय में धरिकैं जक नहीं धरति अति प्रीति हमारे प्रीतम पै भार परैगो तासौं इन सवसों भजति है, लक्ष्मीजी ने हरि को हृदय में धर्‌यो। षष्टार्थ॥ गुरु शिष्य सों कहत है—भक्त जो है सो हरि कौं श्री कमला लक्ष्मीहूं तें नाजुक सुकुमार वाला श्रीराधिका जो ताकौं हृदय मे धरैं कोई विषय सुख में जक विश्रास नहीं धरति है, केवल उनहीं के रूप में मग्न होय रहे हैं, घन चन्दन वनमाल, आदि जो उपभोग सामग्री हैं तासौं तो भार चूल्हा के भय सों जैसे भीत होय भाजत है। अर्थ यह उपभोग कौं भार समान जानत है॥ १५७॥

अरुन वरन तरुनी चरन अँगुरी अति सुकुमार ।
चुवत सुरँग रँग सों मनो चपि विछुवनि के भार ॥

अरुन वरन इति । सखीवचन नायक सों—आछिप्त दोहा है, अरुन रंग नायिका के चरन हैं अँगुरी अति सुकुमार है, विछिअनि के भार सौं चपि कैं सुरंग लाल आंगुरी ताकी रंग सौ चुवत है मानो, किंवा सुरंग आंगुरी को विसेषन नहीं कियो, लाल रंग चुवै है मानौं, सोपाद पूर्नार्थ। मानो की अन्वय क्रिया सौं है। "अनुक्तास्पदा वस्तूत्प्रेक्षा— ॥ १५८ ॥

छाले परिवे के डरनि सकै न हाथ छुआय ।
झिझकति हिये गुलाव के झँवाँ झँवैयत पाय ॥१५९॥

छाले इति। सखी वचन नायक सों—छाला फोरा ताके परिवे के डर सों हाथ छुवाय नहीं सकै है गुलाब के झांवां सों जब पाय झँवैयत है धोवित है तब भी हिए मन में किंवा मन वारिकैं झिझिकात, अर्थ यह सत्यही झिझिकति है, छाला परिवे को डर हेतु, हाथ कौं नहीं छुवावनो हेतु मान। हेतु अलंङ्कार—

"हेतु अलंकृति होत जहँ कारन कारज संग" ॥ वि॥१८।

मै वरजी कै वार तू इत कत लेति करौट ।
पँखुरी लगे गुलाव की परिहै गात खरौट ॥१६०॥

मै वरजी इति। सन्मुख नायिका नायक सोए हैं, तकिआ के दोऊ ओर गुलाव के फूल धरे हैं, नायकके मुख सों कसाध ... और ना-यिका को नाम आयो है। तव नायिका मान करि ... रि कैं सोई है तहां अंतरंग प्यारी सखी मरम पाय कैं मान छोड़ावति है, मैं बा...

बार तोकौं वरजी है, इतकहिये या और कौं कत को अर्थ काहे को करोट लेत है, तूं असी सुकुमार है, गुलाब की पंखुरी लागे सौं गात में खरोंट परिहै, खरोट को अर्थ इहां साट, किंवा आधा दोहा मैं सखी कहरत है मैं वरजी कइ बार तोहि इत काहे कौं करोट लेति है, तब गर्विता कहति है, हमारे गात में गुलाब की पखुरी लगे सौं कहा गात मैं खरोट परैगौ, व्यङ्ग बचन, कोई २ ऐसे भी कहति हैं कि नायक नायिका पै गुलाब की पंखुरी चलायौ चाहत है, तब नायिका हाथ को औट करै है। तहां सखीवचन इतें क्यौं तूं कार की औट लेति है। औरि अर्थ याही तरह, पहिले अर्थ मे मान छुड़ानौं, रचना सौं कहति है। पर्यायोक्ति अलंकार—

कन देवौ सौंप्यौ ससुर वहू थुरहथी जानि।
रूप रहचैं लगि लग्यो माँगन सब जग आनि ॥१६१॥

रूप वर्नन, कन देवौ इति। सखी सौं सखी वचन, नायिका के ससुर ने वधु कौं थोरहथी जानि कैं याके हाथ में थोरो अन्न घांटे है छोटे हाथ हैं छोटे हाथ सौं ज्यौं देने कौं सीखैगी तौ आगे वड़े हाथ सौं भी देइगी, कन देवो भिक्षा देवौ सौंप्यौ तूंही भिक्षादे, रूप को रहचटो चाह तासौं लगि कैं सब जगत आय कैं मांगिवे लग्यौ, नायिका कौं दाता करिवे कौं कन देनो सौंप्यौ जगत मांगिवे लग्यौ, प्रहर्षन अलंकार—

"तीनि प्रहर्षन जतन बिन वांछित फल को होय"।

कोई यौं भी अर्थ करत हैं कि—ससुर वाकौ कृपण है, यह थुरहथी है थोरो देइगी, इष्ट थोरो दान ताकौ उपाय किए वहुत

देनो पर्यौ । विषमालंकार—"औरि भलौ उद्यम किए होत बुरो फल आय ॥ १६१ ॥

त्यों त्यों प्यासेई रहत ज्यों ज्यों पियत अघाय ।
सगुन सलोने रूप की जनि चख तृषा बुझाय ॥१६२॥

त्यौं त्यौं इति । परकीया नायिका, किंवा नायक की हकीकति सखी सौं—सखी कहति है, कि ज्यौं ज्यौं रूप कौं अघाय कैं पियत हैं, सादर देखि कैं तृप्त होत हैं तो भी प्यासेई रहत हैं, दंपति देखिवे की चाह सौं भरेई रहत है, सगुन मोहनादि गुन सहित हैं सलोनो लावन्य सहित रूप, जनि कौ अर्थ ताकी जो है तृषा चाह सो चख मै नेत्र मैं नहीं बुझाय है नहीं मिटै है। किंवा कदाचित जनि मिट जाय लोकप्रसिद्ध भी है लौंन सौं प्यास बहुत लागै है, अघाय कैं पीवत हैं प्यासे रहत हैं, यह विरोध सौ है। विरोधाभास अलंकार—

"भासै तहां विरोध सौ वहै विरोधाभास" ॥ १६२ ॥

रूप सुधा आसव छक्यो आसव पियत बनै न ।
प्याले ओठ प्रिया बदन रह्यौ लगाये नैन ॥ १६३॥

रूप सुधा इति । सखी सौं सखीवचन—सुधा सो आनन्दकारी जो है वाको रूप सोई है आसव मदिरा को भेद तासौं नायिक छक्यौ है; यातें आसव पियत कै बनै नाहीं, अजीर्न होय प्याला मैं तो ओठ लगाय रह्यो, प्रिया के बदन मैं नैन लगाए रह्यो स्तम्भ सात्विक भयो । तुल्ययोगिता ॥ उपमाननि की किंवा उपमेयनि की जो धर्मनि की एकता; लगाइवो दूनौ ठौर मैं, ओठ नेन उपमेय है ॥ १६३ ॥

दुसह सौति सालै सुहिय गनति न नाह विवाह ।
धरें रूप गुन कौ गरब फिरै अछेह उछाह ॥ १६४ ॥

दुसह इति । सखी सों सखीवचन—संसार में स्त्रीनि कौं सौति दुसह है जीव में सालै है, यह ऐसी है नाह नायक के विवाह कौं नहीं गनति है, खातिर में नहीं ल्यावति है, रूप औ गुन यह दोय वस्तु के गरब कौं धरै है, अछेह अनन्त जो है उछाह उत्साह सहित फिरै है, रूपगुन गर्विता नायिका वा धृतिसंचारी । विभावनाअलङ्कार—"प्रतिवन्धक के होतहू कारज पूरन मानि" । सौति उछाह की प्रतिवन्धक है तो भी उछाह भयौ ॥

लिखन वैठि जाकी सबी गहि गहि गरब गरूर ।
भए न केते जगत के चतुर चितेरे कूर ॥ १६५ ॥

लिखन इति । सखी की उक्ति चितेरा सों—गरूर नाम गर्व कौं औ गरूर गरबी कौं भी कहत है । 'गिरि तें न गरू रहौ गरूर हौ न ग्राहक तें" हे गरूर चितेरा, जा नायिका की सबी को अर्थ चित्र सो गरब गहि गहि कें लिखने वैठे वाकी सूरति नहीं लिखी गई, यातें जगत के कितने चतुर चितेरा कूर वेवकूफ नहीं भए, यातें रूप की अधिकाई, किंवा, सखीवचन नायक सों, हे चतुर तुम वाके रूप में समुझत हौ, सब्द अधिक होय तो अर्थ भी अधिक जानिए, हिंदू चितेरा गरब सौं जानिए, मुसलमान चितेरा गरूर सौं जानिए, औरि अर्थ वैसेंही भए भए यह काकु स्वर सौं वक्रोक्ति अलंकार—"औरि वात में औरिही अर्थ करै जहँ जानि"। श्लेष शुद्ध द्वै भाँति की वक्रोकति उर आनि" ॥ जहां काकु होय तहां मध्यम काव्य जानिए ॥ १६५ ॥

सोरठा।

तो तन अवधि अनूप रूप जग्यौ सब जगत को ।
मो दृग लागे रूप दृगनि लगी अति चटपटी॥ १६६॥

तोतन इति। नायक की किंवा नायिका की उक्ति, सोरठा। तेरो तन अनूप आश्चर्य्य की अवधि ऐसो अनूप दूसरो नहीं, क्यौं करिकै, संपूर्न जगत को रूप सौंदर्य्य तोंही में लग्यौ है, मेरे दृग रूप सौं लगे हैं, औ दृगनि मैं अति चट पटी अति अकुलाति लगी है, तन में रूप लग्यौ है रूप में दृग दृगनि मैं चटपटी।

माला दीपक—अगिले अगिले जोग जहँ प्रथम अधिक गुन होय।
तहां माला दीपक कहत कबि पंडित सब कोय ॥

भाषा भूषन—"दीपक एकावलि मिलें माला दीपक जानि।

लग्यौ यह क्रिया सौं अन्वय, तासौं दीपक एक एकहि ग्रहै एक छोड़ै, तन सौं तौ रूप लग्यौ, रूप सौं दृग लगे, दृगनि सौं चटपटी लगी ॥ १६६ ॥

त्रिवली नाभि दिखाय कै सिर ढँकि सकुचि समाहि।
अली अली की ओट ह्वै चली भली विधि चाहि ॥

हाव बर्नन—त्रिवली इति। सखी की उक्ति सखी सौं—नायक कों चेष्टाही में त्रिवली नाभि दिखाय कैं पीछैं संकोच कौं सँभारि करि संकोच कृत्रिम बनाय कै सिर कौं ढाँपि कै अली जो है नायिका सो भली तरह चाहि कै देखि कै अली सखी की ओट ह्वै कै चली—"होंहि जु काम विकारतें दम्पति के तन आय चेष्टा जे बहु भाँति की ते कहिए सब हाय"। स्वभावोक्ति अलंकार। जहां जाति को स्वभाव बर्नन करै ॥ १६७ ॥

देख्यौ अनदेख्यौ कियौ अँग अँग सबै दिखाय ।
पैठति सी तन मैं सकुचि बैठी चितहिं लजाय ॥१६८॥

देख्यो इति। सखी सों सखीवचन—हे सवय हे सखि नायक कों अंग अंग दिखाय कै, नायक कों देख्यौ सो अनदेख्यौ सो कियो मानो नाहीं देख्यो है, "चितहिं लजाय" आपने चित्त में लजाय कै, ऐसे बैठी अपने तन में सकुचि कै पैठे है मानो, सब अंग अंग ऐसे भी कहत हैं। पैठत सी, पैठत क्रिया है ताकें आगे सी वाचक है, यातें अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ॥ १६८ ॥

विहँसि बुलाय विलोकि इत प्रौढ़ तिया रस घूमि ।
पुलकि पसीजति पूत को पियचूम्यौ मुह चूँमि॥१६९॥

विहँसि इति। नायक ने आपनी बड़ी स्त्री कौ जो पुत्र है ताकौ मुख चूम्यो है, सो छोटी स्त्री बुलाय कै चूमै है। सखी सों सखी कहति है। विहसि कें बुलाय कै विलोकिअत देखति है, विलोकि इत ऐसो पाठ में इत नायक की ओर देखि, प्रौढ़ा जो है स्त्री सो रस में घूमि कें अनुराग सों मत्त होय कै झूमि यह पाठ है तो अनुराग में रंगि कें पिय कै पूत को जो मुख है सो चूमै, अर्थ तें पिय को चूम्यौ, ताकों चूमि कें पुलकित होय पसीजति है, सम्बन्ध तें सात्विक जानिये, कामांधा प्रौढ़ा। असंगति अलंकार, "औरि ठौरही कीजिए औरि ठौर को काम"। पिय कै मुख में चुंबन चाहिये, सुत को मुख चूम्यौ ॥ १६९ ॥

रहौ गुही बेनी लख्यौ गुहिबे को त्यौनार ।
लागे नीर चुचान जे नीठि सुकाए बार ॥ १७० ॥

रही इति । नायक नायिका की वेनी गूंथे है, तहां नायिका वचन–रही, तुम वेनी चोटी गुही, अर्थ यह कि तुम सों नहीं गुही जायगी, तुमारो गुहिवे को ल्योनार ढंग लख्यौ देख्यौ. नीठि कैसे हूं जो वार सुखाए तामें नीर चुइवे लगे, प्रस्वेद सात्विक भयो, ताकों एक तरह सों कहति है । स्वाधीनपतिका, व्याजोक्तिअलङ्कार—"व्याजोकति कछु औरि बिधि कहै दुरै आकार ॥ १७० ॥

स्वेद सलिल रोमाँच कुस गहि दुलही अरु नाथ ।
हियो दियो सँग हाथ के हथलेवाही हाथ ॥१७१॥

दूलहदुलहिनि वर्नन—स्वेद इति । सखी की उक्ति सखी सों, सात्विक जो स्वेद पसीना सो सलिल जल है, सङ्कल्प कहत है, रोमांच सो कुस है, ताकों गहि कें दुलही वधू औ नाथ पिय, हथलेवा पाणिग्रहन, वर दुलही को हाथ पकरै है मागै है, तब बेटी को बाप कछु देइ कें छोड़ावे है, ता समै हाथही के संग में परस्पर हाथ में हियो मन ताकों दियो । रूपकअलङ्कार ॥ १७१ ॥

मानहुँ मुँहदिखरावनी दुलहिनि करि अनुराग ।
सासु सदन मन ललनहूं सौतिन दियो सुहाग ॥१७२॥

मानहु इति । सखी सों सखी कहति है—दुलहिनि में अनुराग चाह करिकै मुंहदिखरावनी मुहदिखवनी में, सासु ने सदन घर हवाले कियौ, ललन मन दियो, सौतिनि ने सोहाग दियो है मानो को अर्थ जानो तुम सौंदर्य्य व्यङ्ग, ऐसी सुन्दरी नायिका है कि नायक आसक्त होय कै घर को कार्य्य याही कों देइगो, दियो को अर्थ लच्छना करिकें गयो जानिए । सासु सों सदन गयो, मन

ललन सों गयो, सोहाग सौतिनि सों गयो। किंवा मानो सों उत्प्रेक्षा जानिए और तरह को और तरह की सम्भावना कीजिए मानो नायिका ने मुंहदिखरावनी में सासु कौं सदन दियो है, मन ललन कौं दियो है, 'सौतिन दियो सोहाग' सौति कौं सोभाग न दियो, उत्प्रेक्षा। पर्यायोक्ति अलङ्कार—

"पर्यायोक्ति प्रकार द्वै कछु रचना सों बात" ॥ १७२ ॥

निरखि नवोढ़ा नारि तन छुटत लरिकईलेस ।
भौ प्यारौ प्रीतम तियनि मनौं चलत परदेस॥१७३॥

निरखि इति। सखी सों सखीवाक्य—नवोढ़ा नारि के तन में लरिकाई को लेस अवसेष छुटत है यह निरखि कै, प्रीतम नायक तियनि कौं सौतिनि कौं प्यारो भयो, मानो परदेस कौं चलत है, अभिप्राय यह कि यामें यौवन आयौ यासौं आसक्त होयगो, यह अति सुन्दरी है, नायक हमें नहीं मिलैगो, संकासंचारी व्यङ्ग, मुग्धा नायिका, चलत है मानो, क्रिया सों मानो को अन्वय है यातें अनुक्तास्पदावस्तुत्प्रेक्षा ॥ १७३ ॥

ढीठो दै बोलति हँसति प्रौढ़ बिलास अपोढ़ ।
त्यौं त्यौं चलत न पियनयन छकए छकी नवोढ़ ॥

ढीठी इति। सखी सों सखी कहति है—ढिठाई दै कैं ढिठाई करिकैं बोलति है हँसति है, प्रौढ़ा को सो तो बिलास करै है, नायिका अप्रौढ़ा है, त्यौं त्यौं तैसें तैसें पिय के नैन नहीं चलत हैं, वाकी चेष्टा सों बँधे हैं, तहां कारन कहत है, मादक वस्तु

खिआय कैं छकाई है, तासौं छकी है, मत्त भई है, नवोढ़ा नव विवाहिता, नायक कौं हर्ष संचारी। स्वभावोक्तिअलङ्कार—

"जाकौ जैसो रूपगुन बरनत ताही रीति।
स्वभावोक्ति तासौं सुकवि भाषत है करि प्रीति" ॥ १७४ ॥

सनि कज्जल चख झखलगन उपज्यौ सुदिन सनेह।
क्यौं न नृपति ह्वै भोगवै लहि सुदेस सब देह॥१७५॥

लगन वर्नन—सनि इति। सखी नायिका सों कहति है—राजजोग कहत है, काजल सो शनैश्चर है, मीन लगन सो चख नैन है, सुदिन कहिसौं केन्द्रवर्त्ती उच्चवर्त्ती औरि भी सुभग्रह जानिए, इतनोहीं सौं जो राजा होय तौ सुदिन पद काहे कौं, श्री सुदिन है, एतना में सनेह प्यार उपज्यो है, सो नृपति होय कैं क्यौं नहीं भोग करै, देह जो है सोई सुदेस है सुन्दर देस है ताकौं लहि कैं पाय कैं। रूपकअलङ्कार। सखी जो पूछै क्यौं नहीं भोग करै है, यही उत्तर होय, क्यौं नहीं भोग करै, भोग करत है। तव उत्तर अलङ्कार भी जानिए।

"उत्तर देवे में जहां प्रश्नो परत लखाय।
प्रश्नोत्तर को भेद यह प्रथम कहत कविराय" याकौं चित्रालङ्कार कहत हैं।

चितई ललचौंहें चखनि डटि घूंघट पट मांहि।
छल सौं चली छुवाय कै छिनक छबिली छांह॥१७६॥

चितई इति। सखी सौं नायक की उक्ति—लालच भरे नैननि सौं मेरी ओर चितई देखी, घूंघट पट के मांहि डटि कै अट करिकै, हमै लक्षित करिकै, सखी नहीं जानै, छल करिकै छबीली

जो है नायिका सो छांह आपनी छुआय कैं चली। किंवा छबीली जो है छाया ताकों, छाया भी छबीली होति है, 'जाके तन की छांह ढिग जोन्ह छांह सी होति' अभिलाष,सञ्चारी, नायिका क्रियाविदग्धा। "वचन क्रिया में चातुरी करै जु प्रीतम हेत। ताहि विदग्धा कहत कहतुहैं वचनरु क्रिया समेत" ॥ हमारो मन तुमारे तन सों छाया समान लग्यो है, यह बात जताई। स्वभावोक्तिअलंकार, सूक्ष्मालंकार ॥ १७६ ॥

कीनेंहूं कोटिक जतन अब कहि काढ़ै कौन ।
भौ मन मोहनरूप मिलि पानी में कौ लौन ॥१७७॥

कीनेहूं इति। नायिका की उक्ति सखी सों—कोटि जतन किए भी हे सखी तूं काहु अब कौन काढ़ै, मेरो मन मोहन की रूप सों मिलि कैं पानी मँह को लौंन भयो मिलि गयो, जौ नायक की उक्ति सखी सों होय तौ, मोह करावनवालो जो नायिका को रूप, तासों मिलि कैं, औरि वैसेंही, दृष्टान्तअलंकार—

"उपमानरु उपमेय गुन वाचक धर्म सुजान।
होत बिम्ब प्रतिबिम्ब जहँ दृष्टान्त सु परमान" ॥ १७७ ॥

नेह न नैं तनिकौ कछू उपजी वड़ी वलाय ।
नीर भरे नित प्रति रहैं तऊ न प्यास बुझाय॥१७८॥

नेह इति। नायिका की उक्ति मन सों किंवा सखी सौं पूर्वानुराग मैं। नैननि कौं नेह प्रीति नहीं है, काछू बड़ी वलाय रोग सो उपज्यो है, नितप्रति सदा नीर भरे रहत है। अर्थ यहै कि नायक सों मिले विना आंसू सों भरे रहत हैं, तौ भी प्यास नहीं

वुझति है, देखिवे की चाह नहीं जाति है, । वितर्क संचारी, विशेषोक्तिअलंकार—"विशेषोक्ति जहँ हेतु सों कारज उपजत नाहिं" नीरभरे कारन सों प्यास जानी, कार्य्य नहीं होत है ॥ १७८ ॥

छला छबीले लाल कों नोल नेह लहि नारि ।
चूमति चाहति लाय उर पहिरति धरति उतारि॥१७९॥

छला इति । पूर्वानुराग में सखी सों सखी की उक्ति—छबीले जो है लाल नायक ताको छला अँगूठी, नवल नेह में नई प्रीति में पाय कें, नारि जो है सो हर्ष सों चूमे है, उर छाती सों लगाय कें चाहति है देखति है, पहिरति है फेरि उतारि धरति है, कोई देखि न लेइ, चूमिबो इत्यादि अनुभाव सों मन को भाव प्रीति ताकों प्रगट करति है, जाति अलंकार—"जाको जैसी रूप गुन वरनत ताही रीति" किंबा कारक दीपक ॥ १७९ ॥

थाके जतन अनेक करि नैकु न छाड़ति गैल ।
करी खरी दुबरी सुलगि तेरी चाह चुरैल ॥१८०॥

थाके इति । सखी की उक्ति परकीया सों—लोग अनेक जतन करि थाके है, तेरी जो चाह है तोसों मिलिबे की जो चाह है, सोई चुरैल सो लगि कें खरी दूबरी देह करी है, तौभी गैल राह नहीं छाड़ति है, वाके पीछें लगी है यह अर्थ । किंबा सखी की उक्ति नायक सों, खरी दूबरी नायिका कों करी है, लगि कें और वैसेंही जानिए । चाह सो चुरैल, रूपकअलंकार ॥ १८० ॥

उन हरकी हँसि कै इतैं इन सौंपी मुसक्याय ।
नैन मिलत मन मिलि गयो दोऊ मिलवत गाय ॥

उन हरकी द्रुति। सखी सों सखोवचन—नायिका पीछें, गाय आगें, ताके आगे नायक उन नायक ने हँसि कै, उत वा ओर जा ओर नायिका थी ताही ओर हरकी हाँको, हाँसी करिबे के लिये, औरि ओर हांकै तो नैन आछी तरह नहीं मिलै, इत नायिका ने मुसुक्याय कैं, सौंपी, नैन के मिलतहीं मन मिलि गयो, जा समै दोऊगाय मिलावत हैं, किंवा नायिका गाय मिलाइबे गई थी, तहां सखी सों सखीवचन। आँगुरी सों दिखाय कैं कहति है, उन नायक को हर कहिए चाह अर्थ तें, नायिका ने हँसि कैं, को को अर्थ कारी, इतें या नायिका को ओर इन सों या नायिका सों पी नायक मुसुक्याय रह्यो, नैन के मिलत मन मिलि गयो जाहि समै दोऊ गाय मिलावत हैं। किंवा उन नायक ने इतै या नायिका की ओर इन सौं या नायिका सों हँसि कैं हर कहिए चाह को,को को अर्थ करी,यह नायिका पी नायक सौं मुसुक्याय रही तब नैन के मिलत अनुराग सहित देखत कै मन भी मिलि गयो, जा समै दोऊ नायक नायिका गाय मिलवत हैं, गाय दूहत हैं कोई सींग पकरे हैं कोई दूहत है, मिलइबो दूहिबे कों भी कहत है, गाय को मिलाइबो आरंभ्यो मन मिलायो। असंगति। "औरि काज आरम्भिये औरैं कीजै दौरि"। किंवा नैन को मिलतही मन मिलि गयो। चपलातिशयोक्ति। नैन मिलिबो हेतु, मन मिलिबो कार्य्य। "चपलालुक्ति जु हेतु के होत नामही काज" ॥ १८१ ॥

फेरि कछुक करि पौरितैं फिरि चितई मुसुक्याय।
आई जामन लेन तिय नेहैं चली जमाय ॥ १८२ ॥

फेरि कछुक इति। सखी सों सखीवाक्य—पौरि देहली लौं ताईं जाय कैं कछू फेर वहां मिसि करिकैं बहाना करिकैं पौरि तैं फिरी। किंवा फिरिकैं मुसुक्याय कैं नायक की ओर चितई, आ-मन लेने कौं आई, जीव में नेह को जमाय कैं दृढ़ करिकैं चली, इहां असंगति अलङ्कार है। इही जमाइवौ आरंभ्यो, नेह जमायो, "औरि काज आरंभिये औरैं कीजै दौरि"। फेरि करिवे में छल सौं इष्ट साध्यो। पर्य्यायोक्ति—

"पर्यायोक्ति प्रकार द्वै कछु रचना सों बात।
मिसि करि कारज साधिये जो कछु चितहि सुहात"। १८२।

या अनुरागी चित्त की गति समुझै नाहिं कोय।
ज्यौं ज्यौं बूड़ै स्याम रँग त्यौं त्यौं उज्जल होय १८३

या अनुरागी इति। सान्तरस कोई साधू को वचन—यह जो अनुरागी चित्त है जाको श्रीकृष्ण में प्रेम है ताकी गति कोई नहीं समुझै है, जैसें जैसें स्याम श्रीकृष्णजी के रंगमें बूड़ैहै, तैसें तैसें उ-ज्वल होत है, स्यामरंग में बूड़े उज्वल होय विरोध है, उज्वल नाम निर्मल विषयवासना रूप जो है मल सो जात है, शुद्ध होत है। शब्द में विरोध भासै है, यातें विरोधाभास अलङ्कार—"भासै जहां विरोध सो वहै विरोधाभास"। शृङ्गार रस में लिख्यौ है शृङ्गार रस में भी लगावनो, नायिका को वचन सखी सों, यह जो मेरो अनुरागी चित्त है, नायक के गुन सुनि कैं रँगि रह्यो है चाह सौं भरि रह्यो है यह जानिए। ताकी गति कोई समुझै नहीं, ज्यौं ज्यौं स्याम श्रीकृष्ण के रंग में चाह में बूड़ै है, जो बूड़ैहै सो अ-

कुलाय है, यह तौ त्यौं त्यौं राजी होय कैं, उज्वल नाम शृङ्गार को है, शृङ्गार, शुचि, उज्वल, यह तीनो नाम पर्याय हैं, शृङ्गारमय हो जात है। किंवा, सखी सों सखीवचन, या नायिका को जो अनुरागी चित्त है, रंग भयो चित्त है ताकी गति दसा ताकौं कहै, काकु स्वर सों, नहि कोई समुझै है, सबही समुझै है, स्याम जो है कृष्ण, सो ज्यों ज्यो याके चित्त के रंग में चाह मे बूड़े है याको चित्त की चाह्यो करै है त्यों त्यों उज्वल होत है, या नायिका के लेखें अनेक नायिका को जो राग सो है मैलि ताकौं त्यागि कैं सुद्ध होत है॥ १८२॥

होमति सुखकरि कामना तुमहिं मिलन की लाल।
ज्वालमुखी सी जरति लखि लगनि अगनि की ज्वाल॥

होमति इति। सखी नायक सों पूर्वानुराग में भयो है जो विरह सो कहति है,। हे लाल तुमसों मिलिवे की कामना अभिलाषा है सो वा नायिका कों सुख करि होमति करावति है, कोई छोड़ावनिहार नाहीं, यातें सुख करि कह्यौ। ज्वालमुखी सी जरति है निरन्तर प्रकास करति है, ताकौं लखि देखि कै, जो लगनि प्रीति सोई है अगनि ताकी ज्वाला में, ज्वालमुखी उपमान, सी वाचक लगनि अगनि उपमेय, जरति साधारन धर्म। यातें पूर्णोपमा। लगनि सोई अगनि इहां रूपक। ज्वालमुखी सी इहा जो है उपमा, वाचक सी, ताकी अन्वय जरति या क्रिया सों कीजिए तो मानो, के अर्थ को कहै, ज्वालमुखी जरति सी ज्वालमुखी जरति है. अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा। किंवा, हे लाल नायिका तुमसौं मि

की कामना अभिलाष करिकै सुख को होमति है, फूल की, मोती की माला, सुगन्ध यह संसार में लोगनि कौं सुख है, ताकौं वह होम करति है, जो वाकै अङ्ग पैं डारिये है सो सब बरि जात है विरह में ऐसो वर्नन कवि करत है।

"सीतल जानि वियोगिनी के उर लै लर मोतिन की पहिराई।
यों चटके पटके मुकताहल ज्वारि भटू मनु भार भुंजाई" ॥

"छाती सौं छुवाय आली दीआ वाती बार लै" "आड़े दै आले वसन" आधे दोहाको वही अर्थ। तीसरो अर्थ। कामना इहां काम जुदो पद, और ना जुदो पद है, हे लाल तुमारे मिलिवे कौ जो वाकौं ना नाहीं थी, तुमसौं मिलिवे कौं चलावै थी तब वहे नाहीं करै थी ता नाहीं कौं काम सुख करि होमत है, अर्थ तें लिंग वचन विभक्ति फिर जाति है। यह काव्य की रीति है, होमति को होमत ऐसो भी जानिए। इकार की ठौर अकार भी पढ़ि लेत हैं, "औंधाई सी सीसुलखि" इत्यादि दोहामें बिललाति की ठौर बिललात पर्यौ फेरि पावक डर तें इत्यादि दोहा में देखि की ठौरमें देख पढ़्यौ। चौथो अर्थ। सखीवचन नायिका सौं—है सखी तोहि सुख करि काम होमत है, ना तुमहि मिलन को लाल, ना कहिए नाहीं है तुमकौं मिलन की लाल मिलन रूप जो लाल जल, आगें वही। पञ्चमार्थ। सखीवचन नायिका सौं—हे सखि तुमहि मिलन की जो कामना है, सो लालहि सुख करि होमति है। षष्टार्थ। हे सखि तुमसौं मिलन की कामना करि लाल सुख कौं होमत है। लच्छना करि छोड़त है ॥ १८४ ॥

मै हो जान्यो लोयननि जुरत बाढ़िहै जोति ।
को हो जानत डीठि को डीठि किरिकिटी होति॥८५॥

मैं हो जान्यो इति । सखी सों किंवा नायक सों खण्डिता नायिका की उक्ति—हो कान्त, मै जान्यौ मैं जानी थी कि हमारे इन लोयननि कों तुमारे लोयननि सों जुरत कै मिलत कै जोति प्रकाश बाढ़िहै बढैगो, को हो जानत, कौन जाने थी, जो डीठि कों डीठि जो है सो किरिकिरी होति है। किंवा पूर्वानुराग में नायिका ने नायक कों देख्यो है, पाछे बिना देखे व्याकुलि होय कैं कहति है, वितर्क संचारी, किंवा नायक को वचन मन सों, विषमालङ्कार है—"विषम अलङ्कृति तीनि विधि अनमिलते को संग। कारन को रँग औरि कछु कारज औरै रंग" ॥ "औरि भलो उद्यम किये होत बुरो फल आय" । इग में जोति बाढ़िवे को भलो उद्यम कियो, डीठि किरिकिरी भई ॥ १८५ ॥

जौ न जुगुति पियमिलन की धूरि मुकुति मुख दीन।
जौ लहिए सँग सजन तौ धरक नरकहू कीन॥१८६॥

जौन इति। अति अभिलाष सों पूर्वानुराग में नायिका की उक्ति है, जो पिय सों मिलिवे की जुगुति उपाय नहीं, औ कदाचित मुक्ति मिले, तौ वा मुक्ति के मुख में धूरि दीनी, वैसी मुक्ति को त्याग कियो, जौ सजन प्रिय ताको संग पाइए तौ नरकहू को धरक स्वीकार कियो। इहां अनुज्ञालङ्कार है-"होत अनुज्ञा दोष कों जो लीजे गुन मानि'। नरक दुख ताको स्वीकार करै है, किंवा काव्यलिंग मुक्ति को त्याग नरक को स्वीकार, ताको

युक्ति सों समर्थन कियौ, मुक्ति की निन्दा होति है तहां ऐसें जानिये। उद्धव जी ज्ञान को उपदेश कियो है तहां व्रजदेविन के वचन, पिय श्रीनँदनन्दन किंवा नर जो है, सोक नाम निन्दा को है ताकों करत है हमें परकीया कहि कें ताकौ धरम स्वीकार कियौ ॥ १८६ ॥

मोहूँ सो तजि मोह दृग चले लागि वहि गैल ।
छिनक छ्वाय छवि गुर डरी छले छबीले छैल ॥१८७॥

मोह्न सौं दूति। पूर्वानुराग में परकीया नायिका की उक्ति सखी सौं—हमारे जे दृग हैं सो हमह्न सों मोह प्यार कौं तजिकें वही नायक के गैल राह तासों लागि कें चले, नायक के सँग जात हैं नायक की जो छवि है सोई गुड़ की डली है, ताकूं छन एक छुवाय कें दिखाय कें जानिये । छबीलो सुन्दर जो वह छैल है ताने छले ठगे. प्रसिद्ध है गुड़ को डली मंचि कें मोहनी करत है, रूपकालङ्कार है। ठग सौं रूपक मिलाये, किंवा परकीया खण्डिता की उक्ति नायक सों, हे छबीले छैल आपने घर कौं तो तुम वा नायिका सौं आसक्त होय कें मोह छोड़्यौ थो, अब मोह्न सौं मोह तजि दिये। किंवा मोह्न सौं मोह तजिकें तुमारे दृग वा नायिका के गैल लागि चले, वाकी छवि गुड़ की डली समान है, ताकौं एक छन छुवाय के तुमें छले, । सौति की उक्ति में छवि कों गुर डरी कहे हीनता नहीं ॥ १८७ ॥

को जानै ह्वैहै कहा जग उपजी अति आगि ।
मन लागै नैननि लगै चलै न मग लगि लागि ॥१८८॥

की जानै इति। सखी नायिका कों सिक्षा देति है—कौन जानै क्या होयगी, जगत में अति आगि उपजी है, आश्चर्य आगि उपजी है, नैननि लगी सो मन में लागै है, यातैं तूं प्रेम की जो मग राह ताकी लगि नजीक मति चलै यासौं दूर भाजै, लगिवे को होय अर्थ मिलिबी औ जरिवी, असङ्गति अलङ्कार—"तीनि असङ्गति काज अरु कारन न्यारो ठाँव"। नैन आगि सों मिलै मन वरै ॥ १८८ ॥

तजत अठान न हठ पर्‌यौ सठमति आठौं जाम ।
भयो वाम वा वाम कौ रहै काम वेकाम ॥ १८९ ॥

तजत इति। विरह में सखीवचन नायक सौं—काम जो है सो वा वाम को वा नायिका को बेकाम विना प्रयोजन आठौ जाम आठो पहर वाम कहिए दुष्ट भयो रहत है, तजत अठान अठान को अर्थ जो वात नहीं करिवे लायक ताकौं नहीं तजत है छाड़त है, अवला कों दुख देनो अजोग्य, हठ पर्‌यौ, याही तें सठमति है। काव्यलिङ्ग औ जमक। सठमति कहि कैं दुष्ट समर्थ्यौ। किंवा चौरि नायिका सों नायक आसक्त भयो है तव या नायिका की सखी सखी सों कहति है। नायक जो है सो वहै जो वाम दुष्ट नायिका ताकौं वाम प्रिय भयो रहत है, काम बेकाम, काम कार्य होय तौ भी उहां रहै है, वेकाम नहीं भी काम कार्य्य होय तौ भी, आठ पहर उहांई रहत है ॥ १८९ ॥

लई सौंहँ सी सुनन की तजि मुरली धुनि आन ।
किए रहति रति राति दिन कानन लागे कान॥१९०॥

लई दूति । सखी की उक्ति नायिका सों—तूं मुरली धुनि सों आन जो कोई वात ताकि सुनिवे की सौंह लई है मानो । कानन श्रीवृन्दावन जहां श्रीकृष्णचन्द गाय चराइवे गये हैं ताहि कानन वन सों तेरे कान लगे हैं, वन की ओर कान दियें है । राति दिन वंसीधुनि मे रति प्रीति किए रहति है, लई है मानो क्रिया कि आगे मानो को अन्वय है । अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेचा अलङ्कार ॥ १९० ॥

भृकुटी मटकनि पीतपट चटक लटकती चाल ।
चल चख चितवनि चोरि चित लियो विहारीलाल ॥

भृकुटी इति । नायिकावचन सखो सों—भृकुटी की मटकनि पीतपट की चटक चमत्कार, लटकती चाल औ चंचल नेत्र ताकी चितवनि विहारीलाल की इतनी क्रियनि हमारो चित्त चोरि लियो । समुच्चय अलङ्कार—"होय समुच्चय भाव वहु कहुं इक उपजै संग । एक काज जहँ करत है है अनेक इक अङ्ग" वहुतनि एक चित चोरिवो कियो । किंवा ऐसो जो विहारीलाल तिनि चितचोस्यो, भृकुटी की मटकनि है जाकों ऐसे, तहां जाति॥१९१॥

दृग उरझत टूटत कुटुम जुरत चतुरचित प्रीति ।
परति गाँठ दुर्जन हिए दई नई यह रीत ॥ १९२ ॥

दृग इति । परकीया की वचन—दृग अरुझत है, कुटंब टूटै है, छाड़ि देत है, चतुर जो है नायक नायिका ताके चित्त में प्रीति जुरति है वँधै है, दुर्जन के हिये गाँठ परति है, विरोध वँधै है, हे दैव प्रीति की नई रीति है । किंवा विधाता ने नई

रीति टीनी है, असंगति अलङ्कार। जो उरझत है सोई टूटत है, जो टूटै है सो जुरै है, तहांई गाँठ परति है।

"तीनि असंगति काज अरु कारन न्यारे ठाँव" ॥ १९२ ॥

चलत घैर घर घर तऊ घरी न घर ठहराय ।
समझि वहै घरको चलै भूलि वही घर जाय ॥१९३॥

चलत इति। सखी सों सखी परकीया की बात कहति है, घर घर में घैर चवाव चलै है, यह परपुरुष सों आसक्त है, तोभी एक घरी घर में नहीं ठहरति है, समुझै है कि हमारी लोग निन्दा करै हैं तोभी वाही के घर कों चलै है, नायक सों अनुराग है तासौं निन्दा भूलै है, तब वही के घर जाति है, उन्माद संचारी, विसेषोक्ति अलङ्कार—'विसेषोक्ति जो हेतु सौं कारज उपजै नाहि' घैरु हेतु सों घर में रहिबो जो कार्य्य सो नहीं भयौ ॥ १९३ ॥

डर न टरै नींद न परै हरै न काल विपाक ।
छिनक छाक उछकै न फिरि खरो विषम छबि छाक ॥

डरु न टरै इति। सखी नायक सों विरह कहै है, किंवा नायिकावचन—मदिरा की छाक छकनि तें छवि की छकनि मस्ती सो खरो विषम है, अति दु:सह है, मदिरा की मस्ती डर सों टरै है, यह डर सौं नहीं डरै है, यामें नींद नहीं परै है, औ काल जो घरी पहर इत्यादि ताको विपाक इहां पूर्नता, सोभी याकों नहीं हरै है, नहीं टूर करै, छिनक एक छन भी याकी छाक चढ़ै पीछें फेरि उछकै नहीं अर्थात् उतरै नहीं । मदिरा की छाक में घरी एक चेत भी होत है, पहर दो पहर वाकी अवधि है पीछें उतरि

जाति है, विषमज्वर सों छवि छाक खरो अधिक ऐसे भी कोई कहत हैं। किंवा जो कोई विषम दुःसह है तासौं छवि छाकखरो है, दृढ़ है, इहां मदिरा की छाक उपमान ऊपर सौं आवै है, व्यतिरेकालङ्कार।

"व्यतिरेक जु उपमान तें उपमें अधिको देखि" ॥ १६४ ॥

झटकि चढ़ति उतरति अटा नेक न थाकति देह ।
भई रहति नट को बटा अटकी नागर नेह ॥ १९५ ॥

झटकि इति। सखीबचन नायक सौं—हे नागर प्रवीन तुमारे नेह सौं अटकी लगी जो है नायिका सो तुमें देखिवे के लिये झटकि कैं अटा पै चढ़ति, नहीं देखति है तब झटकि कैं उतरति है, नेकु भी देह नहीं थाकै है, नट को बटा भई रहति है, विशेषोक्ति अलङ्कार। चढ़िबो उतरिबो कारन तातें थाकिबो कार्ज नहीं भयो, बटा सों नायिका सों रूपक ॥ १९५ ॥

लोभ लगैं हरिरूप के करी साट जुरि जाय ।
हौं इन वेची वीचहीं लोयन बड़ी बलाय ॥ १९६ ॥

लोभ इति। नायक के रूप देखि कै विवस भई नायिका की उक्ति सौं—हरि के रूप के लोभ सौं लागि। जुरि कैं मिलि कैं साटि वाटि करी हम इनैं वेचे हैं, तुम लेहु ऐसे वचन, साटि को अर्थ, हौं मे इनकी वेची विकि गई याते लोयन नैत्र बड़ी बलाय हैं, हम अंगी प्रधान नैत्र अंग अप्रधान तातें हमें वेची। इहां अर्थांछिप्त अर्थ सौं आयो लाल तासों रूपक ॥ १९६ ॥

नई लगनि कुल की सकुच विकल भई अकुलाइ ।
दुहूं ओर ऐंची फिरति फिरकी लौं दिन जाइ ॥१९७॥

नई इति। सखी सों किंवा नायक सों सखीवचन—नई लगनि प्रीति है, औ कुल को सकोच है यातें विकल भई अकुलाति है, दुहूं औरि लगनि औ संकोच की ओर ऐंची खींची फिरति है, फिरकी की तरह याकों दिन जात है। इहां लाज, लालसा, चपलता, उद्वेग, संचारी, अति अनुराग, व्यंग। उपमालंकार ॥ १९७ ॥

उत तें इत इत तें उतहिं छिनक न कहुँ ठहराति ।
जक न परत चकरी भई फिरि आवति फिरि जाति॥

उत तें इति। सखी नायक सों विरहनिवेदन करति है—उहां तें इहां इहां तें उहां तुमरे आइवे जाइवे की गैल देखति है, छन एक कहूं नहीं ठीक ठहरै है। जक कल नहीं परति, चकरी चकई भई है, फेरि आवै है फेरि जाति है, इहां उपमेय नायिका नहीं है, उपमानहीं तें जानी जाति है, रूपकातिशयोक्ति।

"उपमेयक उपमान ते जानि लेति जिहि ठौर।
अतिशयोक्ति रूपक वहै भाषत कवि सिरमौर" ॥ १९८ ॥

तजी संक सकुचति न चित बोलत बाक कुबाक ।
दिन छनदा छाकी रहति छुटै न छिन छवि छाक ॥

तजी संक इति। नायिका को प्रलाप उन्माद जानि सखी नायक सों विरह कहति है—संका कों तजि चित्त में सकुचै ल-

जाय नहीं, बचन कुवचन बोलति है, दिन में छिनदा छाकी मत्त रहति है. छवि की छाक, मस्ती एक छन भी नहीं छूटत है, मद की छाक छुटै है, सदा नहीं मत्त रहै है, यातें छवि छाक उपमेय अधिक। व्यतिरेकालङ्कार—

"जानि परै उपमान तें जहां अधिक उपमेय।
तहँ भाषत व्यतिरेक है कवि पण्डित मन देय" ॥ १९९ ॥

ढरे ढार त्योंहीं ढरत दूजें ढार ढरैं न ।
क्यों हू आनन आन सौं नैना लागत हैं न ॥२००॥

ढरे ढार इति। सिखा देति है सखी तासों नायिकावचन— ताहि ढार तरह सों ढरे इहां चले है जानिए। 'नीर नारि नीचे ढरे' यह कह्यो है, दूजे ढार दूसरी तरह चले नहीं, क्यौंहू कोई तरह, आनन आन सों आप के आनन मुख सौं नैना नेत्र लागत न लागत है नहीं, 'नैना लागत नैन' बहुत पोथी में ऐसो पाठ है तहां खण्डिता की उक्ति नायक सों, पूर्वार्द्ध का वही अर्थ, क्यौंहू करो तुम आन नायिका के आनन सों इनि नैननि कौं लागत के नैन दोय पद है, नै कहिए नीति सो नहीं है, सबसों आसक्त होत है। छेकानुप्रास।

'आवृति वर्न अनेक की दोय दोय जब होय।
है छेकानुप्रास स्वर समता बिनहूँ सोय"

किंवा, सीख देति सखी नायिका कौं कहति है, तेरे नैन जाहि ढार सों ढरे हैं, ताही ढार ढरत हैं औरि ढार ढरे नहीं, नायिका

वही उत्तर देति, जाहि ढार ढरै हैं ताही ढार ढरैं औरि ढार नहीं ढरत हैं, ऐसे क्यौं इत्यादि—

"उत्तर देवे में जहां प्रश्नो परत लखाय।

प्रश्नोत्तर को प्रथम इह भेद कहत कविराय" चित्र भी कहत है ॥ २०० ॥

इति श्रीहरचरणदास कृत बिहारीसतसई की टीका हरिप्रकाश नाम द्वितीय सतक व्याख्या नाम द्वितीयोल्लास ॥ २ ॥

चकी जकी सी ह्वै रही बूझें बोलत नीठि ।
कहूँ डीठि लागी लगी कै काहू की डीठि ॥२०१॥

चकी इति। सखी सों सखीवचन—चकी चकाय रही, जकी जहां की तहां रहै तैसी ह्वै रही, बूझै सों पूछे सों नीठि कैसिहूं करि बोलति है, कहूं डीठि लागी, याकी डीठि कहूं कोई सों लागी है, कै किंवा लगी है काहू की डीठि नजरि, सन्देहालङ्कार,

"सुमिरन भ्रम सन्देह है लच्छन नाम प्रकाश" ॥ २०१ ॥

पिय कै ध्यान गही गही रही वही ह्वै नारि ।
आप आपही आरसी लखि रीझति रिझवारि॥२०२॥

पिय के इति। जहां नायिका नायक रूप होय, किंवा नायक नायिका को रूप आपु कों मानि लेइ तहां रस को साक्षातकार जानिए। सखी सो सखीवाक्य—पिय को ध्यान गहि गहि, पिय को ध्यान बार बार करि, वही नायक होय रही, नारि जो है सो आपु आपुही कों आरसी में देखि कैं रीझति है, रिझवारि है रूप कों समुझति है। किंवा पिय के ध्यान सों गही अर्थ यह पिय

के ध्यान ने जाको चित्त पकरयौ ऐसी नारि ने आरसी गह्यौ तामैं औरि अर्थ वैसेही । तद्गुन अलङ्कार—

"तद्गुन तजि गुन आपनो संगति को गुन लेइ ॥ २०२ ॥

ह्यां तें ह्वां ह्वां तें इहां नेकौ धरति न धीर ।
निसदिन डाढ़ी सी फिरति वाढ़ी गाढ़ी पीर ॥२०३॥

सखी सों किंवा नायक सों सखीवचन—

ह्यां तें ह्वां इति । सखी सों किंवा नायक सों सखीवचन— इहां तें उहां, उहां तें इहां फिरति है, नेकौ थोरौ भी धीर धैर्य्य नहीं धरति है, निसदिन डाढ़ी सी जरी सी फिरति है, गाढ़ी दृढ़ पीड़ा वाढ़ो है, सी वाचक डाढ़ी क्रिया के आगे है, तासों अनुक्तास्पदावस्तूत्प्रेक्षा ॥ २०३ ॥

समरु समरु संकोच बस बिवस न ठिकु ठहराय ।
फिरि २ उझकति फिरि दुरति दुरि २ उझकति जाय॥

व्रजभाषा में अकारान्त शब्द सब उकारान्त हैं,

समरु इति । व्रजभाषा में अकारान्त शब्द सब उकारान्त हैं, सखी सों सखी । समरु काम औ संकोच दोऊ सम, अरु के अर्थ में रु है काम औ संकोच बरोबरि है, ताके बस में होय कै बिवस भई है, नहीं ठीक ठहराति है, एक ठौर नहीं ठहरति है, नायक कों देखिवे कों फेरि फेरि उझुकति है, ऊपर उठति है, नायक देखै है, तब फेरि दुरति है, छपति है, दुरि दुरि कै उझुकति जाति है, विवस तातें नहीं ठीक ठहरिवो दृढ़ कियो यातें, काव्यलिङ्ग, पद की आवृत्ति । समरु समरु "जमक शब्द को फिर श्रवन अर्थ जुदो सो जानि" । फिरि फिरि इत्यादि में लाटानुप्रास ।

"वही अर्थ पद पुनि परे भिन्नभाव कछु होय ।
सो लाटानुप्रास है कहत सयाने लोय ।

काव्यलिंग लाटानुप्रास जमक की संसृष्टि। "जहा रहैं ऽलङ्कार वहु निरपेक्ष सुसस्टि"। जहां अलङ्कार एक अलङ्कार की अपेक्षा नही करत है, फिरि फिरि इत्यादि विषें आवृति दीपक को भी सन्देह होत है, "पद अरु अर्थ दुहून की आवृत्ति तीजें लेख"। तो सकार है। "उपकारक है एक को जहँ सन्देह लखाय। इक पद में भूषन वहुत सकर सो कहि जाय"॥ जहां एक अलङ्कार कों एक अलङ्कार पुष्ट करै, औ जहां सन्देह होय यह अलङ्कार है, कै यह अलङ्कार है, औ एक पद मे है तीनि अलङ्कार होंय तौ या तरह सों तीनि प्रकार के संकर जानिए। औ कारकदीपक भी है॥ २०४॥

उर उरझ्यो चितचोर सों गुरु गुरुजन की लाज ।
चढ़े हिंडोरे से हिए किए वनै ग्रहकाज ॥ २०५॥

उर इति। सखी सों सखी—उर जो मन सो चितचोर जो है नायक, तासों अभुराया है, गुरु की गुरुजन की लाज है, हियो मन हिड़ोरा पर चढ्यो है मानो, तासों ग्रहकाज किये वने है। किवा क्या ग्रहकाज किये वनै है? नहीं वनै है ऐसें जानिए। उर नहीं कह्यो यात स्वकीया मध्या, लाज औत्सुक्य की सन्धि, गुरुजन सों लाज नायक सों औत्सुक्य भिन्न कारन तें भिन्नभाव।

"एक हेतु के भिन्न तें भावभिन्न जुति होय।
सन्धि सराहत ताहि कौं उदाहरन रस भोय"।

क्रिया के आगे से वाचक है यातें अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा॥२०५॥

सखी सिखावति मानविधि सैनन वरजति वाल ।
हरे कहे मैं हीय मो वसत विहारीलाल ॥ २०६॥

सखी दूति । सखी सों सखीवचन—क्रीड़ा कलह में उपजै सो प्रणयमान, सखी जो है सो मान की बिधि क्रिया सिखावति है, तूं मानिनी सी होय कैं बैठि, सैन सों दूमारा सों बरजति है वाला । हरें आहिस्ते कहै कह मेरे हिय में विहारीलाल बसत है, हरें कहो या बात कों हियमें बिहारीलाल वसतहैं, यासों समर्थित कियो, काव्यलिङ्ग अलङ्कार, यह दोहा सब पोथी में नहीं है॥२०६॥

उर लीने अति चटपटी सुनि मुरलीधुनि धाय ।
हौं हुलसी निकसी सु तौ गयो हूल सी लाय॥२०७॥

उर लीने दूति । नायक सों मिलै चाहति है नायिका ताको वचन सखी सों—उर में अति चटपटी आतुरता लिए मुरलीधुनि सुनिकै, हौं हुलसी राज़ी भई, धाय कै निकसी सो जो नायक है वा तौ हमारे हिय में हूल सी लगाय गयौ, तरवार बरछी सों खोंचा मारै ताकौ नाम हूल, हुलसो हूल सी जमक मुरलीधुनि सुनिकै सुख को उद्यम कियो वह हूल लगाय गयौ । विषमाल-ङ्कार—"औरि भलो उद्यम किये होय वुरो फल आय"। हूल ल-गाय गयो मानो, अनुक्तास्पदावस्तूत्प्रेक्षा, निरपेक्ष है यातें संसृष्टि,

"जहां रहै लङ्कार बहु निरपेक्ष सुसंसृष्टि" ॥ २०७ ॥

जे तब हुती दिखादिखी अमी भई इक आँक ।
दगै तिरीछी डीठि अब है बीछी कौ डाँक ॥ २०८॥

जे तब दूति । सखी सों नायिकावचन-जे तब पूर्वानुराग में देखादेखी होती, तहां जो दृष्टि एक अङ्क निश्चय अमी अमृततुल्य भई थी. तिरीछी तिरछौंही जो डीठि' है सो अब मिलिकैं बिछुरे

पर, दगति है दागति है, "गुरु लघु लघुगुरु होत है निज इच्छा अनुसार" । कहूं 'लगति तिरीछी डीठि ऐस भी पाठ है, बीछी को डाक काँटा होय कै, दृष्टि अमृत औ बीछी के डङ्क को गुन कौ आश्रय, पर्यायअलङ्कार–'द्वै पर्जाय अनेक को क्रमसौं आश्रय एक' किंवा बीछी को डङ्क तिरीछी डीठि होयकें दागै है परिनाम भी॥

लाल तिहारे रूप की कहौ रीति यह कौन ।
जासौं लागै पलक दग लागै पलक पलौ न ॥२०९॥

प्रेमकी बात बर्नन—लाल इति। सखीको उक्ति नायक सों—नायिका की विरह कहति है, हे लाल तिहारे रूपकी कौन रीति है, जाहि सों एक पलक भी नेत्र लागति है, तुम जाको एक पलक भी देखत हौ, ताकौं एक पलक अहो रात्रिमें पल नहीं लगै नींद नहीं आवै, पलक लगत पलक न लगत । बिरोधाभास अलङ्कार—'भासै जहां बिरोध सों वहै बिरोधाभास' ॥ २०६ ॥

अपनी गरजनि बोलियत कहा निहोरो तोंहि ।
तूँ प्यारो मो जीव को मो जिय प्यारो मोंहि ॥२१०॥

अपनी इति। रोषभाव शान्ति भयें औत्सुक्यभावोदय भये पै कलहान्तरिता को उक्ति नायक सौं–अपनी गरज सौं अपनी चाह सों बोलियत है, तुमै या बात को क्या निहोरो ? तुम हमारे जीव के प्यारे हौ, हमारो जीव मोहि प्यारो है. बोलिबे को समर्थ न कियो हमारो जीव हमारो प्यारो है यामैं, काव्यलिङ्ग अलङ्कार, 'काव्यलिङ्ग जब जुक्ति सो अर्थ समर्थन होय' । औ लाटानुप्राम है'

'वही अर्थ पुनि पुनि परै भिन्नभाव कछु होय ।
सो लाटानुप्रास है कहत सयाने लोय' । आवृत्तिदीपक । २१० ।

सखी इति । सखी सों सखीवचन—क्रीड़ा कलह में उपजै सो प्रणयमान, सखी जो है सो मान की विधि क्रिया सिखावति है, तूं मानिनी सी होय कैं बैठि, सैन सों हमारा सों बरजति है वाला । हरें आहिस्ते कहे कह मेरे हिय में विहारीलाल बसत है, हरें कहो या बात कों हियमें विहारीलाल बसतहैं, यासों समर्थित किया, काव्यलिङ्ग अलङ्कार, यह दोहा सब पोथी में नहीं है॥२०६॥

उर लीने अति चटपटी सुनि मुरलीधुनि धाय ।
हौं हुलसी निकसी सु तौ गयो हूल सी लाय॥२०७॥

उर लीने इति । नायक सों मिलै चाहति है नायिका ताको वचन सखी सौं—उर में अति चटपटी आतुरता लिए मुरलीधुनि [illegible] धाय कै निकासी सो जो नायक है

देखौ इति । [illegible] जैसी [illegible] बरछी सों चिन्ता चपलता संचारी, वैसियैं, [illegible] भाजि जात है, कहां होय आवत है, औ कौन बाट राह ह्वै भाजि जात है, का-पाट आड़वे जाड़वे को प्रतिबन्धक है तो भी आवनो जावनो भयो तीसरी बिभावना—

"प्रतिबन्धक के होतहूं कारज पूरन जानि" ॥ २१२ ॥

गुड़ी उड़ी लखि लाल की अँगना अँगना मांह ।
बौरी लौं दौरी फिरै छुवत छबीली छाँह ॥ २१३ ॥

गुड़ी इति । अति प्रेम सों गुड़ी की छाया छुए सों नायक को आपनो मिलन मानति है, प्रेम सों ऐसो भी सम्बन्ध मानत हैं । "आजु दैजु सुनि है सखो ससि जगे आकास सो नैना औ पीय के ह्वैहैं भेंट अकास" ॥ सखी सों सखी, लाल की गुड़ी चंग उड़ी देखि अँगना नायिका आँगन में, बावरी सी दौरी फिरति

पर, दगति है दागति है, "गुरु लघु लघुगुरु होत है निज इच्छा अनुसार"। कहूं 'लगति तिरीछी डीठि ऐसं भी पाठ है, बीछी को डांक काँटा होय के, दृष्टि अमृत औ बीछी के डङ्क कों गुन को आश्रय, पर्यायअलङ्कार–'द्वै पर्जाय अनेक को क्रमसौं आश्रय एक' किंवा बीछो को डङ्क तिरीछी डीठि होयकैं दागै है परिनाम भी॥

लाल तिहारे रूप की कहौ रीति यह कौन।
जासौं लागै पलक दृग लागै पलक पलौं न ॥२०९॥

प्रेमकी वात वर्नन—लाल इति। सखीकी उक्ति नायक सौं—नायिका को विरह कहति है, हे लाल तिहारे रूपकी कौन रीति है, जाहि सौं एक पलक भी नेत्र लागति है, तुम जाको एक पलक भी देखत हो, ताकौं [illegible] नेत्र गोलक भयो फिरै नींद नहीं [illegible] दुहूंओर फिरै है, तैसें एक जीव। रूपक किंवा दृष्टान्त ॥ २१४ ॥

करत जात जेती कटनि चढ़ि रससरिता सोत।
आल बाल उर प्रेम तरु तितौ तितौ दृढ़ होत २१५

करत इति। नायक किंवा नायिका की उक्ति—रस जलरस शृङ्गार ताको सरिता नदी ताको सोत प्रवाह सो चढ़िकै जेतनी कटनि कटाव तट को अरु लज्जा को करत जात है। आलवाल की आरी सो है उर हृदय तामें प्रेमतरु प्रेमवृक्ष तेतनो तेतनो दृढ़ होत है। रूपक सलङ्कार ॥ २१५ ॥

खल बढ़ई बल करि थके कटै न कुवत कुठार।
आलबाल उर झालरी खरी प्रेमतरु डार ॥२१६॥

खल बढ़ई इति । नायक किंवा परकीया की उक्ति—खल दुष्ट सो है बढ़ई खाती, सो बल करिकैं थाके, कुवत कुवार्ता निन्दा की बात, सो है कुठार कुल्हाड़ा तासों कटै नहीं, आलवाल की आरी सो है उर हृदय, तामें प्रेमतरु की डार खरी अति भालरी है, पत्र पुष्प सों भरि रही है, कारन है तौ भी प्रेमतरु कटै नहीं, विशेषोक्ति रूपक । रूपक ने विशेषोक्ति को उपकार कियो । याते संकर ("उपकारक ह्वै एक को जहँ संदेह लखाय ।
इक पद में भूषन बहुत वे संकर कहि जाय" ॥ २१६ ॥

छुटन न पैयत छिनकु बसि नेहनगर यह चाल ।
मार्‌यौ फिरि फिरि मारिए खूनी फिरत खुस्याल ॥

छुटन न इति । नायिका किंवा नायक को उक्ति—त्रास संचारी, नेह प्रीति सो नगर, तहां छन एक भी वसिकैं छुटनै नहीं पावित है, औ इहां की यह चाल रीति है, जो आसक्त कटाछनि सों मार्‌यौ है ताहि कों फेरि फेरि मारियतु है, खूनी जो है मारनवाला मासूक सो खुस्याल राजी फिरति है । नेहनगररूपक व असंगति सलङ्कार—"तीनि असंगति काज अरु कारन न्यारो ठाम। औरि ठौरही कीजिए औरि ठौर को काम" ॥ खूनी मारिवे जोग्य है, मार्‌यो को मार्‌यो है ॥ २१७ ॥

निरदै नेह नयो निरखि भयो जगत भयभीत ।
यह अवलौं न कहूं सुनी मरि मारिए जु मीत ॥२१८॥

निरदै इति । नायक मनाइवे कौं आयो है, तहां मानिनी सों सखीवचन—हे निरदै नायिका याके नये नेह की ओर तूं

निरखि देख, या नायक की दसा देखि कैं जगत संसार भय सों भीत भयो है। किंवा सारी राति जगत जागत रह्यो है, तेरे भय सों भीत भयो है, यह बात अब लौं अब ताईं काहूं नहीं सुनी है 'मरि मारिए जु मीत' आपु मरिकैं दुखी होयकैं मीत कों मारिए दुख दीजिये, मरो मारिये मीत यह भी पाठ है। किंवा, मानी नायक सों सखीवचन। नेह में प्रीति में तूं नयो निरदै है तोहि निरखि कैं जगत भयभीति भयो, उत्तरार्द्ध वैसेही, आपु मरि कैं मीत कौं मारिए यासौं निर्दयता कों समर्थन कियो। काव्यलिङ्ग अलङ्कार॥ २१८॥

क्यौं वसिए क्यौं निवहिए नीति नेहपुर नाहिं।
लगालगी लोयन करैं नाहक मन बँधि जाहिं॥२१९॥

क्यौं वसिये इति। परकीया की किंवा नायक की उक्ति—क्यों करि वसिए क्यों करिकै निवहिए, नेह जो सो पुर है तहां अनीति नीति नहीं है, लोयन लगालगी करत हैं, नाहक बेतकसीर मन बँधि जात है। नायक की उक्ति में नेहपुर में नाहीं जो है निखेद सुरतारंभ में सो नीति है लोयन लागै सो नहीं बँधै मन बँधि जात है, असंगति अलङ्कार—"औरि ठौरहो कीजिये औरि ठौर को काम" ॥ २१९ ॥

देह लग्यो ढिग गेहपति तऊ नेह निरवाहि।
ढीली अँखिअनि ही इतैं गई कनखिअनि चाहि॥

देह लग्यौ इति। सखी सों नायकवचन—देह सों, लग्यो या तरह सों ढिग नजीक गेहपति नायक है तऊ तौ भी नेह

कौं निरवाहि निरवाहि गई है, ढीली आँखिन सों दूतैं हमारी और कनखिअनि कनखिन सों, नेत्रकोन सों देखनो सो कनखी, चाहिकै, नेह निवाहनो काज, गेहपति प्रतिबन्धक, विभावनालङ्कार—"प्रतिबन्धक के होतहू कारज पूरन मानि" ॥ २२० ॥

है हिय रहति हई छई नई जुगुति जगजोय ।
आँखिनि आँखि लगैं खरी देह दूबरी होय ॥२२१॥

है हिय इति । पूर्वानुराग में नायक की किंवा नायिका की उक्ति—हिय में हई आश्चर्य छई छाई रहति है, जगत में नई जुगति लच्छना सों तरह जानिए । योजना को अर्थ सम्भवै नहीं जगत में जोय कै देखि कै, हित की आँखिन सों आँखि लगै, देह जो है सो खरी अति दूबरी होय है, आँखि लगे है आसक्त होति है, सो नहीं दूबरी होति है देह दूबरी होत है । असंगति अलङ्कार ॥ २२१ ॥

प्रेम अडोल डुलै नहीं मुख बोलै अनखाय ।
चित उनकी मुरति वसी चितवनि माहि लखाय ॥

प्रेम इति । पूर्ण अनुराग नायक में देखि कैं सखी नायिका सों कहति है । प्रेम तेरो नायक में अडोल है अचल है फेरि कह्यो डोलै नहीं छोड़ाएं छूटै नहीं, दोय वार बाँधी वात अति दृढ़ होति है यह रीति है, पुनरुक्ति नहीं, अति दृढ़ताव्यक्त होति है, मुख सों अनखाय कैं रिसाय कैं बोलति है, मुख शब्द तें यह ध्वनि हुई कि मन सों तूं रानी है, चित्त में तेरे उन नायक की मूरति बसी है, सो तेरी चितवनि माहि देखिवे में लखाति है जानी जाति

है। किंवा, तोमैं प्रेम अडोल है चित्त में उनकी मूरति बसी है सो डोलै नहीं, दृढ़ ह्वै बसी है, चित चित सों जमक । किंवा, पति कों आयो देखि कैं खण्डिता को वचन सखी सों, वा नायिका को प्रेम इन विषैं अडोल अचल है, यातें ए डोलै कहूं औरि ठौर जाय नहीं, हमारे पूछे मुख सो अनखाय कै बोलै है, हमसौं वासौं प्यार नहीं औरि वैसैंही ॥ २२२ ॥

चित तरसत मिलत न बनत बसि परोस के बास ।
छाती फाटी जाति सुनि टाटी ओट उसास ॥२२३॥

चित तरसत इति—परकिया नायिका की उक्ति किम्वा दूती सों नायक वचन । परोस के बास घर मैं बसि के तौभी चित तरसत है, मिलन नहीं बनत है, टाटी के ओट में विरह में निस्वास लेत है। सो सुनि के छाती फाटि जात है, औत्सुक्य विषाद सञ्चारी पूर्वानुराग है, परोस को बास मिलिबे को कारन है । मिलिबो कार्ज नहीं होत है, विसेषोक्ति अलङ्कार ॥ २२३ ॥

जालरंध्र मग अगनि को कछु उजास सो पाय ।
पीठि दिये जगत्यौं रहैं डीठि झरोखनि लाय॥२२४॥

जालरंध्र इति। दूती की उक्ति नायिका सों, किम्वा नायक सों। झरोखा में जो है जाली ताको जो रंध्र छेद सोई मग पथ तामें नायक ने अगनि को कछु उजास सो चन्द्रमा को उजास सदृश पाय देखि, जग त्यौं जगत की ओर पीठि दिये रहत है । सब सों बिमुख रहत है झरोखनि में डीठि लगाय के, जालरंध्र मग में देखि थी तुमारे अंगनि को कछु उजास ऐसे जानिये । उ-

जास सो—यहां सो नाइक उजास पाय ऐसी भी जानिये, जगत तें डीठि को रोकि कै झरोखनि में राखी, परिसंख्या अलङ्कार—

"परिसंख्या इक थल बरजि दूजे थल ठहराय" ॥१२४॥

जद्यपि सुन्दर सुघट पुनि सगुनो दीपक देह।
तऊ प्रकास करै तितै भरिये जितो सनेह ॥ २२५ ॥

जद्यपि इति। सखी नायक विषै अनुराग बढ़ावति है, देह दीपक सों रूपक करति है। जद्यपि जोभी सुन्दर है सुघट सु घाट सुन्दर तरह है, किम्वा सुघट सुन्दर अन्तःकरन है। पुनि सगुनो है, दुगुनी तिगुनी जामें वाती है, किम्वा रूप आदि जामें गुन है, दीपक सोई देह है, तौभी तेतोई प्रकास करै। जितनो सनेह तेल किम्वा प्रेम जितनो भरिये। श्लेषरूपक को उपकार करै है। संकर अलङ्कार है—

उपकारक है एक को जँह सन्देह लखाय।
इक पद में भूषन बहुत वै संकर कहि जाय। २२५॥

दुचितैं चित चलति न हलति हँसति न झुकति बिचारि।
लिखत चित्र पिय लखि चितैं रही चित्र सी नारि॥

दुचितै इति। सखी सों सखीवचन—नायक चित्र लिखिबे को आरम्भ कियो मन में सन्देह है, चित दुचिता है सन्देह सहित है। हमारो चित्र लिखै हैं किध हमारी सपत्नी को चित्र लिखैहैं, यातें चलै हलै है नाहीं, हँसै भी नहीं जो हमारो चित्र लिखैंगे तो हँसौंगी, औ झुकति है नहीं, झुकि कै देखैहै नहीं बिचारि रही है। पिय को चित्र लिखत लखि कै जानि कै औ चितै कै झुकति

पद अर्थ को पुष्ट नहीं करै है, चित्र सी नारि रही—स्तम्भसात्विक, वितर्क सञ्चारी, चित्र जैसे रहै तैसे रही। अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा—किम्वा उपमालङ्कार ॥ २२६ ॥

नैन लगे तिहि लगनि सों छुटै न छूटे प्रान ।
काम न आवत एकहू तेरे सौक सयान ॥ २२७ ॥

अथ नायिका के वचन सखी सों—नैन लगे इति। परकीया की उक्ति सखी सों—नैन लगे हैं, नायक सों तिहि लगनि सों। ताहि अनिर्वचनीय लगनि अनुराग सों लगे हैं, जो प्रान छूटै तो भी नहीं छूटै, हे सखि तेरे जे सौक सैकरों सयान चतुराई तामें एक भी हमारे काम नहीं आवत है। तेरे कहैं प्रीति नहीं छूटै, धृति सञ्चारी। प्रान छूटै नहीं छूटे, अत्युक्ति "अलङ्कार, अलङ्कार अत्युक्ति वह वर्नन अतिसय रूप" ॥ २२७ ॥

साजे मोहनमोह कौं मोही करत कुचैन ।
कहा करौं उलटे परे टोने लोने नैन ॥ २२८ ॥

साजे इति। नायिका वचन सखी सों—मैंवजवाद सों साजि कज्जल देइ के मोहन जोहै व्रजमोहन ताकों मोहिवे को साजे। नायक को देखे विना मोहि विषै कुचैन दुःख को करत हैं, कहा करौं उलटा परे, टोना से जादू से लोने सुन्दर नैन, जादू जो पहिला पर न लगे तो आपने पर परै, विषम अलङ्कार—

"कौरि भलो उद्यम किये होत बुरो फल आय"। २२८ ॥

अलि इनि लोयन सरनि को खरो विषम सञ्चार ।
लगे लगाये एक से दुहु अनि करत सुमार ॥२२९॥

खरी अति विषम दुःसह सञ्चार गति है—लगी काहू के नेत्र आपु को लगी, अपनो नेत्र और को लगायै एक से समान है। दुहून को कुमार करत हैं, खरी विषम काढ़नो, तहाँ ऐसे जानिये खरी तीछन की भी कहिये है। इन लोयन सरनि की खरी तीछन जानि, आवन तीर सों और को सुमार होय यह विषमता, वाननि की समता नहीं, लोयन सो सर, रूपक अलङ्कार ॥२२६॥

अलि इनि इति। हे अलि ए जो लोयन नेत्र सर हैं ताको

चखरुचि चूरन डारि कै ठग लगाय निज साथ।
रह्यो राखि हठि लै गयो हथाहथी मन हाथ॥२३०॥

चखरुचि इति। परकीयावचन सखी सों—काहू पर कोई टोना करै है तब चूर्न कै विभूति इत्यादि मंत्रि कै भारै है, चख नेत्र ताको रुचि कान्ति सोई है चूरन ताको डारि कै ठग जो है नायक सो आपने साथ में लगाय कै हठि कै हाथाहाथी पूरब में हाथाछोपी कहत हैं। मन हमारो लै गयो, औ वहांई राखि रह्यो है, हमारेई, हमारे यहां मन को नहीं आइबे देत है, हठ ऐसो अकारान्त पाठ होय तो, हमारो जो हठ सो मन को राखि रह्यो, तौभी चख रुचि चूरन इत्यादि वैसेही जानिये, चख रुचि चूरन रूपक अलङ्कार ॥ २३० ॥

जौलों लखौं न कुलकथा तौलों ठिक ठहराय।
देखे आवत देखिबो क्योंहू रह्यो न जाय ॥ २३१ ॥

जौलों इति। सखी सीख देति है तासों नायिका को बचन, जौलों जबताईं लखौं न, नायक को देखौं नहीं, कुलकथा कुल

धर्म की बात, तबताईं ठीक निश्चल ठहराति है। नायक के देखि देखनोईं आवत है सोहात है, कोई तरह रह्यो नहीं जात है। सखी नायक सों प्रीति छोड़ावति है, यातें विरोधी, तासों कार्य्य साध्यौ, व्याघात अलङ्कार—

"व्याघात जु कछु और तें कीजे कारज और।
बहुरि विरोधी तें जबै काज ल्याइये ठौर" ॥ २३१ ॥

वन तन को निकसत लसत हँसत हँसत इत आय।
दृग खंजन गहि लै गयो चितवनि चैंपु लगाय ॥

वन तन इति। परकीया की उक्ति सखी सों—बनतन को बन की ओर को निकसत कै लसत सोभत, हँसत हँसत इत यहां आय कै, हमारो जो दृग सो है खञ्जन ताको गहि लै गयो। आपनो आसक्ति कियो, श्रीकृष्ण की जो है चितवनि सो है चेंपु लासा ताकों लगाय कै, रूपक अलङ्कार—

"उपमानरु उपमेय में भेद परे न लखाय।
तासों रूपक कहत हैं सकल सुकवि समुदाय" ॥ २३२ ॥

चितवित बचत न हरत हठि लालन दृग बरजोर।
सावधान केवट परा ए जागत के चोर ॥२३३॥

चित इति। परकीया की उक्ति सखी प्रति—चित सो है वित धन सो नहीं बाँचत है हठि कै हरै है, लालन के दृग नैच सो बर श्रेष्ठ हैं और जोरावर हैं। सावधान केवट पारे है, जागत के चोर है, लालन सम्बोधन दै कहै तो नायिका नायक सों कहति है। व्यतिरेकालङ्कार, व्यतिरेक जु उपमान तें उपमे अधिको

देखि। विभावना भी भासै है। तीसरी सावधानी जागिबो प्रतिबन्धक है, "प्रतिबन्धक के होतहूं कारज पूरन मानि" सन्देह ते सङ्कर—

"उपकारक है एक को जहँ सन्देह लखाय।
इक पद में भूषन बहुत वे सङ्कर कहि जाय" ॥ २१२ ॥

सुरति न ताल रु तान की उठ्यौ न सुर ठहराय ।
एरी राग बिगारिगौ बैरी बोल सुनाय ॥ २३४ ॥

सुरति न इति। परकीया बचन सखी सों—ताल अरु तान की यादि नहीं रही उठ्यो अलाप्यौ स्वर नहीं ठहराय है। एरी सखी नायक राग को बिगारि गयौ स्वरभङ्ग सात्विक भयौ, बैरी बोल सुनाय, वाको बोल राग को वैरी स्तंभ कंप स्वर भंग वाके बोल सुनै भए यातें वैरी कह्यौ। किंवा, वै कहिए हैकौं होय बात सुनाय कै, री सखी राग बिगारिगौ, किंवा प्रत्यछ नायक नहीं है, यातै वैरी जो हमारी सपत्नी ताकौं बोल सुनाय कै हमारे कोप तें कंप स्वर भंग भयौ सौति सों बोलत सुनि कैं सुर नहीं ठहरात है, राग बिगार्‌यौ है। किंवा, राग प्रेम को भी नाम है हमसों उनसों जो प्रेम थो ताकों बिगारि गयौ, राग बिगारिवे को समर्थन कियौ। काव्य लिंग अलंकार ॥ २३४ ॥

इहि काँटे मो पाय लगि लीनी मरत जिवाय ।
प्रीति जनावति भीति सों मीत जु काढ्यौ आय॥२३५॥

इहिं काटे इति। परकीया की उक्ति प्रिय सखी सों—इहि ठौर में किंवा, इहि यह जे कांटे हैं, सो मो मेरे पाव में लगी

लगि को अर्थ लगे हैं, मै मरती थी जिवाय लीनी है, प्रीति कों जनावत प्रकासत । भीति भय सों, कांटे वहुत लगे, देखौ पकै नहीं, मीत जो है तिननैं काढ़े आय कैं, किंवा यह कांटा मो पाय में लगि कै मोहि जियाय लीनी, मै मीति कौं देखि कै उनकै स्पर्श विना मरती थी दुखी थी । उत्तरार्द्ध वैसेंही यह मुख्यार्थ है, कांटा तें जीवनो, विभावनालंकार—जवै अकारन वस्तु तें कारज परगट होय' ॥ २३५ ॥

जात सयान अयान ह्वै वै ठग काहि ठगै न ।
को ललचाइ न लाल के लखि ललचौंहे नैन ॥२३६॥

जात इति । नायिका की उक्ति सखी सों—किंवा सखी की नायिका सों। सुज्ञान है, सो अज्ञान होयजात है, वै नायक किंवा नेत्र ठग हैं काहि कौन कौं नहीं ठगै काकु करि सबै ठगै, कौन नहीं ललचाय है, लाल के ललचौहैं, लालच भरे नेत्र लखि कै, ठग कहैं निन्दा ध्वनि में सौंदर्य की स्तुति, व्याजस्तुति अलङ्कार। व्याजस्तुति निन्दा मिसैं जवैं वड़ाई होय ॥ २३६ ॥

जस अपजस देखत नहीं देखत साँवल गात ।
कहा करौं लालच भरे चपल नैन चलि जात ॥२३७॥

जस इति । आधे दोहा में सखी को प्रश्न नायिका सों—आधे दोहा में नायिका को उत्तर, साँवल गात श्रीकृष्ण तिन कौं देखति कैतूं जस अजस कौं देखत विचारति है नहीं, कुलवधू कौं यह जस है कि अजस है? नायिका वचन, मैं कहा करौं लालच भरे, रूप के लालच सों भरे, चपल चंचल जे हमारे नैंन सो चलि

... हैं । किंवा सखी प्रश्न करै है, हे साँवल ... तुम वा नायिका कुलवधू ताकौं देखत कौं जस ... देखत हौ, नायक को उत्तर, मैं कहा करौं लालच ... हैं, नैन ते चलिजात हैं, नैन को अर्थ जाकौं नेक ... माही, नैन विशेष है सो साभिप्राय है यातें, परिकरा-... लङ्कार, "साभिप्राय विशेष जब परिकुर अंकुर नाम"। किंवा खंडिता को वचन, हे चपलनैन । सांवल गात काले अंग है ... ताकौं देखत कै तुम जस अपजस कौं नहीं देखत हौ, मैं कहा करौं मैं तो तुमैं बहुत सिच्छा दीनी, कहा जानौं कौन ला-लच भरे वाही चले जात हौ ॥ २३७ ॥

नखसिख रूपभरे खरे तउ माँगत मुसुकानि ।
तजत न लोचन लालची ए ललचौंहीं बानि ॥१२३८॥

नखसिख इति । नायक हँसायो चाहत है—तहां नायिका की उक्ति, नख ते सिखा पर्य्यन्त खरे अति रूप सौं भरे हौ, तौभी हम सौं मुसुक्यानि जाँचत हौ, किम्वा नखसिख को अर्थ लच्छना सौं सम्पूर्ण नेत्र खरे रूप सौं भरे हैं । तौभी मुसुक्यानि जाँचत हैं, तुमारे लोचन लालची हैं ललचौंहीं बानि स्वभाव को नहीं तजत हैं, छाड़त हैं। रूपभरे हैं अजाँचो नहीं होत, विशेषोक्ति अलङ्कार। किम्वा खण्डितावचन खरे तौ ... । नायिका के नख ताको जो सिखा अग्रभाग, तासौं ... रे हौ, तुमारे अङ्गनि में नखछत हैं, तासौं तुम ... धीरा बोलै ठौर-धि, तौभी तुम हम सौं ... तन-लगाय

के स्वीजन केस बाँधेहैं, वाकी तन तुमारे तन में लग्यो है, लोचक हिए चाह सी तुमै हमारी नहीं हैं । आए लोचन लोचि, यहां को दोहा है, ए लालची, ललचौंही लालचिए तुमारी वानी बचन है, लघुगुरु गुरुलघु होत है निज इच्छा अनुसार—किम्बा तुमरे लोचन लालची हैं, ललचौंहीं वानि को नहीं तजत हैं ॥

छ्वै छिगुनी पहुँचो गिलत अति दीनता दिखाय ।
वलि वामन को ब्यौंत सुनि कौन तुमै पतियाय॥२३९॥

छ्वै छिगुनी इति। परकीया नायिका सों नायक प्यार कियो चाहत है—कहै है चलो कुञ्ज देखो फूल तोरो, थोड़ी बात कहि बहुत कछू चाहत हैं यह बात जानि नायिका को वचन नायक सों। तुम छिगुनी कनिष्टा अंगुरी ताको छूयकै पहुंचा लीलत हौ, आँगुरी पकरत पहुंचा पकरत हौ यह अर्थ, आपनी अति दीनता दिखाय दीनता को अर्थ यहां लच्छना सों गरीबता, वलिमान को व्यौंत बनाव सुनि के तीनि डग धरती मांगि तीनौ लोक लिये, हे वलि को कौन तुमै पत्याय तुमारी कौन प्रतीति करै, गिलत व्यौंत लोग की कहनावति है। लोकोक्ति अलङ्कार, "लोकोकति कछु वचन ज्यों लीने लोकप्रवाद। नैन मूंदि षट मास लौं सहिस विरह विषाद"। अति दीनता यहां छठई कला सतई कला सों मिलो है यातें जतिभंग ॥ २३९ ॥

नैना नेकु न मानहीं कितौ कहौं समुझाय ।
तन मन हारेहूँ हँसै तिनसों कहा बसाय ॥ २४० ॥

नैना इति। पूर्वानुराग में सखी शिक्षा देति है—तासों ना-

यिका को किम्वा नायक की उक्ति । हमारे नैन नेकु थोरो भी नहीं मानत हैं, कितनो समुझाय कै कह्यौ, तन मन प्रिय के किम्वा प्रिया के हाथ हारें हूं भी हँसत है। फिकिरि नहीं करै, तिन सों हमारो कहा वसाय है क्या जोर चलै है, किम्बा खण्डिता की उक्ति—व्यंग सों कोप को प्रकासै है धीरा है, हे सखी इनके नैना नेकु भी इनकी बात को नही मानत हैं, इन तो कितनो समुझाय कै कह्यौ, और वही अर्थ, किम्बा इनै ने नीति ना कै अर्थ नहीं है, नेकु थोरो भी मान वड़ाईही हृदय में न नाही है। मानहीं अनुनासिक है, ही हृदयवाची सो निरनुनासिक है यह तो स्वर को धर्म्म है, यातें नहीं विगरै, हृदयवाची विषे अनुनासिकही को प्रयोग किनहू नहीं कियो है । अप्रयुक्त दोष लगै, काव्यप्रकास में कह्यो है, श्लेष आदि विषय निहतार्थ अप्रयुक्तगुण है। किती कह्यो समुझाय, हम तुमै कितनो समुझाय कै कह्यौ, तुम आपनो तन मन वा नायिका सों हार्यो है । फेरि हँसत हौ निलंज्ज हौ तिन पुरुष सों हमारो कहा वसाय। समुझायवो हेतुता सों मानिवो कार्ज नहीं भयो विशेषोक्ति ॥ २४० ॥

लटकि लटकि लटकत चलत डटत मुकुट की छाँह ।
चटक भर्‌यौ नट मिलि गयो अटकभटक वट माँहि॥

लटकि इति । नायिकावचन सखी सों—लटकि लटकि लटकत चलत, स्पष्ट मुकुट की छाया को डटत है, अटक रहत है निहारत है यह अर्थ, चटकभर्‌यौ छवि को चमत्कार सों भर्‌यौ है। ऐसो जो नटवर वेष किये कृष्ण सो हमसों मिलि कै गयो, अटकभटक भटभेरा करि, वाट माहि राह माहिं, बचन यह अ-

नुभाव है तासों अनुराग जान्यौ जात है, अभिलाषा सञ्चारी, सभावोक्ति अलङ्कार—

"जाकी जैसो रूप गुन बरनत वाही रीति।
तासों जाति सुभाव कवि भाषत है करि प्रीति ॥ १४१ ॥

फिरि फिरि बूझति कहि कहा कह्यौ साँवरे गात।
कहा करत देखे कहाँ अली चली क्यौं बात ॥२४२॥

फिरि फिरि इति। परकीयावचन दूती प्रति—सो सखी सों सखी कहति है, फेरि फेरि बूझति है कहति है, दूती तूं कहि साँवरे गात नायक ने कहा क्या कह्यौ? कहां कौने ठौर में कहा करत देखे? हे अलि हमारी बात वहां क्यौंकर चली? हमारो चर्चा कैसे भई? आवृत्तिदीपिका, किम्बा अन्य सम्भोगदुःखिता को वचन सखी सों सखी कहति है। और यहो अर्थ, अलि तेरी चली चल विचल बात क्यौं, साँस भरि आई है, ठीक नहीं बोलै ॥ २४२ ॥

तोही निरमोही लग्यो मो ही इहै सुभाव।
अनआए आवै नहीं आए आवत आव ॥ २४३ ॥

नायिकावचन नायक सों, तोही इति। मानौ नायक सों नायिका को वचन—किम्वा परदेस उपपति को नायिका की पत्री, तोही तेरे ही कहिये हृदय मन सो निरमोही है प्रेमहीन है। तासों मोही मेरोही हृदय लग्यौ, इहै सुभाव, इहै निरमोही को सुभाव भयो, संगति को गुन लग्यौ हम सों मोह छोडि अनआये आवै नही, तुमारे आये विना हमारो मन हमारे यहां नहीं आवै है। तुमारे आये सों आवत है। आगे भो हम यह परीच्छा कीनी

है, यातें तू श्राव यहां श्राव, किम्बा तुमारे श्राये सों हमारो श्राव श्रायुर्बल श्रावत है। श्रौरन के मन को श्रौर स्वभाव, मेरे मन को यही स्वभाव इतना कहे सों, भेदकातिशयोक्ति, 'अतिशयोक्ति भेदक वहै यह बिधि वरनत जात, श्रौरै हँसिबो देखिबो श्रौरै याकी बात' मोही मोही जमक ॥ २४३ ॥

दुखिहाइनि चरचा नहीं आनन आन न आन ।
लगी फिरति ढूका दिए कानन कानन कान ॥२४४॥

दुखहाइन इति । नायिकावचन सखी सों—दुखहाइन, दुखदाई जो है ताकि श्रानन कहिये मुख ता विषे श्रान की श्रौर की चरचा नहीं है। किम्बा दुखदाइनि के श्रानन मुख, श्रानन को श्रौरन को चरचा नहीं है, श्रान है सौंह है मैं सपथ करि कहति हौं, मेरी चरचा करति हैं। कानन कानन विषे हमारे विहार के वन वन विषें, कान दिये हमारी बात सुनिबे को, ढूका लगी फिरति है, छिपि कै लगी फिरति है, श्रानन श्रानन कानन कानन, जमक श्रलङ्कार ॥ २४४ ॥

वहके सब जिय की कहत ठौर कुठौर लखै न ।
छिन औरै छिन और से ए छबिछाके नैन ॥२४५॥

वहके इति । नायिका वचन सखी सों–ए छविछाके नैन, ए हमारे नैन नायक की छवि सों छाके हैं। याही तें वहके अर्थात् वस में नहीं, जीव की बात सव कहि देत हैं, ठौर कुठौर लखैं नहीं, दुर्जन हित इनै सब समान, एक छन में श्रौर दूसरे छन में श्रौर, किम्बा खण्डिता की उक्ति नायक सों, ए तुमारे नैन वा नायिका

की छवि सों छाकि, तुम क्यों नहीं करत हो, और वही अर्थ, छवि छाकिबो हेतु, बहकिबो हेतुमान, हेतु अलङ्कार—'हेतु अलङ्कृति होत जब कारन कारज संग' ॥ २४५ ॥

कहत सबै कवि कमल से मो मति नैन पषानु ।
न तरक इन विय लगत कत उपजत बिरह कृसानु ॥

कहत इति । उक्ति नायक की किंवा परकाया की वितर्क, संचारी पूर्वानुराग में। हे सबै हे सखि, कवि कमल से कहत है मो मति, मेरी बुद्धि में यह आवत है, कि नैन कमल नहीं हैं, पषान हैं, न तरक याकि दोय अर्थ, न नाहीं तरक है झोर को बात नहीं है, साच हैं। किंवा ना तरकै यह ढोंढ़ार देश की भाषा है, ए-कार छन्द के लिए लोप्यो अर्थ नाहीं तो इन नेत्रनि कौं विय कहिए दूसरे के नेत्रनि सों लगत के कत क्यों बिरहरूप-कृसानु अग्नि उपजत है। किंवा सबै कवि सब कवि ऐसें भी जानिए। मो मति को अर्थ मेरे जान सभावना है, नैन विषें पषान की सभावना, उक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ॥ २४६ ॥

लाज लगाम न मानहीं नैना मो बस नाहिं ।
ए मुँहजोर तुरंग लौं ऐंचतहूं चलि जाहिं ॥२४७॥

लाज इति । सखी सिक्षा देति है तहां नायक के अनुराग से भरी नायिका को वचन—लाज सो है लगाम ताकौं नहीं माने हैं, 'नैना मो बस नाहि' स्पष्ट। ए नेत्र मुंहजोर तुरग घोड़ा की तरह ऐंचत खींचत भी चल जात हैं। नैन उपमेय, तुरग उपमान लौं वाचक, ऐंचिबो साधारन धर्म, पूर्णोपमालङ्कार। लाज लगाम रूपक उपमा को उपकार करै है यातें सङ्कर ॥ २४७ ॥

इनि दुखिआं अँखिआनि कौं सुख सिरिज्यौई नाहिं।
देखत बनै न देखते बिन देखे अकुलाहिं ॥ २४८ ॥

इनि दुखिश्रां इति । परकीया की उक्ति सखी सौं—ए जे हमारी दुखी आंखि हैं उत्कण्ठा सौं ताकौं विधाता ने, सुख सिरिज्यौ सुख उपजायोई नांहि, देखैं बनै न देखते, लोगनि के देखत देखैं नहीं बनत है, किंवा देखे विना नहीं बनै है, या बात नै तैं देख बिचारी, अनदेखे अकुलात हैं, विना नायक के देखे अकुलाहि व्याकुल होति हैं, जो नायक के देखतैं देखे नहीं बनै लज्जा सौं, तो मध्या होय, निर्वेद बिषाद संचारी, पिय को दरसन सुख को हेतु है, सुखरूप कार्ज नहीं उपजत है, विशेषोक्ति अलङ्कार—'विशेषोक्ति जो हेतु सौं कारज उपजत नाहिं' ॥२४८॥

लरिका लैबे के मिसहिं लङ्गर मो ढिग आय।
गयो अचानक आँगुरी छाती छैल छुवाय ॥ २४९ ॥

लरिका इति । परकीया की उक्ति प्रिय सखी सौं—काहू को लरिका नायिका खिलावै है, लरिका लैबे के मिस बहाना करिकै लंगर नागर प्रवीन जो है वह नायक सो मो ढिग मैं, मेरे नजीक आय कै, आंगुरी अचानक छाती सौं छुवाय कै छैल गयो, छल करि छुवायो । पर्य्यायोक्ति अलङ्कार—

"मिस करि कारज साधिए जो है चितहि सोहात" ॥ २४९ ॥

डिगक डिगति सी चलि ठटकि चितई चली निहारि।
लिए जाति चित चोरटी वहै गोरटी नारि ॥ २५० ॥

अथ नायकवचन—डिगक इति । डिगक एक डग डिगति

सी कुच नितम्ब के भार डगमगाति सो चलि कै ठटकी खड़ी रही, फेरि चितई, फेरि चली, हमैं निहारि कै हमारी चित कों लिये जाति चोरटी चोरनी, सखी कों दिखावै है, वहै जो गोरटी गोरी नारि, स्वभावोक्ति अलङ्कार ॥ २५० ॥

चिलक चिकनई चटकसौं लफति सटक लौं आय ।
नारि सलौनी साँवरी नागनि लौं डसि जाय ॥२५१॥

चिलक इति । नायक सखी सों कहत है—चिलक चमक है, औ चिकनाई की चटक चमत्कार सों आई, जाकी कटि बेंत को सटका छरी की तरह लफति है लचकति है, ऐसी नारि सलोनी लावन्य भरी, सो नागिनि की तरह डसि जाति है, नागिनि के डसे सो जो कछु व्याकुलता होति है तैसी हमैं है, तासों मिलावो यह ध्वनि, नारि उपमेय, नागिनि उपमान, डसिबो साधारनधर्म, लों वाचक । उपमाऽलङ्कार—

उपमेयरु उपमान जहँ वाचकधर्म सुचारि ।
पूरन उपमाहीन जहँ लुप्तोपमा विचारि । २५१ ।

रह्यौ मोह मिलनो रह्यौ यौं कहि गह्यौ मरोर ।
उत दै सखिहिं उराहनो इत चितई मो ओर ॥२५२॥

रह्यो इति । परकीया सखी सों कहिबे को छल करि वचनविदग्धा मो औ क्रियाविदग्धा तासौं नायक कों समुझावै है, नायकवचन सखा पीठमर्द सों, मोह प्यार रह्यो, मिलनो भी अब रह्यो । या तरह सों कहिकै मरोर दिमाग की क्रिया है, सो गह्यो उतैं वा और सखी कौं ओराहनो देति है, इतैं या तरफ मो ओर

मेरो ओर चितई, देखी । कहूं फिर चितई ऐसो भी पाठ है । गूढ़ोक्ति अलङ्कार—'गूढ़ोकति मिस और के कीजे पर उपदेस' हम सखी सों नहीं कहति हैं तुमसों कहति हैं ॥ २५२ ॥

नहि नचाय चितवति दृगनि नहि बोलति मुसुक्याय।
ज्यौं ज्यौं रूखी रुख करत त्यौं त्यौं चित चिकनाय॥२५३॥

नहि न इति । एकान्त में सम्भोग कों चाहति है नायिका तासों नायकवचन—दृगनि कों नचाय कैं नहीं चितवति है, मुसुक्याय कैं नहीं बोलति है, किंवा नहीं नाहीं बोलति है, ज्योंज्यों जैसें जैसें रुख तौर ताकों रूखी रुख करै है, त्यों त्यों तैसें तैसें तेरो चित चिकनाय है, चित तुमारो रूखो नहीं होत, चित मिलिबो चाहत है, यह अर्थ । रुखाई तें चिकनाई होति है ।
जबै अकारन वस्तु तें कारज परगट होय । बिभावना अलङ्कार ॥ २५३ ॥

सहित सनेह सँकोच सुख स्वेद कम्प मुसुक्यानि ।
प्रान पानि करि आपने पानि धरे मो पानि ॥ २५४॥

सहित इति । नायक अपने विवाह की हकीकति सखी सौं कहत है, किंवा स्वाधीनपतिका है, तासौं नायक कहत है—सेह संकोच औ सुख औ स्वेद औ कम्पा औ मुसुक्यानि इननि सहित हमारो जो प्रान है सो आपने पानि हाथ में करिकै आपनो वस करि यह अर्थ । आपनो पानि हाथ हमारे पान हाथ पै धरे, दम्पति विभावस्नेह स्थाई संकोच संचारी स्वेद कम्प सात्विक मुसुक्यानि अनुभाव, स्थायी संचारी शब्द वाच्य है । ऐसी ठौर दोष नहीं, प्रान लिये हाथ दिये, विनिमय अलङ्कार—
"जहं दैकै कछु लीजिये कम बहु बिनि मरजानि" ॥ २५४ ॥

चितवनि भोरे भाय की गोरे मुख मुसुक्यानि ।
लगति लटकि आली गरें चित खटकति निति आनि॥

चितवनि इति। परकीया की इकीकति नायकसखी सों—चितवनि भोरे भाव की भोलेपन को चितवनि, गोरे मुख में हँसी, आली सखी के गर सों लटकि कै लागति है, चित में खटकै है साले है, निति सदा आनि आय कैं। किंवा, मेरे चित्त में खटकति है ताकौं तूं आनि कहिये ल्याव, स्वभावोक्ति ॥२५५॥

छिन छिन में खटकति सु हिय खरी भीर में जात ।
कहि जु चली अनहीं चितै ओठनहीं बिच बात॥२५६॥

छिन छिन इति। नायकवचन सखी सों—छन छन में हमारो हिय मे वह नायिका खटकति है, मैं खरी भीरि में जातो थी। नायिका कौं कहिये तो जात नहीं होय जाति होय, आगे तुकान्त बात है। अनही चितें बिन देखेही ओठनही बिच बात कहि कै जु यह पादपूर्णार्थ, कहि चली। ओठ बीच कही यातें नहीं सुनिबे में आई। किंवा भीर में यौं कह्यौ। किवा, तुमसों कछु कहती तुम भीर में जात हो। उकार, भकार, मकार को ओठ स्थान भी है, अनहो चितै को अर्थ आनही सखी की ओर चितै कैं ऐसें भी जानिये। स्मृति अलङ्कार है ॥ २५६ ॥

चुनरी स्याम सतार नभ मुख ससि की अनुहारि ।
नेह दबावति नींद लौं निरखि निसा सी नारि ॥२५७॥

चुनरी इति। उपपति को वचन, किवा, सखीवचन नायक सों—स्याम जो चूनरी है सो सतार नभ, तारा सहित आकाश है

मुख जो है सो ससि चन्द्रमा की अनुहारि तरह, नेह सों दवा-
वति है, नींद की तरह वस करति है, निरखी है हम निसा रात्रि
सी नारि। किंवा निरखो निसा सी नारि, रूपक नै उपमा को
उपकार कियो याते संकर ॥ २५७ ॥

मैं लै दयौ ल्यौ सुकर छुवत छनकि गौ नीर।
लाल तिहारो अरगजा उर ह्वै लग्यौ अबीर ॥२५८॥

सखीवचन—मै ले दयौ इति। पूर्वानुराग में नायिका की वि-
रह दसा सखी नायक सों कहति है—मै लैकैं दयो सुन्दर कर
में नायिका ने लियो, कर के छुवतहीं छनकि गौ नीर। छनछ-
नाय के वाको नीर गौ जातौ रह्यौ, विरह के ताप सों। हे लाल
तिहारो दियो अरगजा जो अनेक सुगंध डारि कैं वनायो है सो
उर में अबीर होय कै लाग्यो। अत्युक्ति अलङ्कार—
अलंकार अत्युक्ति यह वर्नन अतिसय रूप ॥ २५८ ॥

तो पर वारौं उरबसी सुनि राधिके सुजान।
तू मोहन के उर बसी ह्वै उरबसी समान ॥ २५९ ॥

तोपर इति। सखीवचन मान में नायिका सों—तोपर तेरे
ऊपर उरबसी जो अप्सरा है ताकौं वारौं नवछावरि करौं। हे
राधिके हे सुजानप्रवीन तूं सुनी. तूं मोहन के उर में हृदय में
वसी है, उरवसी चौकी के समान तुल्य होय कै, सदा रहति है
यह अर्थ। किंवा, तुमसों किनहूं कह्यो है नायक के उर में औरि
नायिका वसी है, सो तोपर वारौं औछि कैं फेंकि द्यौं सुनि रा-
धिके सुजान, तूं मोहन के उर में वसी है, उरवसी लक्ष्मी के स-

मान होय कै कबही जुदागी नहीं, नारायन के उरमें जैसें लक्ष्मी तैसें तूं मोहन के उर में । किंवा, तूं मोहन के उर में बसी है, सदा उर में बसनिहारि है, उरबसी लक्ष्मी जाको समा कहिये बरोबरिन को अर्थ नहीं ह्वै सकै है, जमक अलंकार । उरबसी को समान अर्थ उपमा ॥ २५८ ॥

हँसि उतार हिय तैं दई तुम जु वाहि दिन लाल ।
राखति प्रान कपूर ज्यौं वही चुहटनी माल ॥ २६० ॥

हँसि इति । सखीवचन बिरह निवेदन, हँसिबे को कारन, नायिका ने अनुराग सौं नायक के गर की गुंजा की माला मांगी तब नायक ने कह्यौ कहा बडी वस्तु मांगी यह हँसिबे को कारन, हँसि कैं उर छाती तें उतारि कैं तुम दीनी हे लाल तुम वाहि दिन, जाहि दिन मागी । अब बिरह में वह जो चुहटनी गुंजा ताकी माला वाके प्रान कौं कपूर की सी तरह राखति है, कपूर में गुंजा डारे उड़ै नहीं, प्रानरूप कपूर कौं राखति ज्यौं को अर्थ यहां मानो । रूपक, अनुक्तास्पदवस्तुत्प्रेक्षा ॥ २६० ॥

रही लटू ह्वै लाल हौं लखि वह बाल अनूप ।
कितौ मिठास दयौ दई इतौ सलोने रूप ॥ २६१ ॥

रही इति । दूती नायक सों नायिका की स्तुति करति है, हे लाल वह अनूप आश्चर्य बाल देखि कैं मैं लटू आसक्त होय रही, लटू लकरी को नचाइबे को बालक राखै है सो अर्थ इहां नहीं संभवै, इतो इतनो सलोने रूप लावन्य भयो रूप में दैव जो है विधाता ताने कितनो मिठास माधुर्य दियो है । बिराधाभास

अलंकार है। सनोना में मिठास विरोध। ललित ललाम। "जहँ विरोध सो लगत है होत न साँच विरोध। कहत विरोधाभास तहँ बुधजन बुद्धि विबोध" ॥ किंवा, सपत्नी की सखी है सो नायिका की निन्दा छल सों करति है। हे लाल हे अनूप तुमे सरीखो कोई दूसरो नायक नहीं, वह तुमारी प्यारी बाल देखि कैं हौं मैं लटू ह्वै वस होय रही, वक्र बात कहति है। किंवा, लटू जड़ है मैं जड़ ह्वै रही। सलोना रूप में विधाता ने केतनो मिठास डार्यो है. लौंन की वस्तु में मिठाई डारै तो विगरि जाय विधाता को बिगार्यो रूप, तासौं तुमारी आसक्ति यह ध्वनि॥२६१॥

सोहति धोती सेत में कनकबरन तन बाल।
सारद बारद बीजुरी भा रद कीजत लाल ॥ २६२॥

सोहत इति। दूतीवचन नायक सों—पूर्वार्द्ध स्पष्ट है लाल सारद सरद रितु, कुआर कार्तिक ताको जो बारद मेघ खेत, तामें जो है बीजुरी ताकी जो भा कहिए दीप्ति ताकों रद कीजियत है। यह कछु नहीं निकम्मा खेत धोती सो सरद को मेघ, बीजुरी नायिका। प्रतीपालंकार—"अनआदर उपमेय तें जहँ पावै उपमान"। नायिका तें बीजुरी, भा उपमान को अनादर, वृत्ति अनुप्रास ॥ २६२ ॥

वारौं बलि तो दृगनि पै अलि खंजन मृग मीन।
आधी दृष्टि चितौन जिनि किए लाल आधीन ॥२६३॥

वारौं इति। सखीवचन नायिका सों—बलिजाउं तेरो तेरे दृगनि पें एतने उपमान वारौं, आधी आँखि की चितौनि सों

जिन ने लाल कौं आधीन बस किये । उपमेय नेत्र तें उपमान को अनादर । प्रतीपालंकार—

"अनआदर उपमेय ते जब पावै उपमान" ॥ २६३ ॥

देखत चूर कपूर ज्यौं उपै जाय जनि लाल ।
छिन छिन जाति परी खरी छीन छबीली बाल॥२६४॥

देखत इति । सखी विरह निवेदन करति है—हे लाल देखत कै ऐसो नजरि आवै है, कपूर को चूर सों उपै न जाय, अदेख न होय छबीली बाल सुन्दरि बाल, छन छन में खरी अति छीन परी जाति है । किंवा, नायिका सों नायक को विरहनिवेदन सखी करै है, पूर्वानुराग में । हे छबीली बाल, कपूर को चूर सा लाल उपै जिनि जाय, देह छिन छिन में खरी अति छीन परी जाति है । नायिका उपमेय, कपूर उपमान, उपैबो साधारन धर्म, ज्यौं वाचक । पूर्णोपमालङ्कार ॥ २६४ ॥

छिनक छबीले लाल वह जौलगि नहिं बतराय ।
ऊख मयूष पियूष की तौ लगि भूख न जाय॥२६५॥

छिनक इति । पूर्वानुराग में दूती स्तुति करति है। हे छबीले हे सुन्दर लाल छन एक वह नायिका जौलगि जब तांई नहीं बतराति बात नहीं कहति है, ऊख की, मयूष चन्द्रकिरन पियूष अमृत की तौलगि तबतांई भूख चाह नहीं जाय है, वृत्ति अनुप्रास । अनेक वर्न की आवृत्ति है, नायिका के वचन उपमेय तामें अधिकाई । व्यतिरेकालङ्कार । उपमान ऊख आदि ॥२६५॥

नागरि विविध बिलास तजि बसी गँवेलिनि माहिं ।
मूढ्यौ मै गनिवी कि तूं हूठ्यौ दै इठलाहि ॥२६६॥

नागरि इति। नायिका नायक सों रूठि कै औरि गांव की जपरी सखिन में बैठी, दूती मनावै है कि लघुमान है, हे नागरि चतुरि, तूं विविध प्रकार के बिलास कों तजिकैं, गँवेली गांव की वासी गँवारिनि मैं बसी है बैठि रही है, तूं तोहि मूढ्यौ, तू मूर्ख कि मैं, जब मैं कहति हों तब तूं हूठ्यौ दै अठिलाहि, मूंठो बाँधि कमर सों लगाय कैं ऐंठै है । किंवा, नागरि जो हैं प्रवीन स्त्री तिनकी तरह जो है अनेक तरह को बिलास ताकों तजि छाड़ि कैं, आगे वही अर्थ। रचना सों बात कहि मनावति है । पर्यायोक्ति। 'पर्यायोक्ति प्रकार है कछु रचना सों बात' ॥ २६६ ॥

पियमन रुचि ह्वैवो कठिन तन रुचि होय सिंगार ।
लाख करौ आँखि न बढ़ै बढ़ै बढ़ाए बार ॥२६७॥

पिय मन इति। नायिका की प्रियसखी नायिका की सौति कों सिंगार करतो देखि सुनाय कैं कहति है, पिय के मन की रुचि चाह होइवो कठिन है। तन शरीर की रुचि सोभा सिंगार सों होइ है, लाख जतन करो तो आँखि नहीं बढ़ै, बढ़ाये सों बार बढ़ै। अर्थान्तर न्यास है।

'कही अर्थ जहँ पोखिये औरि अर्थ सों मीत।
सो अर्थान्तर न्यास है बुधजन करत प्रतीत" ॥ २६७ ॥

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहिं काल।
अली कली ही सों बँध्यौ आगैं कौन हवाल ॥२६८॥

नहिं पराग इति। नायक मुग्धा नायिका सों आसक्त भयो है, तासों कोई कहत है, भौंरा के छल करि। नहीं यामें पराग रज सो नहीं, मधु फूल कौं रस सो भी मधुर मनोहर नहीं, या समै विषै विकास भी नहीं, फूल्यौ भी नहीं, अलि जो भौंरा मो अद्भुत जानि कलीही सों बँध्यो है। आगे जब यामें पराग आदि होयगो तब याकी कहा दशा होयगी, नहीं जानै हैं, फुलवारी में प्रस्तुत भौंरा कौं कहै, अप्रस्तुत नायक नायिकानि करै है, तो समासोक्ति जानिये। जो नायक के सुनत भौंरा सों कहै तो, प्रस्तुतांकुर। "समासोक्ति अप्रस्तुतै फुरै सुप्रस्तुत मांझ"। पहिले बिहारी ने यही दोहा बनायो पीछें महाराज जयसिंह जी कह्यो सतसई बनावौ ॥ २६८ ॥

टुनहाई सब टोल में रही जु सौति कहाय।
सुतौं ऐंचि प्यौ आपु त्यौं करी अदोखिल आय॥२६९॥

टुनहाई इति। नवदुलही सों सखीवचन—तेरी जो सौति है सो सब टोलनि में टुनहाई कहाय रही है, जो टोना जानै सो टुनहाई, सो तैं आय कैं आपु त्यौं आपनी ओर या नायक कौं ऐंचि कैं रूप सों खैंचि कैं सौतिन कौं अदोखिल करी, दोषरहित करी। टोनही होती तो नायक तेरे वस नहीं होतो, स्वाधीनपतिका। सौतिन कौं टोना दोष थो तामें गुन भयौ। लेशालङ्कार। किंवा, पिय को ऐंचिवो हेतु, अदोखिल हेतुमान, हेतु अलङ्कार। किंवा, युक्ति सों अदोखिल कियौ यातं काव्यलिंग भी सम्भवै है, याते सन्देह तें सङ्कर अलङ्कार भयौ ॥ २६९ ॥

देखत कछु कौतुक इतै देखौ नेकु निहार ।
कबकी इकटक ठटि रही टटिआ अँगुरिनि फारि ॥

देखत इति । नायिका पूर्वानुराग में नायक कों देखै है तब दूती नायक सों कहति है। देखत कछु कौतुक, तुम कछु कौतुक तमासा देखत हौ? इतें या ओर कों नेकु थोरो निहारि कैं देखो, कब की केतनी वेर सों एकटक होयकै डटि रही है थँटकार कारि निहारि रही है, यह अर्थ । टाटी कों आंगुरिन सों फारि कैं । स्वभावोक्ति अलङ्कार ॥ २७० ॥

लखि लोयन लोयननि के को इन होइ न आज ।
कौन गरीबनिवाजिवो कित तूठौ रतिराज ॥२७१॥

लखि इति । सखीबचन नायक सों । तुमारे लोयन नेत्र ताकै लोयन लावन्य लखि देखि कै को कौन नायिका इन नेत्रनि कै अधीन न होय, आजु ऐसी छवि बनी है, कौन गरीवनिवाजिवो, र ल एक है, रसिकप्रिया में । 'मुद्रित होत सखी बरही' बरही को अर्थ बलही करत है, अब को ठोर में व अरु की ठौर में रु कहत हैं, कौन गली अब नेवाजहुगे । किंवा कौन की गली कों नेवाजोगे?, कौन की गली कों पधारौगे?। कित कहां रतिराज काम राजी भयो है, गरीब को अर्थ गरीव करें नीरस होय, अभिमानी त्यागी तरुन इत्यादि नायक को लछन नहीं लगै । सन्देहालङ्कार है। 'सुमिरन भ्रम सन्देह जहँ लछन नाम प्रकाश' ॥ २७१ ॥

मन न धरति मेरो कह्यौ तूं आपने सयान ।
अहे परनि पर प्रेम की परहथ पारि न प्रान॥२७२॥

मन इति। सखी सिक्षा देति है—हमारो कह्यो तूं मन में नहीं धरति है नहीं राखति है, तूं अपनी सुज्ञानता तें। अहे सखि प्रेम को परनि में परि कै पराये के हाथ आपनो प्रान मति पारे, प्रेम में परे प्रान परवस होयगो याते प्रेम में मति परे, परनि अधिक पद है, किंवा रीति जानि यह कह्यो मन में नहीं धरै है यह हेतुमान ताको हेतु आपनो सयान। यातें हेतुअलङ्कार॥

बहकि न इहिं बहिनापुली जब तब बीर बिनास।
बचै न बड़ी सबील हूं चील घौंसुआ मांस ॥२७३॥

बहकि इति। कोई स्त्री को बहुत सुन्दर नायक है तासौं संभोग करिबे कों चाहति है, नायिका ने याकी स्त्री सों बहिनि कों नातो लगायो है, याकि घर वहै आवै है वाकि घर यह स्त्री पुरुष जात है, जाको सुन्दर पति है तासौं सखीवचन। यह बहिनापुली यह बहिनापा तासों तूं बहकै मति। हे बीर, स्त्री कौं भी बीर सम्बोधन करत हैं। जब तब, जब कबहूं बिनास है, बिगार है, लक्षना को अर्थ तेरो नायक वाके घर जात है सो वह संभोग करैगी। सबील को अर्थ इहां लक्षना सों जतन लीजिए, बड़ी सबील सों बड़े जतन सों, चील्ह के घोसुआ में चील्ह के घर में मांस नहीं बचै, चील्ह मादा सों परकीया मांस सो पुरुष जानिए। किंवा कुटनी नायिका सों बहिनापा लगायो है, वाकि घर नायिका जाति है, तहां सखीवचन। चील्ह कुटनी नायिका मांस, मांस पुल्लिङ्ग है, नायिका कों सम कहे दृष्टान्त में दोष नहीं औरि अर्थ वही। दृष्टान्त अलङ्कार॥ २७३॥

मैं तोसौं कइवा कह्यो तूं जिनि इनैं पत्याय
लगालगी करि लोयननि उर में लाई लाय ॥२७४॥

लगालगी करि लोयननि उर में लाई लाय ॥२७४॥ सखी की उक्ति पूर्वानुराग में परकीया सों।

मैं तोसों इति । सखी की उक्ति पूर्वानुराग में परकीया सों। मैं तोसौं कई बार कह्यो तूं जनि इनि लोयनि कों पत्याय, वि-श्वास मति करै । लगालगी, हमारे नेत्र लागे या तरह सों लो-यननि नेत्रनि उर में लाय लगाई । जब वाको दरसन नहीं तब मन व्याकुल होत है, कोई नायिका को वचन मन सों भी कनत है । लोयन सो लगालगो तहांई लाय चाहिए उर में लाय लागी याते असंगति अलङ्कार ॥ २७४ ॥

सन सूको बीत्यौ बनो ऊखो लई उखारि
हरी हरी अरहरि अजौं यह धरहरि चित नारि॥२७५॥

सन सूको इति । अनुसयना नायिका सों प्रियसखीवचन— सन को खेत सूखि गयो, बन कपास सो भी बीति गयो सूख्यो यह अर्थ । ऊखि कों भी उखारि लीनी । अरहरि रहरि, अजौं अब भी हरी हरी हरित है, हे नारि तूं चित कों यह धर-हरि करि, धरहरि कहिए रोकनवाला की क्रिया । चित कौं व्या-कुल मति होने देइ, हरी अरहरि है या कहिकैं चित कों रोको। किंवा, मानिनी सों सखीवचन । सन सनैश्वर सुक्रो आयो अनुकरन शब्द सूको, सो बीत्यौ अस्त भयौ शनि अस्त भयौ, शुक्र अस्त भयौ बनो नववधू है बनी ऊखो लई उखार, ऊखा प्रभात की ताने उखार लई नाम उघरि आई प्रकास भई, हरी हरी डहडह तेरो अर कहिए हठ है । हरि अजौं अब भी ताकों हरिहरी इ

करी, यह तरह सौं हरि नायक तामें है नारि चित्तकौं धरि राखौ मिलौ यह अर्थ। 'धर धरहरि चित नारि' यह भी पाठ है। तहां धरि को अर्थ धारन करो। श्लेषालङ्कार—

"श्लेष अलंकृति अर्थ बहु जहँ शब्दनि मैं होय" ॥ २७५॥

जौं वाके तन की दसा देखन चाहत आप ।
तौ बलि नेक विलोकिए चलि अचकां चुपचाप॥२७६॥

जो वाकी इति। विरह में सखीवचन नायक सौं—जो कछु वाकि तन की दशा है सो तुम आप देखिबे चाहत हौ, हे बलि, तौ अचकां चुपचाप चलि कैं विलोकिए, नहीं तौ तुमै आए सुनै प्रफुल्लित होयगी। सम्भावना अलङ्कार ॥ २७६ ॥

कहा कहौं वाकी दसा हरि प्रानन के ईस ।
बिरह ज्वाल जरिबो लखैं मरिबो भई असीस॥२७७॥

कहा कहौं इति। सखीवचन—हे हरि! हे प्रानन के ईस! प्रभु! वाके तन की दसा कहा क्या कहौं, विरह की ज्वाला ताको जरिबो प्रकास होनो। किंवा, ज्वाला में जरिबौ देखि कै, मरिबौ यह असीस भई, तुम मरो यह दुख छूटै यह आशीर्वाद है, किंवा बिरह ज्वाल जरिबौ लखैं देखैं यह जानिए है। मरिबौ जो मौति सो असीस भई बिना माथा की भई, मृत्यु कों किनहूं मार्यौ ऐसे समय में नहीं आवे है तो, यह अनुमान। पहिला अर्थ में मरिबो दोष सो गुन मान्यौ। लेषालङ्कार—

"जहां दोष में कीजिए गुन कल्पना सुलेस ।
कै गुन में ठहराइए दोष सुजानहु लेस" ॥ २७७ ॥

नैकु न जानी परति यौं पर्यौ विरह तन छाम ।
उठति दिए लौं नादि हरि लिए तिहारौ नाम ॥२७८॥

नैकु इति । सखीवचन नायक सौं—यौं या तरह सों वाकौ तन छाम क्षाम पर्यौ है दूबरी भई है, नैकु थोरी भी नहीं जानि परति है, देखिवे में नहीं आवति है । हे हरि तिहारो नाम लिए सौं दीआ की तरह नादि कै, बूझि कैं उठै है, जानिए है यामें प्रान नहीं है फेरि प्रकास उठै है बोलि उठै है, दीया जब अस्त होन लगै है तब प्रकासि उठै है । नायिका उपमेय, दीया उपमान, लौं वाचक, नादिवौ साधारन धर्म, पूर्णोपमालङ्कार ॥

दियौ सुसीस चढ़ाय लै आछी भांति अएरि ।
जापैं सुख चाहत लियो ताके दुखहि न फेरि ॥२७९॥

दियौ सु इति । नायक ने औरि नायिका सौं आसक्त होय कैं या नायिका कों दुख दियौ, फेरि वासों कछु दुखाय या नायिका कों मनायो चाहत है, तहां सखीवचन नायक सों । वा नायिका कों तुम दुख दियौ है सोई दुख तुम आपने माथा पैं चढ़ाय ल्यौ । आछी भांति सौ अएरि कैं अंगीकार करि कैं, जा नायिका सों तुम सुख लियो चाहत हौ, अब ताकै दुख कों मति फेरौ दुख पाइवे दो । किंवा, सान्तरस में, जो भगवान ने दियो है ताकों सीस चढ़ाय कैं ल्यौ जिन भगवान सौं सुख लियो चाहत हौ, ताकौ दियो दुख कौं मति फेरो, दुख फेरि कैं सुख लेनो विचित्रालङ्कार । "इच्छाफल विपरीत की कीजे जतन विचित्र" ॥ २७८ ॥

कहा लड़ैते दृग करे परे लाल बेहाल।
कहुँ मुरली कहुँ पीतपट कहूँ लकुट बनमाल ॥२८०॥

कहा लड़ैते इति। सखी नायक की दसा सुनाय नायिका कों मिलायो चाहति है, कहा तूं लड़ैते लाड़िले दृगनि कों किए नैननि के मारे लाल बेहाल अचेत परे हैं, मुरली आदि की सुधि नहीं है, निन्दा करि कहति है, नायिका की स्तुति होति। व्याजस्तुतिअलङ्कार, "व्याजस्तुति निन्दा मिसैं जहां बड़ाई होइ" ॥ २८० ॥

तूं मोहन मन गड़ि रही गाढ़ी गड़नि गुआलि।
उठै सदा नटसाल लौं सौतिनि के उर सालि ॥२८१॥

तूं मोहन इति। सखी स्तुति करति है नायिका की—हे गुआलि तूं मोहन के मन में जो सबै मोहै ताके मन में गाढ़ी गड़नि सों, ढीली गड़नि सों नहीं, फेरि तूं कबहीं नहीं निकरै। सौतिन के उर में तूं सालि उठै है नटसाल लौं टूटे तीर की तरह। असंगति अलङ्कार। गड़े मोहन के उर में, सालै सौतिनि के उर में ॥ २८१ ॥

बड़े कहावत आपु कों गरुवे गोपीनाथ।
तौ बदिहौं जौ राखिहौ हाथनि लखि मन हाथ ॥२८२॥

बड़े कहावत इति। सखी नायिका की स्तुति करि मिलायो चाहति है। हे गोपीनाथ तुम आपु कों बड़े कहावत हौ, गरुवे भारी बोझ को आदिमी कहावत हौ, तो मैं तुमैं बदौंगी मानौंगी जो याके हाथनि कों लखि कैं मन आपने हाथ में राखौगे आपने बस राखोगे यह अर्थ। परमार्थ पक्ष, पूर्वार्द्ध वही तरह, भक्त-

वाक्य, तो तुमें वदौंगो जो हमारो मन राखोगे, हमारो मनोर्थ पूर्ण करोगे, औ हमें हाथ में राखोगे आपने वस राखोगे, हमारे हाथनि कौं देखि कैं, हमारे हाथ में भलाई एक नहीं लिखी है, जो राखोगे तो वदौंगो । सम्भावनालङ्कार ॥ २८२ ॥

रही दहेंड़ी ढिग धरी भरी मथनिआ वारि ।
फेरति करि उलटी रई नई बिलोअनिहारि ॥ २८३ ॥

रही इति । नायक नजीक है नायिका को मन तामें आसक्त है, वाकी क्रिया देखि सखी सों सखी कहति है—दहेंड़ी ढिग नजीक धरी रही, मथनी जो है जामें दही डारिकैं मथै तामें दही डारे बिना पानी सों भरी, रई की भाषा पूर्व में रही ताकों उलटी करिकैं फेरति है, नई नवीन बिलोवनिहारि मथनवाली है, किंवा नई बिलोवनिहारि बिलोकनिहारि है, आगे वही कृष्ण कों देख्यौ है नहीं, दही मथनी में नहीं डार्यो, रई उलटी करी । भ्रान्ति अलङ्कार ॥ २८३ ॥

कोरि जतन करिए तऊ नागरि नेह दुरै न ।
कहें देत चित चीकनो नई रुखाई नैन ॥ २८४ ॥

कोरि इति । नायिका सखी सों नायक की प्रीति कौं नैन रूछ करि छपावै है, तहां सखीवचन—कोटि जतन करिए तौ भी हे नागरि प्रवीन नायक विषयक नेह दुरै नहीं छिपै नहीं स्नेह सों चीकनो जो चित्त है सो कहें देत है । नैन मे नई रुखाई है कपट सों बनाई रुखाई रूछता है, किंवा नैन कहें देत हैं याको चित्त नायक विषें चीकनो है स्नेह भयो है, नई रुखाई, ई क

हिए यह, न रुखाई रुकता नही है । किंवा, खण्डिता को वचन कोटि जतन करिए तौ भी वह जो नागरि है तुमें वस करिवे में प्रवीन है ताको नेह दुरै है नाहीं, नैननि मं नई रुखाई हमारे आगें बनावत हौ ताकौं तुमारो चीकनो जो चित्त है सो कहै देत है । किंवा, नैननि में जो नई रुखाई है सो चीकनो चित्त कों कहैं देत है, रुच नैन चीकनो चित्त कों कहै, विरुद्ध कारन तें कार्य्योत्पत्ति । विभावना ॥ २८४ ॥

पूछें क्यौं रूखी परै सगिबगि रही सनेह ।
मनमोहन छबि परकटी कहै कट्यानी देह ॥२८५॥

पूछें इति । सखीबचन लक्षिता सों—हमारे पूछे सों तू रूखी क्यौं परति है? कोप करति है? नायक सों स्नेह प्रीति करिकें सगि बगि रही है, अति मिलि रही है मनमोहन की छबि पर, तूं कटी टूक टूक होय रहीहै, अति आसक्त होय रहीहै। ऐसी बोलनि प्रेम में है "आपु टूक टूक भई गागरि छटूक है"। किंवा, मोहन की छबि तेरे मन में परकटी है प्रकट भई है । सो तेरी कट्यानी जो देह है सो कहति है, कण्टक से रोम उठि आए हैं ऐसी पुलकित देह । किंवा मनमोहन की छवि कों प्रकट करी है, कट्यानी देह ने तूं कहै क्यों नहीं, अन्यसम्भोगदुःखिता में भी लागै है, स्नेह दृढ़ कियो रोमाच सात्विक सों । काव्यलिङ्गअलङ्कार है ॥

तूं मति मानै मुकुतई किए कपटबत कोटि ।
जौ गुनही तौ राखिए आँखिन माहिं अगोटि ॥२८६॥

तूं मति इति । नायिका नायक सों मान कियो चाहति है,

तहां नायक के पच्छ को सखी को वचन। तूं नायक सों मुकुतई जुदागी मति मानै, किए कपटवत कोटि यह पाठ है। कपट की कोटि वात किए सों, नायक कपटी है, ऐसी तरह लोगनि के वात किए सों. कपटचित यह भी पाठ है, चित में जुदागी मति मानै कोटि कपट किए सों, तेरो मान को जो है रूप ताकों दे-खिवे के लिए, यह है। "पीछै तो लीजै मनाय एक वार देखी जाय मानिनी की सोभा', 'फेरि वाल वालम कों रूठिऐ सोहाय है', जौ तोहि विश्वास नहीं है तौ जैसें गुनहीगुनहगार ताको त-रह आंखिनही में अगोटि राखिये रोकि राखिए ननरिवन्द करि राखिए। पर्यायोक्ति अलङ्कार—"पर्यायोक्ति प्रकार है कछु रचना सों वात"। उपमा भी। किंवा, प्रात समै नायक आयो है, ना-यिका को रोष देखि सखी कहति है। ए तौ अव औरि वा ना-यिका पास नही जात हैं, तहां नायिकावचन! हे सखि तूं वा नायिका सों इनसों जुदागी मति मानै, कपट की कोटि वात किए सों. हे सखि तूंही कहै, ज्यौं गुनही जैसें नेत्र में डोरनि कों राखिए है कवहीं विश्लेष नहीं होय त्यौं वा नायिका कौं नेत्र में अगोटि राखिए, नेत्र में लाल डोरा वरनै है। "सितासित लोचन मे लोहित लकीर किधौं बँधे जुग मीन लाल रेसम के जाल मैं" किंवा गुरुवचन सिष्य सों। कपट की कोटि वात किए तूं आपु विषैं मुकुतई मुक्तपनों मति मानै, हे सिष्य भगवान कों गुनहगार की तरह आंखिन में अगोटि राखि नेत्र भगवान के रूप विषैं लगाव यह फलितार्थ ज्ञान कथनी सों सिद्धि नहीं॥ २८६॥

बालबेलि सूखी सुखद यह रूखे रुख घाम ।
फेरि डहडही कीजिये सुरस सींचि घनस्याम ॥२८७॥

बाल बेलि इति। मानी नायक सों—सखी की उक्ति। हे सुखद आगे सदा तुम सुख देत आए हो तासों तुमसों कहिवे में आवत है, किंवा सुख को खंडै सुख कौं दूर करै ताको नाम भी सुखद कहिए, वह बाला सो बेलिलता है। यह जो तुमारो रूषौ रुष रुक्ष तीर सो घाम धूप है, फेरि वाकों डहडही कीजिए पल्लवित कीजिए सानंद कोजिए, रस नाम जल को भी है, घनस्याम मेघ पक्ष में, सुंदर जो रस शृङ्गार तासों सींचिकैं हे घनस्याम, घनस्याम पद सों उपमा घन उपमान स्याम साधारन धर्म वाचक, उपमेय को लोप। बाल बेलि रूपक, घनस्यामही को जो विशेष्य कीजिए, तौ परिकरांकुर। ऊपर सों कृष्ण को विसेष्य कीजिए तो परिकर,—

"आसय लिए विशेष तरु भूषन परिकर जान।
आसय जहां विशेष में परिकर अंकुर मान" ॥ २८७ ॥

हरि हरि बरिबरि उठति है करि करि थकी उपाय ।
याको ज्वर बलि बैद ज्यौं तो रस जाय तु जाय ॥२८८॥

हरि हरि इति। सखी की उक्ति नायक सों—हरि हरि कष्ट विषै, हाय हाय जानिए. किंवा, हे हरि विरह की अग्नि सों बरिबरि उठति है, ताकों तूं हरि, विरह की आगि कौं हरि दूरि करौ। हम तौ उपाय सीतल इलाज करिकै थकीं, या नायिका की ज्वर है बलि आदर बिषे सबोधन, बलि जाऊँ तिहारी, बैद ज्यौं यथार्थ

बैद्य की तरह, बैद्य जैसे रस औषध आनंदभैरव आदि देकैं गमावत है, तैसें तेरे रस सौं इहां रस को अर्थ प्यार, तेरे प्यार सां जाय तौ जाय औरि सौं नहीं जाय, किंवा जौ तूं उहो जाय तौ तेरे रस सौं जाय, रस में श्लेष । संभावना अलंकार—

"जौ यौं कै तौ यों कहत संभावना विचार।
वकता ह्वं तो सेस जौ तौ लहती गुनपार" ॥ २८८ ॥

तूं रहि सखि हौंहीं लखौं चढ़ि न अटा बलि बाल ।
सबही बिनु ससिही उदै देहैं अरघ अकाल॥ २८९॥

तूं रहि इति । सखी नायिका की स्तुति व्यंग सौं करति है, गणेशचतुर्थी को ब्रत है, हे सखि तूं रहि तूं मति जाय, हौंही मैंही लखौं देखौं, बलि जाउँ तेरी, हे बाल अटारी पर मति चढ़ै, सबही सब कोई ससि कै उदै बिनाही तेरो मुख कों ससि जानि कैं अकाल में असमय में अरघ देहैं, सारी सौ मुख कछु छिप्यौ है तासों चतुर्थी कै चन्द्र की समता । पर्य्यायोक्ति,—

"पर्जायोक्ति प्रकार है कछु रचना सौं बात" ॥ २८९ ॥

दियौ अरघ नीचे चलौ सङ्कट भानैं जाय ।
सुचि सी ह्वै औरै सबै ससिहिं बिलोकैं आय ॥२९०॥

दियो अरघ इति । इहां भी सखी व्यंग लिए नायिका की स्तुति करति है, चन्द्रमा कौं अरघ दियो अटारी पर चढ़ि कैं, अब नीचें चलो, संकट चतुर्थी कौ मानैं, कछु भोजन करि खंडित करें जाय कै, सुचिति होय कैं थिर चित होय कैं, औरि सब नायिका ससि कौं बिलोकैं आय कैं, एकही बेर दोय चन्द्रमा देखैं तौ उत्पात की संका मानैं है, पर्जायोक्ति अलंकार ॥ २९० ॥

वे ठाढे उमदाहु उत जल न बुझै बड़वागि ।
जाही सों लाग्यो हियो ताहीं के हिय लागि ॥२९१॥

वे ठाढ़े इति। नायक कों देखि नायिका चेष्टा करैहै, तहां सखीवचन,। वे ठाढ़े वे नायक ठाढ़े हैं, उत उनकी ओर उमदाहु, उन्मत्त की सी चेष्टा करौ काई उमदाहु को अर्थ तेरी उमेद तें ठाढ़े हैं कहत हैं, हमारे गले सों क्यों लपटाति है। जल सौं बड़वागि समुद्र की आगि नहीं बुझति है, जो नायक सों तेरो हियो मन लग्यो है, किंवा जाके हो सौं हृदय सों तेरो हृदय लाग्यो आगें जिन तोहि छाती सों लगाई है, ताही के हिए सौं लागी। अर्थान्तरन्यास अलंकार—

"कह्यो अर्थ जहँ पोखिए औरि अर्थ सो मीत।
सो अर्थान्तर न्यास है बुधजन करत प्रतीत" ॥ २८१ ॥

अहे कहे न कहा कह्यौ तोसों नन्दकिसोर ।
बड़बोली कत होत बलि बड़े दृगनि के जोर ॥२९२॥

अहे इति। मानिनी सों सखी की उक्ति, अहे नायिके तूं न कहे है, निषेध कों कहै है। नाही करै है यह अर्थ, तोसों नंद किसोर ने कहा कह्यौ को न वचन कह्यौ, हे बलि तूं वड बोलीं क्यों होति है वड़ो बोल क्यों कहति है, जो तोहिं कह्यौ न चाहिये ऐसो कहति है, वड़े जे हैं तेरे दृग ताके जार सों वल सों सुंदरता सराहि राजी करति है। यामें बड़ो वात काढ़नी, किंवा हम तोहि मनावति हैं तूं नांही कहति है इह वड़ी वात, तेरे मुख माफिक नहीं, हम मनावैं हैं तूं नांही कहै है, किंवा प्रश्नोत्तर है, अहे कहै

न, अहे कहै क्यौं नहीं, कहा कह्यौ तोसौ नंदकिसोर, यह सखी को प्रश्न। तहां नायिका की उक्ति तोसों नंदकिसोर तोसों है, तोसों आसक्त है, यह बोलचाल है कि फलानी सों फलाना है, तब सखी क्रोध सों कहति है किवड़िबोली तूं क्यों होति है, वड़े दृगनि के जोर सें, किंवा, अहे तू तो नाही कहति है, नंदकिसोर नै उदाससूचक कहा एतना कह्यौ, कहा तुमारे इहां आवौं, किंवा कहा तुमारो प्यार, कहा तुम हमारी बराबरी प्रीति करोगी. ऐसें जानिए, वड़े लोगनि कों दृगनि को जहां जोर होय मिलाप होय तहां बोलो कहिए परिहास, बोली बोली लोग कहत हैं, तहां बड़ी बात तो केतनी नहीं होति है, वड़िबोली पहिले अर्थ में, लोकोक्ति अलंकार—"कहनायति है लोक की लोकोकति है सोइ"। जहां प्रश्न में उत्तर तहां चित्रालंकार॥ २८२॥

लहिं प्रसादमाला जु भौ तन कदंब की माल॥
मैं यह तोही मैं लखी भगति अपूरब बाल॥२९३॥

मैं यह दूति। ऊपरी सखिन में नायिका परकीया बैठी है नायक नै माला पठाई है सखी प्रसादमाला को नाम लेकैं देति है, औरि कोई जानि न सकै याकैं लिए, ऊपरी सखी जानि गई है, परिहास करिकैं कहति है, नायिका लचिता। हे वाल अपूरब पहिले कहूं ऐसी देखिवे में नहीं आई, भक्ति को अर्थ बक्षा परिहास करनवाली ताकें प्रभाव तें प्रीति जानिए, मैं तोही यह अपूर्व प्रीति देखी, लगनि अपूरब वाल यह भी पाठ है, पाय कैं प्रसादमाल तेरो तन कदंब की माला भई, नायक

गल के संबंध तें नायिका कों रोमांच भयो, यातें कदंब की माला की समता, कदंब की माला सी जानिए, ठाकुर के पंडा सों नायिका की प्रीति है, यों भी लगावे हैं, उपमा, धर्मवाचकलुप्ता ॥

ढोरी लाई सुनन की कहि गोरी मुसुक्यात ।
थोरी थोरी सकुच तें भोरी भोरी बात ॥ २९४ ॥

ढोरी इति। सखी की उक्ति सखी सों—मुग्धा नायिका। नायक नें सुनिवे की ढोरी वानि लगाई है, थोरी थोरी सकुच तें लाज तें भोरी भोरी बात, कहि को अर्थ कहै है जानिए, गोरी कहै है नायक मुसुक्यात है, किंवा, भोरी सो भोरी बात कहति है, स्वभावोक्ति अलंकार, छेकानुप्रास, ढोरी गोरी "जहां बीच पद है परै अच्छर समता आय" ॥ २९४ ॥

चित दै देखि चकोर त्यौं तीजै भजै न भूख ।
चिनगी चुगै अँगार की चुगै कि चन्द मयूख ॥२९५॥

चित दै इति । नायिका ने नायक कों औरि नायिका सौं आसक्ति सुनिकें मान कियो है, तहां सखीवचन—चित देकें तूं चकोर त्यौं चकोर की ओर देख तीसरी वात सों भूख चाह नहीं वाकी भाजे, यही दोय बात की वृत्ति है, कै अङ्गार की चिनगी चुगै है, कै चन्द्रमा को मयूख किरन ताकौ चुगै है, कै यह विरहाग्नि को भोग करैगो, कै तुमारो मुखचन्द मयूख को भोग करैगो, अन्योक्ति में भी लागै है, कै फकीरी लेइगो, कै राज्यसुख करैगो। पहिले अर्थ में दृष्टान्त ॥ २९५ ॥

कबकी ध्यान लगी लखौ यह घर लगिहै काहि।
डरियत भृंगी कीट लौं जिन वहही ह्वै जाहि॥२९६॥

कब की इति। सखी सों सखीवचन—पूर्वानुराग है। कब की कितनी बेर की यह नायिका नायक के ध्यान सों लगी है। मैं लखों हौं, देखौं हौं, यह जो याको घर है सो काहि सों कौन सों लगिहै बँधिहै, कौन याके घर को सलूक करि सकैगो। डरियत है भृङ्गी यो कीट क्रम की तरह जनि वहही नायक रूपही ह्वै जाय। भृङ्गी को नाम संस्कृत में डिडीरव, पूरब में बिरिनी, सो कीरा पकरि कैं आपनो स्वरूप करि लेत है, गम्योत्प्रेक्षालङ्कार॥ २९६॥

रही अचल सी ह्वै मनो लिखी चित्र की आहि।
तजे लाज डर लोक को कहो विलोकति काहि॥२९७॥

रही इति। नायिका सों सखीवचन—अचल जड़ तरुलता ताहि सरीखी होय रही है, मानो चित्र की लिखी, आहि को अर्थ ही, लोक की लाज डर कौं तजें छाड़े कहो तुम काहि बिलोकति हो?। उत्प्रेक्षालङ्कार॥ २९७॥

ठाढ़ी मंदिर पै लखै मोहन दुति सुकुमारि।
तन थाकेहू ना थकै चख चित चतुर निहारि॥२९८॥

ठाढ़ी इति। सखी सों सखीवचन—मन्दिर पैं ठाढ़ी मोहन कौं देखै है, उनकी अङ्ग अङ्ग की दुति ताकौं देखै है ऐसें लगाइये नहीं तो मोहन कौं देखै है इतनाई कहैं दुति आय जाती

फेरि दुति अधिक पद होतो। किंवा मोहन को दुति कों सुकुमारि नायिका ठाढ़ी है ताको दुति मोहन लखै है, औरि वैसेंही थकी है तऊ नैन मन नहीं थकै हैं। विशेषोक्ति अलङ्कार॥२९८॥

पल न चलैं जकि सी रही थकि सी रही उसास।
अबहीं तन रितयो कहा मन पठयो किहि पास॥२९९॥

पलन इति। सखी की उक्ति, परिहास करति परकीया नायिका सौं—पलक नहीं चलै है, जकि सी जड़ सी रही हौ, उसास निसास सो भी थकि सी रही है, मन्द चलै है यह अर्थ। अबहीं राति भई नहीं दिनहीं में, तन शरीर कों रितयौ खाली कियौ। मन कों किहिं पास कौन के पास पठयौ परनायक के पास। किंवा कौन पति ने किंवा उपपति नें आपनो मन तुमारे पास पठायो है, तुमें यादि करी है यह अर्थ। जकि सी थकि सी, इहां सौं मानो के अर्थ मै है। अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा॥२९९॥

नाक चढ़ै सीवी करै जितै छबीलो छैल।
फिरि फिरि भूलि वहै गहै प्यौ ककरीली गैल॥३००॥

नाक चढ़ैं इति। सखी सों सखी की उक्ति। नायक अटारी पर बैठ्यौ है, एक राह घर कों जात है, एक राह नायक की ओर जात है, नायिका घर कों जाति है, नायक कों देखि कै आपने घर की याद भूली, कांकर पाव में गड़े तब नायिका की नाक चढ़ै है, सीवी सीत्कार वीत्कार करै है। जितै जा ओर कों छबीलो छैल है, फेरि फेरि भूलि कै वह जो है पी को ककरीली गैल कांकर जामें बहुत हैं, ऐसो राह कों गहै है। किंवा,

नायिका अटारी पर बैठी है, नायक आपने घर कों जात है, तासों नायक को मन हरि गयौ, फेरि फेरि भूलि कैं प्यौ जो नायक सो नायिका की काँकरीली गैल कौं गहै है, ताको कार्य नायक में नहीं सौवी कारनो नायिका में। असंगति ॥ ३०० ॥

औरि वही अर्थ। नायिका को नाक चढ़ाइवो सी वीं करिवो

इति श्रीहरिचरणदासकृत विहारीसतसई टीका हरिप्रकाश, तहां तृतीय शतक व्याख्यान में तृतीय उल्लास: ॥ ३ ॥

हित करि तुम पठयो लगै वा बिजना की वाय।
टली तपति तन की तऊ चली पसीना न्हाय॥३०१॥

हित दूति। दूती की उक्ति नायक सों पहिले वासों हित करिकैं तुम पठायो, वा बिजना जो तुम लिये थे ताकी वाय पौन लगे सों तन की तपति गरमी टली, तऊ तोभी पसीना सों न्हाय चली, तुमारे हाथ को सम्बन्ध बिजना सों थो तासों प्रस्वेद सात्विक। "सम्बन्धे प्रत्यक्ष तें लहि कछु इक व्यवधान"। विरुद्ध तें कार्य्य होय। विभावना—

"काहू कारन ते जबै कारज होय विरुद्ध" ॥ ३०१ ॥

नाम सुनतहीं ह्वै गयो तन औरै मन और।
दबै नहीं चित चढ़ि रह्यो अबै चढ़ाए त्यौर ॥३०२॥

नाम दूति। नायिका को स्नेह नायक विषें लक्षित करि सखी कहति है। किंवा लघुमान में सखीवचन—नायक को नाम सुनतही कै तेरो तन मन औरै होय गयो, तन पुलकित भयो मन

राजी भयो। अब त्यौर चढ़ाये मों रुख चढ़ाये सों, चित्त में चढ़ि रह्यो है नायक। किंवा नायक को स्नेह सो दबै है नहीं, छपै है नहीं, मैं जानि गई, लच्छित स्नेह जानिये, औरि दिन तन मन औरि तरह अब औरि तरह। भेदकातिशयोक्ति—

"औरै पद जहँ दीजिये अधिकाई के हेत" ॥ ३०२ ॥

नैंकौ उहिं न जुदी करी हरखि जु दी तुम माल।
उर तें वास छुट्यौ नहीं बास छुटैंहू लाल ॥३०३॥

नेकौ उहिँ इति। दूतीवचन नायक सों—हे लाल; हरखि कैं जो माला तुमने दीनी उहिं वह नायिका ने नेको थोरो काल भी जुदी न करी पहिरेंही रही, उर तें माला को वास रहनो छूट्यौ नहीं, बास गन्ध छूटेहू। जुदो जुदी वास वास पद फेरि आयो यातें जमक। वास छुटें बास नहीं छूट्यौ। विरोधाभास—

"भासै जहां विरोध सो वहै विरोधाभास" ॥ ३०३ ॥

सरसत पोंछत लखि रहत लगि कपोल के ध्यान।
कर लै प्यौ पाटल विमल प्यारी पठए पान ॥३०४॥

सरसत इति। सखी सों सखी कहति है—पाटल थोरी ललाई जामें, ऐसे विमल निर्मल प्यारी ने पान पठाये हैं, ताहि पान कौं प्यौ नायक कर में लेकै सरसत है। अनुरागसहित होत है, पोंछै है, वा नायिका के कपोल के ध्यान सों लागि कैं, पान कौं लखि रहत है, ऐसेई गोरे वाके कपोल हैं। स्मृतिअलङ्कार।

"सुमिरन भ्रम सन्देह यह लच्छन नाम प्रकाश" ॥ ३०४ ॥

मनमोहन सों मोह करि तूं घनस्याम निहारि ।
कुंजबिहारी सों बिहरि गिरिधारी उर धारि ॥३०५॥

मनमोहन इति । सखीवचन मानिनी सों—नायक पास है, एक अर्थ तो सूधो, मनमोहन सों मोह करि ऐसे जानिये, चारि नाम कों कछु फेरि कै लगावनो, तेरे मन विषै मोह प्यार नहीं, सौं को अर्थ शपथ; सौंह है मैं शपथ करि कहति हौं, मोह प्यार करि, तूं घन है कठोरता सहित है, स्याम श्रीकृष्ण खड़े हैं; तिन्हें निहारि तूं देखि, कुञ्जबिहारी जो यह नायक है तेरे संग में बहुत कुंज में बिहार कियो है, तासौं तूं बिहरि, बिहार कर, फेरि सखी पूछै है, गिरि जो है हमारी बानी ताकों तूं धारि ताकों तूं धारन कियो मान्यौ तो उर पैं नायक कौं धारि धारन करि राखौ, छाती सों लगावो यह अर्थ । किंवा, स्याम जो है कुंजबिहारी ताहि निहारि कैं बिहरि बिहार कर, तोहि सों सपथ है । गिर शब्द सों साध्यवसाना लक्षना करि कुच लिए, बर्नन है । कुच गिरि चढ़ि अति थकित ह्वै, गिरधारी जो है, उर तापैं तूं धारि धारन कर ।

"रोप्यमान जहँ रहत है रोप्य विषै नहिं होय ।
रोप्य विषै जान्यो परै साध्यवसाना सोय" ।

कुच विषैं गिरि को आरोप्य कियौ, गिरि आरोप्यमान, कुच आरोप्य विषैं, जाकौं राखिये सो आरोप्यमान, जाहि विषैं राखिये सो आरोप्य को विषय, ठिकाना ताकी प्रतीति जहां होय । या अर्थ में रूपकातिशयोक्ति । "अतिसंयोक्ति रूपक जहां केवलही उपमान । कनकलता पर चन्द्रमा धरें धनुष द्वै बान" ॥ किंवा,

गुरु शिष्य कौं उपदेश करै है। विषय सों मोह छोड़ि दे, मनमोहन सों मोह प्यार करि, मन कौं मोहित करै है, ऐसी उनमें शक्ति है। सुन्दर देख्यौ चाहै तो वह घनस्याम है बहुत सुन्दर है, आनन्ददायक है, जो विहार करिबो चाहै तो सख्यभाव करि कुंञ्जबिहारी सहित विहर बन में अनेक तरह की क्रीडा गोचारन आदि कर, गिरधारी कहै इन्द्र को जीतनवारो है ताकौं तूं उर धारि, हृदय में ध्यान करि तोहि काहू सों भय नहीं होयगो। किंवा चारि नाम-सों नायक को लच्छन जतायो। मनमोहन सो सुन्दर, औ भव्य निरोग जतायो जो सुन्दर होयगो भव्य होयगो सो मन कों मोहैगो। घनस्याम सों दाता जतायो, जैसें घन जल कौं बरसै है, ऐसें यह सपति कौं देत है, कुंजबिहारी सों केलि कला में प्रवीन जतायो, औ बिहार में समय को अनुकूल वस्त्र चाहिए। धनो विना बिहार नहीं सम्भवै, औ सुचि रुचि भी जतायो, सुचि शृङ्गार में जाकों रुचि चाह होत है सोई विहरत है बिहारी को अर्थ सुचि को अर्थ पवित्रता लीजिये तो मनमोहन पद सों काढ़िये जो पवित्र होयगो सो मन कों मोहै सो मन कों आछो लागैगो यह अर्थ। अपवित्र सो ग्लानि उपजै है, औ कुलीन है यातें मन कौं आछो लागत है, गिरधारी को अर्थ गिरि कों धारन करि ब्रज की रच्छा करी इन्द्र को माऱ्यो नहीं, यातें छमी जानिए। औ इन्द्र कौं खातिर में नहीं ल्यायो यातें इन्द्र कौ पूजा उठाय दीनी, इन्द्र क्या करैगो यातें अभिमानी जानिए, ऐसो नायक सो तूं विहरि उर परि धारि।

"अभिमानी त्यागी तरुन केलि कलानि प्रवीन।
भव्य छमी सुन्दर धनी सुचि रुचि सदा कुलीन"॥

परिकरांकुर—"साभिप्राय विशेष्य जहँ परिकर अंकुर जानि"॥ १०५॥

मोहि भरोसो रीझिहै उझुकि झाँकि इक बार ।
रूप रिझावनिहार वह ए नैना रिझवार ॥३०६॥

मोहि इति। सखीवचन परकीया सौं—मोहि भरोसा है तेरे नैन देखि कैं रीझैगो झरोखा में उझुकि कैं उचकि कैं एक बार तूं झाँक, वह नायक रूप करिकैं रिझावनिहार है, ए तेरे नैन रिझवार हैं, वे रिझावनिहार हैं ए रिझवार। जथाजोग को संग है, समालङ्कार—"अलङ्कार सम तीनि विधि जथाजोग को संग"॥

कालबूत दूती बिना जुरै न और उपाय ।
फिरि वाकौं टारै बनै याके प्रेम लदाय ॥३०७॥

कालबूत इति। कलहन्तरिता नायिका मन में विचारि करति है—नायक कौं मनायवे कौं मिट्टी को छैना को गुम्मज सो बनावत है, ताको नाम कालबूत, तापैं गुम्मज चुनत है, कालबूत सोई है दूती ताहि विना और उपाय सौं गुम्मज नहीं जूटै औ रूठ्यो है जो नायक तासौं स्नेह भी नहीं जूटै, फेरि ताहि कालबूत कौं औ दूती कौं टारे बनै दूरि किए बनै, प्रेम सो है लदाव ताकी पाकि पक्क भये दृढ़ भये पर, अभेद रूपकालङ्कार—

"है रूपक द्वै भांति को मीलित रूप अभेद।
अधिक न्यून सम दुहुन के तीनि तीनि ए भेद"॥ ३०७॥

गोप अथाइनि तें उठे गोरज छाई गैल ।
चलि वलि अलि अभिसारिके भली सँझोखी सैल ३०८

अथ अभिसारिका वर्नन—गोप इति। सखीवचन नायिका सौं—दरवाजा पर लकरा डारि देत है। किंवा तखतपोस रहत

है तापैं लोग आनि बैठे है सो अथाई, गोप अथाइहि तें उठे है, गोरज गैल राह मैं छाई है, तूं जाति कौ नहीं देखि परैगी, हे अभिसारिके हे अलि हे सखि बलिजाउं तेरी तूं नायक पास चलि, सैल समर्थित कियौ। काव्य लिंग ॥ ३०८ ॥

सघन कुंजघन घन तिमिर अधिक अँधेरी राति ।
तऊ न दुरिहैं स्याम यह दीपसिखा सी जाति ॥३०९॥

सघन इति। नायक आपने संग नायिका कौं अभिसार करावै है, तहां सखीवचन—सघनकुंज है, घन निविड, घन मेघ को तिमिर अन्धकार है, यातैं अधिक अँधेरी राति है। हे स्याम दीपसिखा सी जो यह नायिका है, सो तुमारे संग जात कै यद्यपि तुम स्याम हौ तोभी नहीं दुरिहै नहीं छपैगी। दुरिवे को कारन सघन कुंज आदि यद्यपि है तोभी नहीं दुरैगी, संभावना करिये है, यातें ऊहालङ्कार। यह पद सों नायिका जानिए। नायिका उपमेय, दीपसिखा उपमान, सी वाचक, नहीं दुरिहै धर्म, पूर्णोपमा। वाचक उपमेयलुप्ता होति है, उपमेय लुप्ता आठ भेद में नहीं, यह पद सों नायिका लीजिये ॥ ३०९ ॥

फूली फाली फूल सी फिरति जु विमल विकास ।
भोर तरैआ होंहिगी चलति तोहि पिय पास ॥३१०॥

फूली इति। सखीवचन नायिका सौं—फूली फाली फूल सरीखी है, औ विमल निर्मल है, प्रकास जाके ते नायिका तेरे आगे भोर प्रात समय की तारा सी होंहिगी प्रकासहीन होंहिगी तोकौं पिय के पास चलत कै, सौतिनि के सौन्दर्य्य कहि नायिका के रूप की अति अधिकाई भई। उपमालङ्कार ॥ ३१० ॥

उग्यो सरद राका ससी करति न क्यों चित चेत ।
मनो मदन छितिपाल को छाँहगीर छबि देत ॥३११॥

उग्यौ इति । अभिसार करावति है, किंवा मान छोड़ावति है सखी, ताको वचन । सरद कुआर कार्त्तिक ताकी राका पूर्णमासी ताको ससी उग्यो है, चित्त में चेत ज्ञान क्यौं न करै, जो तोहि कर्तव्य है ताकौं याद कर, कैसौ जानि परै है, मानो मदन राजा को छांहगीर छत्र सो छवि देत है सोभित है । ससि मैं छत्र की सम्भावना । उक्तास्पदवस्तुत्प्रेक्षा ॥ ३११ ॥

निसि अँधियारी नील पट पहिरि चली पिय गेह ।
कहो दुराई क्यों दुरै दीपसिखा सी देह ॥ ३१२ ॥

निसि इति । चलि की ठौर में चली पर्‍यौ है । "गुरु लघु लघु गुरु होत है निज इच्छा अनुसार" । ऐसो कहैं आधे दोहा में रूपगर्विता को उत्तर, राति अँधेरी है, तूं नील वस्त्र पहिरि कैं पिय के घर कौं चलि, चली जानिए, तहां नायिकावचन । तुम कही दीपसिखा सी देह है हमारी सो छपाये सों क्यौंकरि छपै, कैसें छपि सकै । पहिले सखीवचन तब नायिकावचन । किंवा, सखी नायिका सों पूछै है, कि ऐसो समय में नायक के घर चली ही रूप छपाय कैं, यह दीपसिखा सी देह क्यौंकरि दुरैगी, तुम कही, नहीं दुरिवो साधारनधर्म । पूर्णोपमा । दुराइवे को हेतु है दुरिवो कार्य नहीं होयगो । विशेषोक्ति । "विशेषोक्ति जो हेतु सौं कारज उपजै नाहिं" । क्यौंकरि दुरै नहीं दुरैगी । काकुस्वर सौं वक्रोक्ति । "वक्र उक्ति स्वर श्लेष सों अर्थ फेरि जो होय" ॥३१२॥

छपै छपाकर छिति छवै तम ससिहरि न सँभारि ।
हँसति हँसति चलि ससिमुखी मुख तें अंचल टारि ॥

छपै इति। सखी की उक्ति अभिसारिका सों—छपाकर चन्द्रमा छपै है, छप्यो यह भी पाठ है, छिति भूमि तामें अन्धकार छावै है, छयो यह भी पाठ है, तूं ससिहरै मति डरै मति, सँभारि चेत करि उत्तरार्द्ध स्पष्ट । ससिमुखी ससि सों सुन्दर मुख वाचकधर्म लुप्ता। उपमालङ्कार ॥ ३१३ ॥

अरी खरी सटपटि परी बिधु आधे मग हेरि ।
संग लगे मधुपनि लई भागन गली अँधेरि ॥३१४॥

अरी इति। अभिसार औरि दिन कियो थो ताकी हकीकति सखी सों नायिका कहति है, अरी सखी खरी अति सटपटि व्याकुलता परी तादिन, आधे पथ में बिधु चन्द्रमा कों देखि कै, एक तौ हमारो मुख को प्रकास, दूसरे चन्द्रमा उग्यो, यातें खरी सटपटि, औ आधे पथ कहूं छपिबे की ठौर नाहीं, प्रकास भयो अङ्ग के सुगन्ध पाय, फूलनि कों छोड़ि संग में लगे जे मधुप भौंरा तिन तें भागिन सो गली । किंवा, कुंजगली ताको अँधेरी करि लीनी, मधुपनि गली अँधेरी करी यातें । प्रहर्षन अलङ्कार—"तीनि प्रहर्षन जतन विन वांछित फल ज्यो होय"। किंवा मानिनी सों सखीवचन । हे मानिनी तूं खरी अति अरी है हठ करि रही है, यातें मोहि सटपटि व्याकुलता परी है, बिधु श्रीवत्सलांछन नाम कृष्ण को है, बिधु तोहि आधे मग गैल तहां बैठे तोहि हेरि रहे हैं। किंवा बिधु कों तूं आधे मग में हेर देख

आयौ जान यह अर्थ । आधे मगु कौन ठौर सखी ठिकाना व-
तावै है, तादिन तूं अभिसार किये जाय थी, पद्मिनी में भौंर र-
हत है, किंवा उड़ि कै फूलनि तें संग लगे जे मधुप तेरे अङ्ग के
सुवास तें तिन ने भागन याको अर्थ भा कहिए प्रभा ताके गन
समूह ताहि सहित गली कों अंधेरि लीनी, अन्धकार करि लीनी
घेरि लीनी गली नहीं नजरि आवै है यह अर्थ ॥ ३१४ ॥

जुवति जोन्ह मैं मिलि गई नैकु न होति लखाय ।
सौंधे कै डोरैं लगी अली चली सँग जाय ॥ ३१५ ॥

जुवति इति । सखी सों सखीवचन—यह अभिसारिका जो जुवति है सो जोन्ह चांदिनी मं मिलिगई है, नेकु थोरो भी आपु कों लखाय कै, कोई तरह सों जनाय कै, प्रगट नहीं होति है । किंवा, लखाय पद कों रूढ़ करै तो जाहिर नहीं होति है, ऐसें भी जानिये । सोंधा सुगन्ध ताकी डोरि सौं ताके आश्रय सों अली सखी संग चली जाय है, किंवा अङ्ग औ बस्त्र तास को मो जोन्ह में मिल्यौ, कैस कलङ्क काला सें मिले, अङ्ग में सोंधा अरगजा लगायो है ताको रंग काहू सों नहीं मिले, ताकी रखी सों आश्रय सों लगी अली संग चली जाति है । उन्मीलित अलङ्कार ।
'उन्मीलित सादृश्य ते भेद फुरै तव मान" ॥ ३१५ ॥

ज्यौं ज्यौं आवति निकट निसि त्यौं त्यौं खरी उताल ।
झमकि झमकि टहलैं करैं लगी रहचटैं बाल ॥ ३१६ ॥

पिय मिलन उछाह—ज्यौं ज्यौं इति । सखी सों सखीवचन—ज्यौं ज्यौं जैसें जैसें निकट नजीक निसा आवति है, त्यौं त्यौं

तैसें तैसें खरी अति जलदी, झमकि झमकि टहल कौं करै है, नायक सों बेगि मिलों, या मनोरथ सों, बाल रहचटैं, लालच लगी यह अर्थ। प्रौढ़ा नायिका नायक परदेश सों आयो जानिए। स्वभावोक्ति ॥ ३१६ ॥

झुकि झुकि झपकौंहैं पलनि फिरि फिरि जुरि जँभुआय।
बीदि पियागम नीद मिस दीं सब अली उठाय ॥३१७॥

झुकि झुकि इति। सखी सों सखी—नींद सों झुकि झुकि कें पलक कों झपकौंहैं करिकैं, निद्रा सों विवस करिकैं, फिरि फिरि फेरि फेरि जु पादपूरन, री कों ह्रस्व पढ़्यौ री सखी जँभाति है, पिय कौ आगम बीदि जानि कैं नींदमिस नीद के छल सों सखिन कों उठाय दीनी, छल करि इष्ट साध्यौ। पर्य्यायोक्ति॥

अँगुरिनि उचि भरु भीत दै उलमि चितै चख लोल।
रुचि सों दुहुनि दुहूनि के चूमे चारु कपोल ॥३१८॥

अँगुरिनि इति। सखी सों सखी। पात्र की अँगुरिनि सों ऊँची होय, भीति बीच में है, भार भीति पैं देकरि, उलमि लटकि कैं लोल चंचल नेत्र सों चितै कैं रुचि सौं चाह सों दुहुनि दम्पति ने दुहूनि कौं परस्पर चूमे चारु सुन्दर कपोल कों। स्वभावोक्ति ॥ ३१८ ॥

चालन की बातैं चली सुनत सखिनि के टोल।
गोएऊ लोयन हँसति विकसत जात कपोल ॥३१९॥

चाले की इति। सखी सों सखी। ससुरे जाने की बात चली सखिन के टोल समूह में सुनति कैं, लोयन कौं गोयें छपायें भी

हँसति है तौभी कपोल विकसत जात हैं हँसी सों, किंवा मुदिता नायिका की हकीकति सखी सों सखी कहति है, चालि की बात सासुरे जाने की जो बात, सो चली चल विचल भई नहीं ठहरी यह बात सखिन के टोल में सुनत के, औरि वैसेंही, स्वभावोक्ति॥

मिसहीं मिस आतप दुसह दई औरि बहकाय ।
चले ललन मनभावती तन की छाँह छपाय ॥३२०॥

मिसहीमिस इति। सखी सों सखीवाक्य—मिस छल करिकैं आतप धूप दुसह है या बात कहिकैं औरि ऊपरी सखी कों बहकाय दीनी तुम सब घरें जाहु। "चले ललन मनभावती तन की छांह छपाय"। ललन मनभावती मन कों भावै ऐसी जो प्रिया ताकौं तन की छाया में छपाय कैं, दोपहर में छाया पाँवही के नजीक होति है, तहां ऐसें जानिए। ललन मनभावती कब चले सखी पूछे है तासों सखी कहै है, तन की छाया जब छपि गई, दो पहर में यह अर्थ। किंवा ललन चले मनभावती के तन को जो है छांह छाया कान्ति कौं भी छाया अमर में कह्यौ है, ताकौं छपाय कें, ऊपर वस्त्र डारि के परकीया है यातें छल करि इष्ट साध्यौ यातें, पर्य्यायोक्ति॥ ३२०॥

ल्याई लाल विलोकिए जिय की जीवनमूल ।
रही भौन के कौन में सोंनजुही सी फूल ॥ ३२१ ॥

प्रथममिलन में दूतीवचन—ल्याई लाल इति। हे लाल मैं यह नायिका कौं ल्याई, बिलोकिए, कैसी है, जीव को जीवे को मूल कारन या विषे है। किंवा इकार तुकान्त के लिये है, जीव

जीव के जीवन की मूल है, अमर जो जीव सोभी याहि देखे विना मरे, शरीर की क्या वात, घर के कोन में पीत चँवेली सी फूलि रही है, जीवनमूल नायिका उपमेय, सोनजुही उपमान, सी वाचक, फूलिवो धर्म। उपमालङ्कार। कोई खण्डिता को वचन कहै है, तहां ऐसें जानिए, प्रात नायक कों देखि कें कहति है ल्याई लाल, हे लाल तुमें दूतो ल्याई है हम नहीं बुलायो है, जीव की जीवनमूल जो है वह नायिका ताकौं विलोकिए जाय कैं, जो तुमारे भौन के कोन में सोनजुही सी फूलि रही है॥३२१॥

नहिं हरि लौं हियरा धरो नहिं हर लौं अरधङ्ग ।
एकतहा करि राखिए अङ्ग अङ्ग प्रति अङ्ग ॥३२२॥

नहि हरि इति। दूतीवाक्य नहि हरि लों हियरा धरौ, लौं को अर्थ जैसें हरि जैसें लक्ष्मी कौं हृदय में धरी है, ऐसें तुम हृदय में मति धरि राखौ, सब अंग सौं लगावौ, यह अर्थ। हर महादेव की तरह आधे अंग में मति धरौ, एकत्रही करि राखिये, आपने अंग अंग में प्रति वाके अंग। किंवा खण्डिता की उक्ति। हरि चन्द्रमा ताने जैसें कलंक हृदय में राख्यौ है, तैसें मति राखौ हर जो है शिव तिन जैसें आधा कंठ में विष राख्यौ, कंठ अंग है ताको आधा लियो तैसें तुम मति राखौ, आपने अङ्ग अङ्ग में वाको एकत्र करि राखिये मिलाय राखिए, नेत्र श्रवन हृदय इत्यादि में, प्रति अङ्ग, प्रति की तरह जैसें एक पोथी की दस प्रति होय, पै दसौ पोथी में शब्द एकही पढ्यौ जाय, अङ्ग तरह कोभी कहिए है। यातें पर्यायोक्ति अलङ्कार॥ ३२२॥

रही पैज कीनी जु मैं दीनी तुमहिं मिलाय।
राखौ चम्पकमाल ज्यौं लाल गरैं लपटाय ॥३२३॥

रही पैज इति। दूतीवाक्य—हे लाल मैं जो पैज प्रतिज्ञा कीनी वा नायिका कों मिलाइवे की सो रही, मैं मिलाय दीनी आगे स्पष्ट। आक्षिप्त नायिका उपमेय, चम्पा की माला उपमान, सी वाचक, लपटाइवो धर्म। उपमालङ्कार ॥ ३२३ ॥

रही फेरि मुंह हेर इत हित समुहें चित नारि।
डीठि परत उठि पीठ की पुलकैं कहत पुकारि॥३२४॥

रही फेरि इति। नायिका की प्रति लक्षित करि सखी कहति है—नायक कौं हेरिकैं देखिकैं मुह इत या ओर कौं फेरि रही हैं, मुह फेरैं कहा भयो, नायक की दृष्टि के परतहीं उठी हैं जा पीठ की पुलक सोई पुकारि कैं कहिए, प्रत्यक्ष प्रीति कौं कहति है जतावति है, पुलक तें प्रीति को ज्ञान। अनुमानालङ्कार ॥ ३२४ ॥

दोऊ चाह भरे कछू चाहत कह्यौ कहैं न।
नहिं जाचक सुनि सूंम लौं बाहिर निकसत बैंन॥३२५॥

प्रथममिलन वर्नन—दोऊ इति। सखी सों सखी—दोऊ दम्पति चाह भरे हैं, मनोरथ भरे हैं, कछू कह्यो चाहत हैं, पै भय सों लज्जा सों कहत नहीं हैं, जैसें जाचक आयौ सुनिकैं सूम बाहिर नहीं निकरत है। सूम उपमान, वैन उपमेय, लौं वाचक, वाहिर नहीं निकलनो धर्म। पूर्नोपमालंकार ॥ ३२५ ॥

लहि सूने घर कर गह्यौ दिखादिखी की ईठि ।
गड़ी सुचित नाहीं करनि करि ललचौंहीं डिठि ॥३२६॥

लहि इति। सखी सौं सखी—नायक नें सूने घर में लहि कैं, नायिका कौं पाय कैं कर पकर्यौ, विशेष प्रीति नहीं भई थी देखादेखी की ईठ इष्टता मैत्री थी, औ लालच भरी दृष्टि करि कैं नाहीं करति है, सो नायक के चित्त में गड़ी है। स्वभावोक्ति, जो नायक को वचन सखा सौं तो स्मृति अलंकार ॥ ३२६ ॥

गली अँधेरी सांकरी भौ भटभेरा आनि ।
परे पिछाने परस्पर दोऊ परस पिछानि ॥३२७॥

गली इति। सखी सौं सखीवचन—ऐसी गली में भटभेरा आय भयौ, परस्पर पहिचाने परे दंपति, परस कौं पहिचानि कैं, सो स्पर्स उनहीं के अंग कौ है, दंपति को स्पर्श सो भेद ज्ञात भयो। उन्मीलित अलंकार। "उन्मीलित साहश्य तें भेद जहां जु लखाय'। स्पर्श तौ सबकौ बरोबरि, तासौं याकौ भिन्न है, किंवा प्रत्यक्षालंकार ॥ ३२७ ॥

हरखि न बोली लखि ललन निरखि अमिल सब साथ।
आँखिनहीं में हँसि धर्‌यो सीस हिए धरि हाथ ॥३२८॥

हरखि इति। सखी सों सखीवाक्य—ललन कौं लखि कैं हरखि कैं नहीं बोली क्यौं अमिल जो सखो है जासों मन मिल्यौ नहीं थो ताकौं साथ में निरखि कैं देखि कैं, अमिल संग साथ यह भी पाठ है, अमिल को संग समूह साथ में, किंवा हमारे अ-

मिल सखी को संग है, नायक को अमिल सखा को साथ है, सीस पै हिए पै हाथ धरयौ. आंखिन में हँसी, आपनी निश्चय राजीपनौ जतायो, मुह को हाँसो झूठो भी है, नेत्र की क्रिया सब सांच। "झूठे जानि न संग्रहे मनु मुह निकसे वैन"। सीस पैं हाथ धरयौ कैस स्याम है जब अँधेरो होयगो तव मिलौंगी, हिये हाथ धरयौ कुच कों शम्भु कहत हैं, महादेव छूय कैं कहति हौं, किंवा सीस पर हाथ दियौ, मनिमय सीम फूल छपायो, सूर्यास्त भयें मिलौंगी, यह बात मेरे हृदय में वसै है. भूलौंगो नहीं याते हिए हाथ धरयौ। किंवा सीस पर हाथ धरयौ सो प्रनाम कियो हम जाति हैं, हिए हाथ धरयौ, तुम हमारे हृदय में वसत हौ, नायिका को प्रनाम वरन्यो है। 'छाय पहिरि पट डटि कियो वेंदी मिस परनाम"। किंवा सीस पैं हाथ धरयौ सीस कों उलटा पढ़ें ससी होत है ताकौं हाथ सों छपायो, ससि अस्त भयें मिलौंगी। हिए हाथ धरयौ याद है. भाव वतायो नायक कौं जतायो। सूक्ष्म अलंकार, किंवा पिहित अलंकार—

"पिहत छबी पर बात कौं जानि बतावे भाव" ॥ ३२८ ॥

भेंटत बनत न भावतो चित तरसत अति प्यार।
धरति लगाय लगाय उर भूषन वसन हथ्यार॥३२९॥

भेंटत इति। नायक परदेश सौं आयो है, प्रियजन सों बाहिर मिले है, आँगन में सरंजाम पठायो है तहां सखी सों सखी वचन—भेंटत वनत न भावतो प्रियतम ताको मिलत कै नहीं वनत है, अति प्यार सों चित्त तरसत है, कव मिलैंगे नायक कौं भूषन वसन हथियार कौं उर सों लगाय लगाय कैं धरति है, लगाय लगाय। इहां आवृत्तिदीपक ॥ ३२९ ॥

कोरि जतन कोऊ करौ तन की तपति न जाय ।
जौलौं भीजे चीर लौं रहै न प्यौ लपटाय ॥३३०॥

कोरि इति। विरहव्याकुल नायिका कों देखि सखी सों सखी वाक्य—कोरि कोटि जतन कोऊ सखी करो, याकी तन की तपति जो है बिरहाग्नि सो, नहीं जाय न छूटै, जबतांई भीजे चीर की तरह पिय लपटाय अङ्गनि सों न रहै। किंवा भीजे चीर की तरह नायिका पिय सों लपटाय न रहै। नायक उपमेय, चीर उपमान, लौं वाचक लपटायबो धर्म। पूर्णोपमा॥ ३३०॥

तनक झूठ निसवादली कौन बात पर जाय ।
तियमुखरतिआरम्भ की नहि झूठिये मिठाय ॥३३१॥

सुरतारंभ वर्नन—तनक इति। कोई सों कोई पूछै है। तनक थोरो भी झूठ निसवादली निस्वाद है बेमजा है, कौन बात पर कौन प्रसंग पर वाकौ निसवादपनौ जाय छूटै, तिय मुख विषैं रति आरंभ कीजो नाहीं नाहीं कहनो है, सोंसों झूठीए है, तौभी मिठाय है मीठी लगै है यह उत्तर है। तिय के मुख सौं रति के आरम्भ सों नाहीं कौं मीठी ठहराई। काव्यलिङ्ग॥ ३३१॥

भौंहनि त्रासति मुख नटति आँखिन सों लपटाति ।
ऐंचि छुड़ावति करइंची आगे आवति जाति ॥३३२॥

भौंहनि इति। सखी सों सखी—भौंहनि सों डरपावति है, मुख नटति, मुख सों नाहीं करै है, आंखिन सों लपटाति जाति है, प्रीति सों देखति है, ऐंचि कैं खैंचि कैं कर कौं छुड़ावति है, आपु इँची खैंची सी आगे आवति जाति है, स्वभावोक्तिअलङ्कार॥

दीप उँजेरेहूं पतिहिं हरत बसन रतिकाज ।
रही लपटि छबि की छटनि नेको छुटी न लाज ॥३३३॥

दीप इति । सखी सों सखी—दीप के प्रकास में भी, पतिहिं पति कौं रतिकाज रति के लिये, बसन वस्त्र हरत देखि कैं, आपने अङ्ग की जो छवि की छटा चाकचक्य तासों लपटि रही, छवि नजरि आवै अङ्ग नहीं नजरि आवै, नेको थोरो भी लाज नहीं छुटी, कोई कहत है कि नायक दीप के उजेरेहू कौं हरत है, औ वसन कौं हरत है, पति कौ दीप बुझावनो संभवै नहीं, लाज छोड़ाइबे के हेतु उजेरो वसन हरन, तौभी लाज नहीं छूटी । विशेषोक्ति—"विशेषोक्ति जो हेतु सों कारज उपजै नाहि" ॥३३३॥

लखि दौरत पिय कर कटक बास छुड़ावन काज ।
बरुनी बन दृग गढ़नि में रही गुढ़ो करि लाज ॥३३४॥

लखि इति । सखी सों सखी—पिय की जो कर हाथ सो कटक फौज है, ताकौं नायिका दौरत देखिकैं, आपनी ओर आवत देखिकै, बास में दोय अर्थ, बास बस्त्र, बास घर, ताकौं छोड़ाइबे के लिये, बरुनी पक्ष्म सो है वन, दृग सो है गढ़, तिनहि में लाज गूढ़ो करि रही, गूढ़ो मवास जेहि ठौर कौं कोई जीति सकै नहीं । नायिका मध्या । रूपकालङ्कार ॥ ३३४ ॥

सकुचि सरकि पिय निकट तें मुलकि कछू तन तोरि ।
कर आँचर की ओट करि जमुआई मुख मोरि ॥३३५॥

सकुचि इति । सखी सों सखी—सकुचि कै सरकि कै पिय के निकट तें मुलकि मुसक्याय कछू तनकौं तोरि कैं अङ्ग ऐंठि कैं

कर सौं आंचर की ओट करि कै जँभुआई, मुह कों मोरि कैं। स्वभावोक्ति अलङ्कार ॥ ३३५ ॥

सकुच सुरत आरम्भहीं बिछुरी लाज लजाय।
ढरकि ढार ढरि ढिग भई ढीठ ढिठाई आय ॥३३६॥

सकुच इति। सखी सों सखी—सुरत के आरंभही विषें सकुच जो नायका सो संकोच करनो किंवा सिकुरि जानो, अङ्ग कों समेटि लेने सो बिछुरी जाती रही, मानो लाज सों लजाय कें, लाज कों मानो लाज भई। यथा। 'जिहि लज्जे जग लज्जिया सो लज्जा गई लजाय'। ग्वालिनी पूरी प्रगल्भो नेह। ढार सों आछी तरह सों ढरकि कैं सरकि कैं ढरि कैं राजी होय कैं ढिग नजीक भई। 'ढीठ ढिठाई आय'। वा समैमें ढीठ जो है ढिठाई सो आई यह वस्तु सुढार है, इहां सुन्दर तरह जानिए, ढरिबौ राजी होनो, जापैं दीनानाथ ढरैं। गम्योत्प्रेक्षा।

"नहि वाचक मानो किधौं संभावन सु लखाय।
गम्योत्प्रेक्षा कहत तहँ जे पण्डित कबिराय" ॥ ३३६ ॥

पति रति की बतिआं कही सखी लखी मुसुक्याय।
कै कै सबै टलाटली अली चलीं सुख पाय ॥३३७॥

पति रति इति। सखी सों सखी—पति ने रति करिबे की बात नायक ने कही। किंवा नायक अर्थाक्षिप्त। पति की तरह रति करिबे की बात नायका से कही, बिपरीत सुरत यह अर्थ। सखिनि कों नायिका ने मुसुक्याय कैं लखी, किंवा सखिनि ने नायिका कों मुसुक्याय लखी। सब सखी टलाटली करिकैं एक

कों एक ने धक्का दियो एक कों एक ने धक्का दियो ऐसें अली सुख पाय कैं चली, टलाटली के छल सों घर सूनो करनो इष्ट साध्यो । पर्यायोक्ति अलङ्कार ।

"छल करि कारन साधिए जो कछु चितहिं सुहाय" ॥ २३७ ॥

चमकि तमकि हाँसी सिसक मसक झपटि लपटानि।
ए जिहिं रति सो रति मुकति औरि मुकति अतिहानि ॥

चमकि इति । सुरत में लज्जा करै है नायिका, तासों नायक वचन—चमकिवो तमकिवो कछु क्रोध करनो, हँसिवो, सिसक सीत्कार मसक अङ्ग मरोरिवो औ झपटिकैं लपटि जायवो इतनी वात जाहि रति में है सो रति मुक्ति तुल्य है, औरि जो मुक्ति है, एकइस प्रकार के दुख को नास रूप सो मुक्ति ऐसी तरह की मुक्ति अति हानि है नुकसान है, नैयायकनि के मति की मुक्ति लीजिए नहीं, वेद पुरान के मति की मुक्ति लीजिए । उपमान मुक्ति रति उपमेय चमक इत्यादि रति में अधिक है यातें । व्यतिरेक—"व्यतिरेक जु उपमान तें उपमें अधिको देखि" ॥२३८॥

यदपि नाहिं नाहीं नहीं वदन लगी जक जाति ।
तदपि भौंह हाँसी भरी हाँसीऐ ठहराति ॥२३९॥

यदपि इति । सखी सों सखी—जौभी वदन मुख में नहीं इत्यादि जक हठ लगि जाति है, तदपि तौभी भौंह हाँसी भरी है, तासों हांसीए ठहराति हांसी जानि परति है, क्रोध द्योतक नाहीं प्रतिवन्धक हैं, तौभी प्रीति द्योतक भौंह हांसी भरी है । तीसरी विभावना—"प्रतिवन्धक के होतहू कारन पूरन मानि" ॥

पर्‍यो जोर बिपरीत रति रुपी सुरत रनधीर ।
करत कोलाहल किंकिनी गह्यो मौन मंजीर ॥३४०॥

अथ विपरीत सुरत बर्नन—पर्‍यो इति। प्रियसखी सों प्रियसखी। विपरीत जो रति रमन क्रीडा ताको जोर पर्‍यो है, सुरत जो है युद्ध तामें धीर होय कें रुपी है ठहरी है, किङ्किनी कोलाहल शब्द कौं करै है, मंजीर चरनभूषन ताने मौन गह्यो है। किंवा, विपरीत रति में रुपी है सुरत रन में धीर है, जोर पर्‍यो है, रन को भार पर्‍यो है, तासौं किङ्किनी क्षुद्रघण्टिका कोलाहल करति है, मंजीर पर भार नाहीं तासौं मौन गह्यो सुरत सो रन, यातें रूपक अलङ्कार ॥ ३४० ॥

बिनती रति बिपरीत की करी परसि पिय पाय ।
हँसि अनबोले हीं रही उत्तर दियो बताय ॥३४१॥

बिनती इति। सखी सों सखी—पिय ने नायिका के पाय परसि कैं छूय कैं विपरीत रति की बिनती करी, हँसिकैं अनबोलेहीं नायक कौं उत्तर दियो। दियो बताय कैं दीप बुझाय कै, दिया बुझायें विपरीत रति को स्वीकार न करी त्यों किंवा विपरीत को, बोलिबो कारन नहीं है, उत्तर कार्ज भयो।

"होति छ भांति बिभावना कारन बिनहीं काज" ॥ ३४१ ॥

मेरे बूझत बात तूं कत बहरावति बाल ।
जगजानी बिपरीत रति लखि बिंदुली पिय भाल ॥३४२॥

मेरे इति। नायिका सों सखीवाक्य। हे बाल मेरे बूझति के मेरे पूछति के बात कों तूं कत कितनो बहरावति है बहकावति

है, जगत ने विपरीत रति जानी, पिय के भाल में लिलार में विंदुली टीकी देखि कै, नायक नायिका को वेष बन्यौ घो, विंदुली सों विपरीति जानिवौ। अनुमानालंकार ॥ ३४२ ॥

राधा हरि हरि राधिका वनि आए संकेत।
दंपति रति विपरीत सुख सहज सुरत हूं लेत ॥३४३॥

राधा इति। सखी सों सखी—राधिकाजी हरि कौ रूप वनायो हरि राधिका वनिकैं, सङ्केत मिलिवे की ठौर भाए, दम्पति विपरीत रति को सुख सहज सुरतहू में समरत में भी लेत है, विपरीत सुख दृढ़ कियो, स्वप्रियगता लीलाहाव, सहज सुरत में विपरीत सुख दृढ़ कियो, यातें काव्यलिंग ॥ ३४३ ॥

रमन कह्यो हठि रमनि सों रति विपरीत विलास।
चितई करि लोचन सतर सलज सरोस सहास ॥३४४॥

रमन इति। सखी सों सखी—रमन नायक ने हठिकैं रमनी नायिका सों विपरीत रति को विलास करौ, यह कह्यौ। लोचन कों सतर करि चढ़ाय कैं तरेरि कैं चितई, फेरि सलज लाज सहित रोस क्रोध कृत्रिम सहित हँसीसहित। हाव किल किञ्चित, स्वभावोक्ति ॥ ३४४ ॥

रँगी सुरत रँग पिय हिए लगी जगी सब राति।
पैंड़ पैंड़ पर ठठिकि कैं ऐंड़ भरी ऐंड़ाति ॥३४५॥

अथ सुरतान्त। रँगी इति। सखी सों सखीवाक्य—सुरत के रंग सुरत के राग सों रँगी है युक्त है, पिय के हृदय सों लगी, संपूर्ण राति जागी है। पैंड़ पैंड़ पर डग डग पर ठठकि कै खड़ी

होय कै ऐंड़भरी गुमानभरी जो क्रिया सो ऐंड़ तासों भरी ऐंड़ाति है ऐंठति है। स्वभावोक्ति ॥ २४५ ॥

लहि रतिसुख लगिए गरें लखी लजौहीं नीठि ।
खुलत न मो मन बँधि रही वहै अधखुली डीठि ॥२४६॥

लहि इति। नायक स्मरन करै है। हममों रतिसुख लहि कें, लगिये गरें, हमारे गरेही सों लगिही थी तवही, लजौंही लाजभरी जो है सो हमारी ओर नीठि कैसेंह्र करि देखी खुलै है नहीं मेरे मन सों बँधि रही है, वह जो बाकी अधखुली आधी उघरी दृष्टि। किवा नायक दूती सों कहति है। सोय उठी है, नायिका तब देखी है, एक मै लजौंही नायिका देखी है, नीठि कौनिहुं तरह सों वासों रतिसुख लहि कै पाय कें, वाके गरें लगिये, वाके गरें परिये। एक घरी भी वाहि छाड़िये नहीं, उत्तरार्द्ध को वही अर्थ। जो दृढ़ बाधी होय सो नहीं खुलै, जो वस्तु अधखुली होय सो नहीं खुलै। विरोधाभास अलंकार ॥

"भासै जहां बिरोध सो वहै विरोधाभास" ॥ २४६ ॥

कर उठाय घूँघट करत उसरत पट गुझरोट ।
सुख मोटें लूटीं ललन लखि ललना की लोट ॥२४७॥

कर इति। सखी सों सखी—हाथ उठाये घूंघट करति थी। उसरत जुदा होत गुझरोट पट, अञ्चल वस्त्र, ता समय ललन ने ललना की लोट त्रिवली देखि कें सुख को मोट गाँठि लूटी है मानो। गम्योत्प्रेक्षा अनुक्तास्पद ॥ २४७ ॥

हँसि ओठनि विच कर उचै किए निचौंहें नैन ।
खरे अरे पिय के प्रिया लगी विरी मुँह दैन ॥३४८॥

अथ बीरी देनी वर्नन—हँसि इति । सखी सों सखी—ओठनि वीच हँसिकैं हाथ कौं ऊंचो करिकैं, लज्जा सों नेत्र कों नीचे किए, खरे अति अरे हठे सो पिय कैं मुखमें प्रिया बीरी पान की दैन लगी । स्वभावोक्ति अलङ्कार, किंवा हेत्वलङ्कार ॥ ३४८ ॥

नाक मोरि नाहीं ककै नारि निहोरे लेय ।
छुवत ओंठ पिय आँगुरिन विरी वदन तिय देय॥६४९॥

नाक इति । सखी सों सखी—नाक मोरि नाहीं करि करि नारि निहोरा किए सों लेत हैं, छुवत ओठ कों पिय आंगुरिन सों तिय के वदन मुख में बीरी देत है । स्वभावोक्ति अलङ्कार, विभावनालङ्कार ॥ ३४९ ॥

सरस सुमिल चित तुरग की करि करि अमित उठान।
गोय निवाहें जीतिए प्रेम खेल चौगान ॥ ३५० ॥

प्रेमखेल वर्नन—सरस इति । नायिका सों सखीवाक्य—सरसरस अनुरागसहित, किंवा बेस, सुमिल सुन्दरी तरह मिलै अस्व भी आपनो मन सों मिल्यौ चलै है, चित्त सो तुरंग ताकी अमित असंख्य उठानि मनोरथ को करिबो किंवा दौराइबो, गोय कैं छपाय कैं किंवा कपड़ा औ रूई को एक बड़ो गेंद बनावै है, ताकौं लकरिन सों मारि कैं जहां मर्यादा करै है तहां ताहि पहुंचावै है, गोय निबाहेई बनै, प्रेम सो है चौगान को खेल । रूपकालङ्कार ॥ ३५० ॥

दृग मीचत मृगलोचनी धर्‌यौ उलटि भुज बाथ ।
जानि गई तिय नाथ के हाथ परसहीं हाथ ॥३५१॥

दृग इति। सखी सौं सखी कहति है—नायक पीछे सों आय नायिका की आंखि मूंदी, नायक जब नायिका के दृग कों मीचत है मूंदत है, ता समय मृगलोचनी ने भुज कों उलटि कैं नायक कौं बाथ में अँकवारि मैं धर्‌यौ, तिय नाथ के हाथ के परसही सों नाथ को हाथ है या बात कूं जानि गई। किंवा हे सखि तूं या लीला कूं जानि जानौ, सुनौ यह अर्थ । नाथ के दृग कौं मृगलोचनी मीचति है, नायक ने भुज कौं उलटि कैं वाको सरीर बाथ में अँकवारि सें धर्‌यौ, हाथ सों नायक कों परसिकेंही हियो मन ताकों हाथ करि आपनो बस करि यह भाव । तिय गई, किंवा तिय गई छोड़ायकैं, नायक के हाथ को भयो है नायिका कौ परस तासौं ही हृदय सों हाथ कौं नायक लगावे है धन्य तूं हाथ है जासौं आसक्ति होति है, तो जो वाके हाथ कौं भी परसै हैं । "दै गई महावर तिहारे तरवानि मांझ वाके कर पल्लव की पौरें पकरत है । नैननि सों लाय उर लाय करै हाय हाय बार बार नायिनि के पायनि परत है" ॥ मृग सो लोचन तो सम्भवै नहीं, मृग को नेत्र उपमान सो है नहीं लच्छना करि मृग शब्द करि मृगनेत्र जानिए है, मृग को नेत्र सो विसाल सुन्दर नेत्र है जाकौं, से वाचक नहीं है, विसाल सुन्दर साधारन धर्म नहीं है, नैन उपमेय है, उपमान वाचक धर्मलुप्ता । उपमा अलङ्कार ॥ ३५१ ॥

प्रीतम दृग मीचत प्रिया पानिपरससुख पाय ।
जानि पिछानि अजान लौं नेकु न होति लखाय॥३५२॥

प्रीतम इति। सखी सों सखी—प्रीतम के दृग प्रिया मीचति है, किंबा प्रिया के दृग प्रीतम मीचत है, पानि हाथ ताको जो है परस तासों जो है सुख ताकौं पाय करि, किंबा परससुख सौं पानि कौं पायकैं, जानिकैं, पाय को अर्थ जानिबो भी है, यह बात पाई नाम जानी, जानिपिछानि अजानि की तरह, नेकु थोरो भी लखाय जाहिर नहीं होत है, नायिका पक्ष में होति, नायकपक्ष में होत पाठ पढ़िये, लखाय पद खैंचि कैं लगै है, अजान लौं अजाने हौं, मानो नही जानै है मानो। अनुक्तास्पदवस्तुत्प्रेक्षा॥

करमुँदरी की आरसी प्रतिबिम्बित प्यौ पाय ।
पीठि दिए निधरक लखै इकटक डीठि लगाय॥३५३॥

कर मुदरी इति। सखी सों सखी—कर की अँगूठी की आरसी में पिय कौं प्रतिबिम्बित भासमान पायकैं, नायक की ओर पीठि दियें निधरक निसङ्क देखै है, एकटक दीठ लगाय कैं, प्रहर्षनालङ्कार—"तीनि प्रहर्षन जतनबिन बांछित फल जो होय"॥

मैं मिसहीं सोयो समुझि मुँह चूम्यौ ढिग जाय ।
हँस्यो खिस्यानी गल गह्यौ रही गरे लपटाय॥३५४॥

मैं मिसही इति। नायिकावचन सखी सों—मैं नायक कौं मिस कहिए छल तासौं सोयो समुझि कैं, मुह चूम्यौ ढिग नजीक जायकैं, नायक हँस्यौ तब मैं खिस्यानी, तब नायक ने गलो गह्यौ

तब में गरे सों लपटाय रही। प्रौढामायिका है, किंवा मै नाम मदिरा को, मै मदिरा की मिस छल करिकें नायक सोयो, मै मदिरा पान कियो है, पै नीद में है जागे है नही, मोहि नीद आवै है यह छल। हे सखि तूं या बात कूं समुझि जान। किंवा कर्त्ता को अध्याहार, मै समुझिवे के लिये ढिग जायकें मुह चूम्यो मदिरा पान किये होयगो तो वास आवैगी, उत्तरार्द्ध वैसेंही। भ्रान्ति अलङ्कार। पर्यायोक्ति भी।

"मिस कर कारज साधिये जोई चितहि सोहात ॥२५४॥"

मुँह उघारि प्यौं लखि रह्यौ रह्यौ न गौ मिस सैन।
फरके ओठ उठे पुलक गए उघरि जुरि नैन॥३५५॥

मुंह उघारि इति। सखी सों सखी—अवहित्था की सान्ति हर्षोदय, नायिका मुह पैं कपडा डारि सोई है, मुह कौं उघारि कें प्यौ नायक के देखत, मिस को छल को सैन में रह्यो नहीं गयो, ओठ फरके पुलक उठे, नायक के नैन सों जुरिकें मिलिकैं नैन उघरिगए। कारकदीपक, किंवा स्वभावोक्ति इत्यलङ्कार॥३५५॥

वतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय।
सौंह करै भौंहन हँसै देन कहै नटि जाय॥ ३५६॥

वतरस इति। सखी सों सखी—बात के रस के लालच सों लाल की मुरली लुकाय लीनी स्पष्ट, क्रम ते एक में अनेक भाव, कारकदीपक॥ ३५६॥

नेकु उतै उठि बैठिए कहा रहे गहि गेहु।
छुटी जाति नहदी छिनक मेहँदी सूखन देहु॥३५७॥

नेकु इति । स्वाधीनपतिका की उक्ति नायक सों—इष्ट कै अनादर सों विव्वोक हाव। नेकु उतें वा ठौर उठिकैं बैठिए, गेह कों कहा गहि रहे पंकरि रहे, सात्विक प्रस्वेद भयो है, तासों नई नह की मिहदी छुटी जाति छन एक सूखिवे देह, घर गहि रहे, लोकोक्ति ॥ ३५७ ॥

मानु तमासो करि रही विवस वारुनी सेय ।
झुकति हँसति हँसि २ झुकति झुकि २ हँसि २ देय ॥

मानु इति । सखी सों सखी । मानौ तमासा मदपान वर्नन—मानु इति । सखी सों सखी । मानौ तमासा सो करि रही है, बिबस भई है, वारुनी मदिरा को सेवन करिकैं, वाम तमासो ऐसो भी पाठ है, आगे स्पष्ट । उत्प्रेक्षालङ्कार॥३५८॥

हँसि हँसि हेरति नवल तिय मद के मद उमदाति ।
वलकि बलकि बोलति वचन ललकि ललकि लपटाति॥

हँसि इति । सखी सों सखी—नवल तिय नवोढ़ा स्त्री हँसि हँसि हेरति है, मदिरा के मद तें उमगै है, बलकि बलकि व्यक्त व्यक्त ललकि ललकि चाहि चाहि पिय सों लपटाति, किंवा है सखि रति मैं, नवल तिय हँसि हँसि कैं मदिरा की मस्ती सों उमदाति है ऐसें जानौ । स्वभावोक्ति अलङ्कार ॥ ३५९ ॥

खलित वचन अधखुलित दृग ललित स्वेदकन जोति ।
अरुन वदन छबिमदछकी खरी छबीली होति ॥३६०॥

खलित इति । नायिका सों नायकवचन, किंवा सखीवचन—चल विचल वचन आधा खुले दृग, ललित स्वेदकन की जोति,

लालवदन छविमद सों तूं छकी है यातैं खरी छवीली होति है, अन्यसम्भोगदु:खिता की उक्ति में भो लगै है वक्रविधि वोजनि है हमैं ठगि कैं तूं खरी छवीली होति है नहीं सोभै है यह अर्थ। स्वभावोक्तिअलङ्कार ॥ ३६० ॥

निपट लजीली नवल तिय बहकि बारुनी सेय।
त्यौं त्यौं अति मीठी लगति ज्यौं ज्यौं ढीठ्यो देय ॥

निपट इति। सखी सों सखी की उक्ति। अति लाजयुक्ति नवोढ़ा स्त्री वारुनी मदिरा के सेवन सों पान सों बहकी है, तैसें तैसें अति प्यारी लगै है, जैसें२ ढिठाई करति है, लजोली नवोढा में ढिठाई की उत्पति। विभावनालङ्कार—

"जवै अकारन वस्तु तें कारज परगट होय ॥ ३६१ ॥"

बढ़ति निकसि कुचकोररुचि कढ़त गौर भुजमूल।
मन लुटिगो लोटन चढ़त चोंटति ऊँचे फूल॥३६२॥

अथ वनविहार वर्नन—बढ़ति इति। सखी सों सखी। चोली सों निकसि कैं कुचकोर की रुचि छवि बढ़ति है, वस्त्र सौं गौर भुज को मूल काढ़त है, नायक को मन लूट्यौ गयौ, लोटनि चिवली ऊँचैं फूल ताकों चौंटत तोरत कै, लोट ऊपर सरकि गई, छवि विशेष बढ़त इत्यादि करि मन लूटिबो दृढ़ कियौ। काव्यलिङ्ग अलङ्कार ॥ ३६२ ॥

घाम घरीक निवारिए कलित ललित अलिपुंज।
जमुनातीर तमालतरु मिलत मालतीकुंज ॥ ३६३ ॥

घाम इति। वाग्विदग्धा स्वयंदूतित्व करै है, घाम धूप एक घरी

विताइये, जमुना तीर विषैं तीर कैसो है, ललित सुन्दर जे अलि भौंरा ताकि पुञ्ज समूह तासौं कलित है युक्त है, फेरि तमालतरु सौं मिलित जो है मालती चंबेली ताकी कुंज है, निर्जन देस है हमसौं विहार करौ यह ध्वनि। पर्यायोक्ति अलंकार—

'पर्जायोक्ति प्रकार है कछु रचना सो बात'॥ ३६३॥

चलित ललित श्रम स्वेदकन कलित अरुन मुख तैन।
बन विहार थाकी तरुनि खरे थकाए नैन॥ ३६४॥

सखी सौं सखीवाक्य—ललित श्रम स्वेदकन चलित इति। याको अर्थ सुन्दर जो श्रम सो प्रस्वेदकनिका तासौं कलित युक्त, कलित वलित अनेकार्थ है, लाल मुख तें नायक के नैन चलत नहीं, देखि रहे हैं, वनविहार मैं तरुनी थाकी है तासौं छवि विशेष भयी है, ताने नायक के नैन कौं खरे अति थकाए है, थकाइवे को लच्छना करि आसक्त जानिये। लच्छनालच्छन—

'मुख्य अर्थ को बाध जहँ रहे मुख्य को जोग।
औरि अर्थ जहँ जानिए कहँ लच्छना लोग॥
राखो सक्ति सुलछना ध्वनि बिन रूढ़ा रूप।
सो प्रयोजनवती जहां उपजे ध्वनि कविभूप"॥

किवार दिये इहां दान नही सम्भवै, जड़िवो जानिए, पीठि दीनी, हवा खात है। इत्यादि निरूढ़ा। नायिका को अति सौन्दर्य नायक को अनुराग ध्वनि, कोई अरुन मुख बैन यह भी पाठ कहे है, थकिवो थकायिवो कारन नहीं यातें विभावना॥३६४॥

अपने कर गुहि आपु हठि हिय पहिराई लाल।
नौलसिरी औरे चढ़ी मौलसिरी की माल॥ ३६५॥

अपने इति । सखी सों सखी—आपने कर सों गुहि कैं लाल ने हठि कैं हिय सैं हृदय मैं पहिराई, हठिबो अञ्चल उघारिवे कौ लिये, नवीन श्री सोभा औरिही चढी, नायक के अति आसक्त भये सों सोभा, मौलसिरी की माला सों स्वाधीनपतिका जानिए । औरिन की श्री औरि तरह की याकी औरि तरह की । भेदकातिशयोक्ति अलंकार—

"औरै पद जहँ दीजिये अधिकाई के हेत ।
अतिशयोक्ति भेदक यहै कहत सुकवि सिरनेत" ॥ ३६५ ॥

लै चुभकी चलि जाति जित जित जलकेलि अधीर ।
कीजत केसरनीर से तित तित के सरनीर ॥३६६॥

अथ जलविहार वर्नन—लै चुभकी इति । सखी सों सखी अंग की कान्ति वरनै है । नायिका चुभकी लैकैं गाता मारि कैं जित जित जहां जहां चली जाति है जलकेलि विषैं, अधीर चञ्चल है, अंग कान्ति सों केसरि के नीर सरीखा, तित तित के तहां तहां के सर नीर, सरोवर के नीर जल, 'केसर केसर' जमक, पतिधर्म सो नहीं है, केसर नीर उपमान, सरनीर उपमेय है, से वाचक है धर्म, लुप्तोपमा ॥ ३६६ ॥

छिरके नाह नवोढ़ दृग कर पिचिकी जल जोर ।
रोचन-रँग लाली भई विय तिय लोचनकोर ॥३६७॥

छिरकै इति । सखी सों सखी—नाह ने नवोढ़ा नायिका के दृग नेत्र कौं कर की पिचिकारी के जल के जोर सों छिरिके । किंवा, करजोरि पिचिकी वनाय जल सों छिरिकै, रोचन गोरा-

चन ताके रंग सरीखी लाली भई। तिय के पिय कहिए दोऊ लोचन की कोर विषैं, किंवा पिय दूसरी जो तिय है सौति ताके लोचन कोर विषें, औरि के नैन छिरिके औरि के नैन मैं लाली भई। असंगति अलङ्कार—"तीनि असंगति काज अरु कारन न्यारे ठाम" किंवा नवोढ़ ने नाह दृग छिरके औरि अर्थ वैसेंही। सखी सों सखी वाक्य, हे तिय हे सखी ऐसें जानिए ॥ २६७ ॥

हेरि हिंडोरो गगन तें परी परी सी टूटि
धरी धाय पिय वीचही करी खरी रस लूटि ॥३६८॥

अथ हिंडोरावर्णन—हेरि दूति। सखी सों सखी। हिंडोरो सोहै गगन आकाश तातें नायक कों नजीक हेरिकैं। किंवा हे सखि तूं हेरि, परी सी अपसरा सी टूटि परी, धरी धायकै, पिय ने वीचही में धरती में नहीं परिवे दीनी, रस लूटिकैं कुच कपोल कौ स्पर्श करिकै, करी खरी, तब धरती में खड़ी करी, किंवा, जैसें कहत हैं फलाना के वीच फलाना वोलि उठ्यो, वीच शब्द कहूं आगे को भी कहत हैं, पिय के वीचही पति के आगेही, उपपति ने धरी, आगे वही अर्थ, खरी को अर्थ अति लीजिए तौ, पति के देखत उपपति ने अंग सों लगाई यही अति रस लूटि, किंवा परी को अर्थ सांची, कुच को ग्रहन कियो सांची रसलूटि करी, उपमान ॥ ३६८ ॥

वरजे दूनी हठि चढ़ै ना सकुचै न सँकाय
टूटति कटि द्रुमची मचक लचकि लचकि वचि जाय॥

वरजैं दूति। सखी सों सखी—वरजे सों दूनी हठिकैं भूला

चढ़ति है, किंबा दूनी हठ चढ़ति दूनी हठ करति है, 'ना सकुचै न सँकाय'। द्रुमची छोटी डार सों मचकै है, कटि टूटति सी लचकि लचकि बचि जाति है, बरजिबो बाधक है तोभी झूला चढ़ै है। बिभावना। कटि टूटै है मानो, गम्योत्प्रेक्षा भी है॥३६९॥

दोऊ चोर-मिहीचनी खेलन खेलि अघात।
दुरत हिये लपटाय कैं छुवत हिए लपटात ॥३७०॥

अथ चोरमिहीचनी बर्नन—दोऊ इति। सखी सों सखी—थोरी अवस्था है नायिका परकीया है ख्याल के मिसकै मिलै है, दोऊ दम्पति चोरमिहीचनी, कोई चोरलुकौवलि कहत हैं, जो है खेल क्रीड़ा ताकौं खेलि कै लच्छना सों करिकैं न अघात नहीं तृप्त होत हैं, दुरत हैं छपत हैं हिए लपटाय कैं, हिए लपटाय कैं छुटत हैं, हिए लपटाइबो कारन है, अघाइबो कारज नहीं भयो,
"हेतु न कारन होत जहँ विशेषोक्ति पहिचान" ॥ ३७० ॥

लखि लखि अँखिअनि अधखुलिन आँग मोरि अँगिराय।
आधिक उठि लेटति लटकि आरस भरी जँभाय ॥

सेज तें उठिबो। लखि लखि इति। सखी सों सखी—अधखुली आँखिनि सों देखि देखि कैं, किंवा सखी नायक कौं दिखावै है, हे पिय लखि देखौ, अधखुली सी अँखिया सों लखि देखि कैं फेरि आंग मोरै है, अँगिराति है, आधी उठिकैं लटकि कैं लेटति है सोवति है, आको अर्थ सब तरह सों रस भरी है अनुराग भरी है। किंवा र ल एक है तासों आलस भरी जानिए। जँभाति है, नायिका परकीया ताकी क्रिया अनुभाव तें प्रीति

ज्ञानी जाति है, हर्ष अभिलाष श्रम प्रबोध संचारी जानि परत है, कारकदीपक । स्वभावोक्ति—

"जाकी जैसो रूप गुन बरनत वाही रीति" ॥ १७१ ॥

नीठि नीठि उठि बैठि कै प्यौ प्यारी परभात ।
दोऊ नींद भरे खरे गरे लागि गिरि जात ॥ ३७२ ॥

नीठि इति । सखी सों सखीवाक्य—नीठि नीठि कैमें कैसेंहू परभात प्रात समै दोऊ दम्पति नींद सों खरे अति भरे हैं, और स्पष्ट, आलस्य निद्रा संचारी, स्वभावोक्ति अलङ्कार ॥ ३७२ ॥

लाज गरब आलस उमग भरे नैन मुसुक्यात ।
राति रमी रति देत कहि औरैं प्रभा प्रभात ॥३७३॥

लज्जिता सों सखीवचन— लाज इति । प्रात सखीवचन—लाज गरब आलस उमग उछाह, इनतें भरे जेहैं नैन ते मुसुक्यात हैं, प्रीति सों तूं राति रमी है रमन कियो है, प्रभात विषें औरि जो है प्रभा कान्ति सो कहि देति है, अन्यसम्भोगदुःखिता की भी उक्ति, खण्डिता की उक्ति । वह नायिका तुमारे संग राति रमी है, ताकौं रति जो है प्रीति तामैं प्रभात विषें औरि जो है प्रभा सो कहि देति है । किंबा, रमन कौं रति औ प्रभा कहति है, लाज लोक की, हमै ऐसी नायिका मिली है, यातें गरब, आलस राति जागे हो तासों तुम विषें है, औ उमग भरे तुमारे नैन हैं, औ तुम मुसुक्यात हौ और दिन औरि प्रभा आजु औरि प्रभा । भेदकातिशयोक्ति—'औरैं पद जहँ दीजिए अधिकाई के हेत॥३७३॥

कुंज-भौन तजि भौन को चलिए नन्दकिसोर ।
फूलति कली गुलाब की चटकाहट चहुँओर ॥३७४॥

कुञ्ज इति। नायक सों सखीवाक्य—पूर्वार्द्धस्पष्ट। गुलाब की कली फूटै है तहां शब्द बर्नत है, मानो गुलाब खुशामदी सों चट चट चिटुकी देत है, फूलति है गुलाब की कली ताको चटचटाहटि चहूंओर है, किंवा गुलाब की कली फूलति है, औचट का चिरा ताको आहट शब्द चहूंओर में है, किंवा हे नन्दकिसोर गुलाब की हवा देखिबे के लिये भौन को तजि कुंजभौन कों चलिये। परकीया नायिका, संका संचारी, पहिले अर्थ में कोई देखैगो, भौन कों चलिबे को समर्थन करै है, गुलाब इत्यादि करि प्राप्त भयो। काव्यलिंग—

"काव्यलिंग जहँ युक्ति सों अर्थ समर्थन होय" ॥ २७४ ॥

नटि न सीस साबित भई लुटी सुखनि की मोट ।
चुप करिए चारी करति सारी परी सरोट ॥ ३७५ ॥

नटि इति। लज्जिता सों सखीबचन, किंवा सखी सों अन्यसम्भोगदुःखिताबचन—तूं नटै मति, झुठाय मति जाय, तेरे सीस तेरे माथें साबित भई साँच भई, ठहरी बोलनि है, तूं सुख की मोट गाँठि लूटी है, बहुत सुख पायो है यह अर्थ। जासों कहति है ताको उक्ति, ए तूं चुप करि झूठ मति बोलै, कहनिवाली की उक्ति, सलोट सल परी जो सारी है मसली गई है, सो चारी चुग़ली करति है, सुख को लूटिबो सारी के सलोट सों दृढ़ कियो। काव्यलिंग। सीस साबित भई। लोकोक्ति—

"लोकोकति कछु बचन ज्यों लीने लोकप्रवाद" ॥ २७५ ॥

तोसों मिलवति चातुरी तू नहिं भानति भेव ।
कहे देत यह प्रगटहीं प्रगट्यो पूस पसेव ॥ ३७६ ॥

मोसों इति । सखीवचन लक्षिता सों, किंवा अन्य संभोगदुखिता को वचन—मोसों तूं चतुराई की बातें मिलावै है, तूं नहि भानति मेव, तूं भेद कों नहीं भानति है फीरति है, साँच नहीं कहति है, पूस मे प्रस्वेद सात्विक प्रगट्यो है, उपज्यौ है सो प्रगटही जाहिर कहि देत है, पूस प्रस्वेद को कारन नहीं, विभावना।

होति छभांति विभावना कारन बिनहीं काज ॥ ३०६ ॥

सही रँगीली रतिजगे जगी पगी सुख चैन ।
अलसौहें सौहें किए कहैं हँसौहें नैन ॥ ३७७ ॥

सही इति । सखीवचन लक्षिता सों—हे रँगीली सही साँच तूं रतिजगा में जगी है, विवाहादि मै, कुलदेवता प्रति स्त्री जागरन करति है, तामै तूं जगी है, श्लेष में रति के लिये जो जागरन तामै जगी है, चय शब्द समूह वाचक नकार बहुत वाचक, सुख के चयन सों समूहनि सों पगि रही है, लपटाय रही है । अलसौहैं आलस भरे औ हँसौहैं जे तेरे नैन सो सौहैं करि कहत हैं, सपथ करि कहत हैं । किंवा सँाम्हने किए सों हँसौहै होत जे हैं नैन ते कहत हैं मानो आकृति सो है अनुभाव तासों जानि गई, आलस हर्ष संचारी, राति को जागरन ठहरायो अलसौहैं इत्यादि करि, काव्यलिंग अलंकार ॥ ३७७ ॥

यौं दलमलियत निरदई दई कुसुम से गात ।
कर धरि देखो धरधरा अजौं न उर को जात॥३७८॥

यौं दल इति । मुग्धा के सुरतान्त में नायक सों सखीवाक्य, किंवा सखी फेरि मिलायो चाहति है परकीया है, यौं या तरह

दलमलियत है मसलियत है, रसिकप्रिया में मर्दन बहिरत में कह्यौ है, किंवा यों दल पत्र की तरह मलियत है, तुम बड़े निरदई हौ, हे दई करुना करि कहति हैं, याकी कुसुम से फूल से गात हैं, फेरि कर हाथ छाती पें धरि कैं देखौ धरधरा धकधकी उर की छाती की अजों अबताई भी नहीं जाति है, रति समै विषै धरधरा प्यौ हाथ दिखावै है, फेरि रति करोगे तौ धरधरा होयगौ, अबतौ प्रत्यच्छ है, भाविकालङ्कार। ललित ललाम दोहा,

जहां भयो भावी अरथ बरनत हैं प्रत्यच्छ।
तहँ भाविक सब कहत है जिनकी मति अति स्वच्छ ॥ ३७८ ॥

छनक उघारति छन छुवति राखति छनक छपाय ।
सब दिन पियखण्डित अधर दर्पन देखत जात ॥३७९॥

छनक इति। नायक अधरखण्डन करि परदेश गयौ है तब नायिका की चेष्टा सखी सौं सखी कहति है—अति अनुराग जानिए, छन एक उघारति है छन एक आँगुरी सौं छुवति है काहू के देखति छन एक छपाय राखति है, किंवा एक छन उघारै है, प्रिय यादि आवै है तब छन सौं उत्साह सौं छुवै है, प्रेम सौं जानति है, नायक नजीक हैं, यातैं विरहनी में उत्साह है, प्रेमलच्छन सभाप्रकास में—'भानत जोग वियोग में जोगहु माहि वियोग। द्रवत चित्त ताकौं कहै प्रेम सबै कवि लोग'' ॥ आंगुरी दिए जब छनकै हैं, छनछनात हैं तब छपाय राखति है और स्पष्ट। जाति अलङ्कार, पद की आवृत्ति सों दीपक ॥ ३७९ ॥

औरै ओप कनीनकनि गनी घनी सिरताज ।
मनी धनी के नेह की बनी छनी पट लाज ॥३८०॥

श्रौरैं दुति। अन्यसम्भोगदुःखिता को वचन सखी सौं, किंवा लचिता सौं सखीवचन—कनीनिका जे तेरी आँखि की पुतरी तामें आजु ओप चमत्कार किंवा प्रकास औरही है, औरि दिन की तरह नहीं, कैसी है कनीनिका औरि नायिकनि की घनो वहुत जे कनीनिका ताकी सिरताज है, सिरताज को अर्थ इहां लच्छना सौं सरदार लीजिए, फेरि कैसी है मनी धनो के नेह की धनी जो नायक ताके नेह की मनी है, माननवाली है, नायक को नेह है तो हमहो सौं है, औरि सौं नहीं, किंवा नायक के नेह की मनी है प्रकासक है, छपाय कै मिली है, नेत्रनि ने प्रगट कियो अब भी, कनीनिकनि में पट छनो लाज वनी है वड़ी लाज तौ जाती रही है सूछम लाज बनी है जो वस्तु कपरछान कीजिए है सो सूछम होति है पटछनी सोई कपरछनी किंवा मानी रूप गुन गरवी जो तेरो धनी नायक ताको जो नेह ताकी कनीनिका वनी है नवदुलहिनी है। नेह इनसौं लग्यो रहत है। दुलहा दुलही कौं बनावनी कहत है याही तें लाज सोई है पट तामें छनी है छपी है। औरैं पद तें भेदकातिशयोक्ति ॥ ३८० ॥

कियो जु चिबुक उठाय के कम्पित कर भरतार ।
टेढ़ीए टेढ़ी फिरति टेढ़े तिलक लिलार ॥ ३८१ ॥

कियो जु इति। सखी सौं सखी, चिबुक टोढ़ो उठाय कैं भरतार जो नायक वाके रूप सो भयो जो कांप सात्विक तासों कम्पित करता नें नायिका के लिलार में टेढ़ो तिलक कियो, तासौं टेढ़ी टेढ़ी फिरति मोहि सी सुंदरी नहीं दिमागभरी जानिए, रूप

गर्विता जानिए टेढ़े तिलक सों लाज चाहिए सो गर्व भयो— यातें पांचई बिभावना—

"काहू कारन तें जबै कारज होय बिरुद्ध" ॥ ३८१ ॥

वेई गड़ि गाड़ै परी उपट्यो हार हिये न।
आन्यो मोरि मतङ्ग मनु मारि गुरेरनि मैन ॥३८२॥

अथ खण्डिता वर्णन। वेई इति—नायक प्रात आयो है, तहां नायक सों किम्वा सखी सों अधीरा को उक्ति। उपट्यो हार हिये न, इनके हृदय में पराई स्त्री के गल को हार नहीं उपट्यो है। ए नायक मतङ्ग हाथी है ताको मैन काम गुलेलनि सों मारि कै मानो मोरि कै फेरि कै आन्यो है। वेई गड़ि गाड़े में परी, वेई गुलेला की गोली गड़ी है ताको गाड खाड परी है, मन को मतङ्ग कहैं गुलेल को उपटिवो छपायो, गुलेल की गाड़ को आरोप्य कियो, सुद्धापन्हुति, 'धर्म दुरै आरोप तें सुद्ध अपन्हुति जानि' क्रिया के आगे मनो बाचक है यातें, अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा। मोर क्रिया सों मानो को अन्वय, 'सम्भावतउत्प्रेक्षावस्तु हेतु फल लेखि, गज उपमान है नायक उपमेय नहीं है सो जान्यो परत है। साध्यवसाना लक्षना सों, रूपकातिशयोक्ति, 'अतिसयोक्तिरूपक जहां केवलही उपमान' सारोपा लक्षना सभाप्रकास में, 'रोप्यमान जहँ रहत है रोप्य विषे नहि होय। रोप्य विषय जान्यो परै साध्यवसाना सोय" ॥ आरोप्यमान मतङ्ग, नायक आरोप्य विषै ॥३८२॥

पलनि पीक अंजन अधर धरे महावर भाल।
आजु मिले जु भली करी भले बने हो लाल॥३८३॥

पलनि द्रुति। धीराधीरा की उक्ति नायक सों, पूर्वार्द्ध स्पष्ट—हे लाल आजु मिले जु भली करी, निसानी सों चोरी जाहिर भई। हे लाल भले बने हो, पल विषे पीक इत्यादि सों बहुत सुन्दर लागत हो, हाथी को भी रँगो है, करो हाथी भले बने हो, हे लाल, किम्बा भले बने दूलह हो, वक्तानायिका वैधव्य सापराध नायक ताके प्रभाव तें विपरीतादि अर्थ में लच्छन लच्छनाहोति है। तासों भली करी याको अर्थ बुरी करी, भले बने हो याको अर्थ बुरे बने हो जानिये। सभाप्रकास, 'तजे सब्द निज अर्थ कों पर अन्वय सिधि हेत, जानि परै जहँ अर्थ अनि लच्छन लच्छ विजेत', शब्द आपनो अर्थ छाड़े पर कहिये और पद ताको जो अन्वय सम्बन्ध ताकी सिद्धि के लिये, तहां और अर्थ जाहिर जानि परै। तहां लछन लछन, अगूढ़ व्यंग्य है, तासों मध्यम काव्य, असंगति अलङ्कार—"और ठौरही कीजिये और ठौर को काम" ॥ ३८३ ॥

गहकि गांस औरै गहे रहे अधकहे बैन
देखि खिसौंहैं पिय नयन किये रिसौंहैं नैन ॥३८४॥

गहकि द्रुति। सखी सों सखी—गहकि कोलाहल करि कै, गांस अभिप्राय औरही गहे, नायक औरही कहै नायिका और समुझी, फेर बैन वच आधे कहे आधे नहीं, प्रिय के नैन खिसौंहैं, कछु लाज कछु गुस्सा लिये देखि कै, नायिका तें रिसौंहैं रिस भरे नैन किये, इनकी आसक्ति कोई और सों है, यातें खिसौंहैं नैन किये आयी हैं अनुमान करि जान्यो, अनुमानालङ्कार, औरै पद सों भेद कातिशयोक्ति, छेकानुप्रास भी है ॥ ३८४ ॥

तेह तरेरे त्यौर करि कत करियत दृग लोल ।
लीक नहीं यह पीक की श्रुतिमनि झलक कपोल ॥३८५॥

तेह इति । नायिका सों सखीवचन—तेह गुस्सा तासों तरेरे त्योर डरपावनी सूरति करि कत काहे को दृग को लोल चञ्चल करियतु है । लीक लकीर पीक की नहीं है, और नायिका के चुम्बन सों नहीं लगी है । कान में जो है मनि ताकी झलक कपोल में है, सखी के वचन सों नायिका को भ्रम गयो । भ्रान्त्यपन्हुति—

"भ्रान्ति अपन्हुति वचन सों भ्रम जब पर को जाय" । ३८५ ।

बाल कहा लाली भई लोयन कोयन माँह ।
लाल तिहारे दृगन की परी दृगनि में छाँह ॥३८६॥

बाल इति । आधे दोहा में नायकवचन, आधा में नायिका को वचन—हे बाल तेरे लोचन के कोआ में कहा क्यों लाली भई है ?। हे लाल तिहारे नेत्रनि की हमारे नेत्रनि में छांह प्रतिबिम्ब पर्‍यो है, तुमारे नेत्र राति औरि पास जागे हो तासों लाल हैं, चित्रालङ्कार ॥ ३८६ ॥

तरुन-कोकनदबरन वर भये अरुन निसि जागि ।
वाही के अनुराग दृग रहे मनो अनुरागि ॥ ३८७ ॥

तरुन इति । अधीरा की उक्ति नायक सों—तरुन नवीन कोकनद कमल ताको जो वरन रंग तासों वर श्रेष्ठ अरुन लाल भए हैं, निसा राति में जागि के तुमारे दृग, तुमारी वा प्रिया के अनुराग सों मानो रँगि रहे हैं, अनुराग हेतु, जागरन की लालिमा

सिद्ध है, सिद्धास्पदहेतूत्प्रेक्षा । किंवा है तरुनकोकनद लालकमल सो वर श्रेष्ठत नहीं, याते वर श्रेष्ठ ए अरुन तुमारे दृग सो जागि कैं भए हैं, कमल कौं तो रात्रि में शयन. तुमारे नेत्रनि को जागरन यातें अधिकाई, किंवा अरुन निसि अरुनोदय पर्यन्त निसा में जागि कैं भए हैं ॥ ३८७ ॥

केसर-केसरि कुसुम के रहे अंग लपटाय ।
लगे जानि नख अनखली कत बोलत अनखाय ॥३८८॥

केसर इति । सखीवचन खण्डिता सों—केसरि जे कुसुमफूल ताके केसर किंजल्क, सो अंग में लपटाय रहे हैं, तूं नायिका के नख लगे जानि कैं, अनखली पाठ मैं गुस्सावाली कोपना जानिए। अनखुली पाठ में, बात खोलि कैं प्रकासि कैं तूं नहीं कहति हैं, कहत क्यौं बोलति है, अनखाय सक्रोध, केसरि लगी कहे सों पीसी केसरि की प्रतीति है, तौ केसरि कहे इहां अधिक पद दोष नहीं । भ्रान्त्यपन्हुति ॥ ३८८ ॥

सदन सदन के फिरन की सद न छुटै हरिराय ।
रुचै तितै विहरत फिरौ कत विहरत उर आय ॥३८९॥

सदन इति । नायक सों धीरा खण्डिता को वचन—हे हरिराय, सदन सदन घर घर फिरिबे को सद सुभाव तुमारो नहीं छुटै, रुचै तहां विहार करते फिरो, कत क्यौं हमारे उर में आय कैं स्वप्न में विहार करत हौ, विहरत को अर्थ चीरत भी कोई कहत है, आय कैं हमारे उर कौं विहरत हौ चीरत हौ, जहां रुचै तहां विहरौ यह विधि, ध्वनि में निषेध, औरि के इहां मति जाहु

हमारे इहां रहो। वक्ता नायिका, वोद्धव्य नायक के प्रभाव तैं निकरै है। आक्षेपालंकार—

"दुरै निषेध जु विधिवचन लच्छन तीजै लेखि" ॥ ३८८ ॥

पट कै ढिग कत ढाँपियत सोभित सुभग सुवेख ।
हद रदछद छवि देत यह सद रदछद की रेख॥३९०॥

पटकै इति। यह दोहा खण्डिता में लिख्यो है, हे सुभग नायक को संबोधन करि, पट सों ढाँपिबो रदछद की रेख अच्छो नहीं बनै, लज्जिता सों सखी की उक्ति, पटकै ढिग, पट मुख पर को वस्त्र कै को अर्थ करिकैं, पट कौं नजीक करिकैं क्यों ढांपियत है, हे सुभग सौभाग्यवतो सुवेष सुतरह सोहत है भासत है, हद जेतनो चाहिए तेतनो, रदछद रद नाम दाँत ताको छद कहिए आच्छादन करनवालो अधर ओठ, ताहि अधर विषैं छवि देत मोहत है, य ह जो है, सद कहिए तुरत को रद दाँत ताको छद कहिए छत घाव ताको रेखा। पट को ढांपिबो प्रतिबन्धक है तोभी सोभिवो कारज भयो। विभावना—"प्रतिबन्धक के होतहूँ कारज पूरन मानि" वृत्ति अनुप्रास है। 'बहुत बार अच्छर कहै वहै वृत्ति है जानि' ॥ ३९० ॥

मोहू सों बातनि लगे लगी जीहि जिहि नाय ।
सोई लै उर लाइए लाल लागियत पाय ॥ ३९१ ॥

मोहू सौं इति। नायिका को उक्ति नायक सौं—हमसों बातनि लागे हो तो भी जाहि नायिका के नाम सों तुमारी जीभि लगी है, जाको नाम तुम अब कहे हो, सो नायिका कौं लैकैं उर सौं लगाइये, हमे छाड़िये यह अर्थ, हे लाल तुमारे पाव लगति हौं,

सोई लै उर लाइए, बिधि, अब कबहीं वाके पास मति जाहु, ध्वनि में निषेध । आक्षेपालंकार—"दुरै निषेध जु बिधिबचन लच्छन तीजै लेखि" बिधि में निषेध दुर्यो है ॥ ३८१ ॥

लालन लहि पाए दुरै चोरी सौंहँ करै न ।
सीस चढ़े पनिहाँ प्रगट कहत पुकारे नैन ॥ ३९२ ॥

लालन इति । रात्रि में औरि पास नायक जाग्यौ है, नैन अरुन देखि खण्डिता कहति है । हे लालन लहि पाए, जानि लिये जैसे कपटी तुम हौ, सौंह सपथ किएँ चौरी न दुरै नहीं छपै, तुमारे सीस पै चढ़े, पनिहा, जो चोरी कौं ठहराय देइ सो पनिहा कहावै, पनिहा जे नैन हैं ते प्रगट जाहिर पुकारें कहत है, नैन लाल सौं जान्यो जात है, नैन की अरुनता सौं चोरी को समर्थन सो पनिहा रूपक जानिए । काव्यलिंग—

काव्यलिंग जहँ युक्ति सौं अर्थ समर्थन होय॥ ३८२ ॥

तुरत सुरत कैसे दुरत मुरत नैन जुरि नीठि ।
डौंड़ी दै गुन रावरे कहत कनौड़ी डीठि ॥ ३९३ ॥

तुरत इति । नायक सों अधीरा खण्डिता की उक्ति—तुरत को सुरत मैथुन सो कैसे दुरत है छपत है ? तुमारे नैन हमारे नैन सों जुरिकैं मिलिकैं सामने होयकैं नीठि कोई तरह सों जो रावरी सों, फेरि लाज सों मुरत है, फिर जात है, रावरे तुमारे गुन कौं डौंड़ी देकैं नगारा देकैं ढिँढोरा देकैं कनौड़ी डीठि अपराध सों सरमिन्दी डीठि कहति हैं, औरि नायिका की आसक्ति तुरत सुरत वृत्ति अनुप्रास । डौंड़ी दै लोकोक्ति—

लोकोकति कछु बचन जहँ लीनें लोक प्रवाद ॥ ३८६ ॥

मरकतभाजन-सलिलगत-इन्दुकला के बेष ।
झीन झगा में झलमलै स्यामगात-नख-रेख ॥३९४॥

मरकत इति। नायिका की उक्ति नायक सौं—मरकत नीलमनि ताको भाजन पात्र, तामें जो सलिल जल, तामें प्रतिबिम्ब करिकैं प्राप्त भई जो इन्दुकला ताको बेष तरह, महीन झगा जामा तामें झिलमिलति है झलकति है, स्याम सम्बोधन, किंवा स्याम गात में नख की रेखा। मरकत सो अंग सलिल सो जामा, इन्दु कला नख रेख, प्रतिबिंब भीतर भासै है, मानो जल में है, यातें सलिल गात कह्यौ, बेष को अर्थ सदृश यातें उपमा, मानो को अध्याहार किएं। गम्योत्प्रेक्षारूप वस्तु ॥ ३९४ ॥

ऐसीयै जानी परति झगा ऊजरे माँहि ।
मृगनैनी लपटी जु हिय बेनी उपटी बाँहि ॥ ३९५ ॥

ऐसीयै इति। नायक सों खंडिता की उक्ति—ऐसियै बात निश्चै जानि परति, ऊजरे जामा में मृगनैनी लपटी जु हिय, मृगनैनी इनके हिय सों लपटी है, ताकी बेनी चोटी बांह सों उपटी उघरी है, जानि परति है, जानौ हों। उत्प्रेक्षा विंजक है, बेनी उपटी है मानो, मृग नाम हरिन को औ पसु को भी है, खंडिता की उक्ति में पसु लीजिये, जाके नेत्र में लाज चतुराई कटाक्ष नहीं, खंडिता सौति की तारीफ क्योंकरि करैगी। वस्तूत्प्रेक्षालङ्कार ॥ ३९५ ॥

वाही की चित चटपटी धरत अटपटे पाय ।
लपट बुझावति बिरह की कपट भरेहू आय ॥३९६॥

वाही की इति । उत्तम खण्डिता की उक्ति नायक सों— वा नायिका की तुमारे मन में चटपटी आतुरता है, कब जाय कैं मिलैंगे। चित्त वहां है, तासों अटपटे अस्तव्यस्त पाय धरत हौ, विरहाग्नि की लपट ज्वाला ताकौं बुझावत हौ, कपट भरे भी आय कैं। किंवा, कपट भरे भी आए हौ, तौभी वा नायिका की वियोग आगि की लपट ताकौं बुझावत हौ, समुझावत हौ अटपटे पाय धरिकैं, कपट भरे आवनो कारन, तासों विरह की लपट विरुद्ध तें कार्ज, विभावना—

काहू कारन तें जबैं कारज होय विरुद्ध ॥२९६॥

कत बेकाज चलाइयत चतुराई की चाल ।
कहे देत गुनि रावरे सब गुन-बिन गुन माल ॥२९७॥

कत बेकाज इति । प्रात आयौ नायक तासौं खंडिता को वचन कत क्यौं बेकाज चलावत हो प्रसंग करत हौ, चतुराई की चाल कौं, क्रिया कौं। बात कौं बिनागुन की छाती में उपटी जो है माला औरि की सो रावरे तुमारे सब गुन कौं कपट झूट इत्यादि कौं कहि देति है। किंवा, सब नाम राति को है फारसी मैं, राति के गुन कौं जो कछु राति किए हौ ताकौं कहैं देति है, विना गुन की जो है माला ताकौ कहनौं नहीं संभवै, विरोधाभास अलंकार—

भासैं जहां विरोध सो कहै विरोधाभास ॥ २९७ ॥

पावक सो नैननि लग्यो जावक लाग्यो भाल ।
मुकुर होहुगे नेकु में मुकुर बिलोको लाल ॥ २९८ ॥

पावक इति। अधीरा खंडिता की उक्ति नायक सौं—तुमारे भाल में लिलार में जावक महावर लग्यो है सो हमारे नैंननि कौं पावक अग्नि सो लग्यो, नेंकु सें थोरीहो बार में तुम मुकुर होहुगे नटि जाहुगे, हमैं भुठाहुगे, तातैं मुकुर दर्पन कौं देखौ हे लाल! सो को अर्थ मानो अच्छो लगैहै यातैं उतप्रेक्षा, सो की तुल्य अर्थ लिए पूर्नोपमा, औ जमक दोऊ की संसृष्टि ॥ ३६८ ॥

रही पकरि पाटी सरिस भरे भौंह चित नैंन ।
लखि सपने पिय आन-रत जगतहुँ लगति हियै न ।

रही इति। खंडिता में लगावनों, नायक प्रात आयो है तव नायिका सखी सौं कहति है,—सपने आनरत, हमारे नायक सौं सपना में कोई तिया आन आयकैं रत भई है रमन करै है, रही पकरि पाटी सरिस, ताकी पाटी चोटी मैं सरिस सक्रोध होय कैं पकरि रही, रोस सौं वा नायिका नें आपनी भौंह औ चित्त औ नैन कौं भरे, किंवा मैं भरे, लखि जगत हूं लगत हिए न, लखे कौं फ़ख भएं लखिहै। मैं जगत हूं जागत के भीत हिए न, ताही के ऐन घर के लग नजीक लखे दिन मैं, यह अर्थ स्वप्न हमारो सांच भयो याते खंडिता, मुख्यार्थ, मध्यम मान है, सखी सौं सखीवचन, खाट की पाटी पकरि रही, सरिस रिस सहित, रोस सौं भरे भौंह चित नैंन, सपना में आन तिय सौं रति देखि कैं, जगत हूं गरे नहो लगति है। भ्रांति अलंकार, औरि मैं औरि भ्रम ॥ ३६६ ॥

रह्यो चकित चहुँधा चितै चित मेरो मतिभूलि ।
सूर उदै आये रही दृगनि सांझ सी फूलि ॥४००॥

रह्यौ इति। वक्र बोलै है यातैं धीरा की उक्ति नायक सौं—हमारो चित चकित होय कैं आश्चर्य मानिकैं चहूंघां चहूंओर चितै रह्यौ विचारि रह्यौ मतिभूल की तरह भ्रांत सें। किंवा, मेरो मतिभूल मेरो मतिभ्रम है, किंवा है मतिभूल भ्रांत, हम सों तुरत आयवे कौं कहि गए थे, तुम सूर्य्य के उदै समय आए। तुमारे दृगनि में सांझ सी फूलि रही है, राति जागे हौ नेत्र लाल है। किंवा, कोय सौं तुमारे दृगनि में, रवि उदै संध्या फूली है मानौं, यातैं उत्प्रेक्षा ॥ ४०० ॥

इति हरिचरणदासकृतायां हरिप्रकाशाख्यसप्तशतीटीकायां
चतुर्थशतकव्याख्याने चतुर्थोल्लासः ॥ ४ ॥

अनत बसे निस की रिसनि उर बरि रही बिसेषि।
तऊ लाज आई उझकि खरे लजौंहें देखि ॥४०१॥

अनत बसे इति। उत्तमा खण्डिता सखी सौं सखीवचन—अनत औरि ठौर बसे रहे, निसि की रिसनि राति के क्रोध सौं उर मैं आगि विशेष करिकैं बरि रही, सारी राति रहे यातैं विसेष तौभी लाज उझकि कैं आई, अबलौं कोप सौं दबी थी, अति लजौंहौं देखि कैं। किंवा लजौंहौ खरे खड़े देखि कैं खरे लजौंहैं। हेतु लाज आवनो कार्ज। हेतु अलंकार ॥ ४०१ ॥

सुरँग महावर सौति-पग निरखि रही अनखाय।
पिय अँगुरिन लाली लखे खरी उठी लगि लाय॥४०२॥

सुरँग इति। सखी सौं सखी—सुंदर है रंग जाको ऐसो जो

महावर सौ सौति के पाव में निरख कैं अनखाय् अनखाय क्रोध करि रही। किंवा, सुरंग लाल जौ है सौति के पाव तामें महावर निरखि, फेरि पिय की अंगुरिन में लाली देखी जान्यौं नायक नें लायौ है, यातैं खरी अति लाय आगि लागि उठी, सुरंग महावर हेतु, अनखायवौ कार्य, पियअँगुरी में लाली हेतु, लाय उठिबो हेतुमान, हेतु अलंकार—

हेतु अलंकृति होय जब कारन कारज संग ॥ ४०२ ॥

कत सकुचत निधरक फिरौ रतिऔ खोरि तुमै न ।
कहा करौ जौ जाय ए लगे लगौंहें नैन ॥४०३॥

कत इति। नायक सौं नायिकावाक्य—क्यौं संकोच करत हौ? निधरक निसंक फिरौ, रतिऔ एक रती भरि भी, तुमकौं, खोरि विक्षेप नही, थोरी भी तुम मं उन्मत्तता नहीं, तुम कहा करौ तुमारो बस नहीं, ए तुमारे लगौंहे नैंन, लागिवे को है स्वभाव जिनको, जो औरि सौं जाय लगैं आसक्त होंहि, निधरक फिरिवे की विधि तो व्यक्त है, मति कहूं जाहु यह निषेध क्यौ है तुम लगौंहें नैननि कौं रोको तुम कहूं मति जाहु, आक्षेपालंकार।

दुरै निषेध जु विधिवचन लचन तीजो लेखि । ४०२ ।

प्रानपिया हिय में वसै नखरेखा-ससि भाल ।
भलौ दिखायौ आनि यह हरिहर-रूप रसाल ॥४०४॥

प्रान इति। नायिका की उक्ति नायक सौं—अधीरा है, प्रान की प्रिया नायिका तुमारे हिय में वसै है, जैसें विष्णु में लक्ष्मी वसै है, नखक्षत सो ससि भाल में है यातें शिव को रूप भलौ

कियौ, आयकैं हरि को हर को रूप रसीलो दिखायो रेखासति। रूपक—"उपमानरु उपमेय में भेद परै न लखाय" ॥ ४०४ ॥

ह्याँ न चलै बलि रावरी चतुराई की चाल ।
सनख हिए खिन खिन नटत अनख बढ़ावत लाल ॥

ह्यां न इति। नायिका को उक्ति नायक सौं—हे बलि इहां तुमारी चतुराई की क्रिया किंवा बात नहो चलै, सनख हिए, तुमरो हृदय सनख है, औरि स्त्री को नखछत लाग्यौ है, तुम खिन खिन छन छन में नटत हौ हमें झुठावत हौ, हे लाल यातें अनख कोप बढ़ावत हौ। किंवा, छन छन नटत हौ सनख हिए सौं हमारो अनख बढ़ावत हौ, उठावत हौ दूर करत हौ, सो क्यौं करि होय सकै, स्पष्ट में विरोध भासै है, सो जो सनख सो अनख नहीं, "जिहि थल शब्दविरोध है अर्थ मांहि न विरोध। शब्दविरोधाभास तिहि भाषत जाहि प्रबोध" किंवा, सनख हृदय हेतु, अनख बढ़िबो हेतुमान, हेतु अलंकार ॥ ४०५ ॥

न करु न डरु सब जग कहत कत बेकाज लजात ।
सौंहैं कीजे नैन जौ सांची सौंहैं खात ॥४०६॥

न करु इति । नायक सौं नायिकावाक्य—न करै न डरै यह बात सब जगत कहत है, तुम क्यौं बेकाज निरर्थक लजात, हौ, सांची सौंहैं खात, जो तुम सत्य सपथ करत हौ, तो हमारे सौंहे साम्हने नैन कौं कीजिए, लाली जागरन की, औ लाज डर नहीं होयगो, न करै न डरै लोकोक्ति इहां ऐतिह्यअलंकार ॥४०६॥

कत कहियत दुख देन कौं रचि रचि वचन अलीक।
सबै कहा उर ह्वै लखै लाल महाउर-लीक ॥४०७॥

कत इति। नायिकावाक्य—कत काहे कौं, कहियत है दुख देने कौं बनाय बनाय कैं, वचन अलीक झूठा, हे लाल तुमारे उर मैं है महाउर की लीक ताहि लखें देखे सबैं कहा? जो तुम कहत हौ सो कछू नही झूठा, कोई या तरह कहत है, हे लाल महावर लीक लखें तुमारी कही सबै कहा उर है, तकलीफ है, महावर लीक देखति है, प्रत्यक्षालंकार। "इन्द्रिजन्य सुज्ञान जहँ प्रत्यक्षालंकार" कहूं पाठ कहा वर ऐसो है, तहां ऐसो अर्थ अ-चर रति के चिन्ह सब लखि कहा होय कुछु नही, हे लाल महा-वर की लीक लखें औरि सब दबि जात है, किंवा, हे वर दूलह बनि आए हौ महावड़ी लीक जो लाल है पान की है, किंवा, जावक की है ताहि लखें, औरि सब रतिचिन्ह कहा है ॥४०७॥

नखरेखा सोंहैं नई अलसोंहैं सब गात।
सोंहैं होत न नैन ए तुम सोंहैं कत खात ॥४०८॥

नख रेखा इति। नायक सौं नायिकावाक्य—नवीन नख की रेखा सोहत है, आलस भरे सब अंग हैं, ए तुमारे नैन हमारे साम्हनैं नही होत हैं, लाज सौं, तुम सपथ क्यों करत हौ? सपथ करिबे को निषेध युक्ति सौं करति है, यातें काव्यलिंग अलंकार—सौंहैं सौंहैं जमक भी है ॥ ४०८ ॥

लाल सलोने अरु रहे अति सनेह सौं पागि।
तनिक कचाई देत दुख सूरन लौं मुह लागि॥४०९॥

लाल इति। प्रेमगर्विता की उक्ति सखी सों—लाल सलोने हैं लावन्य भरे हैं, औ सनेह प्रेम सों अति पागि रहे, अति कहे सों नेत्रादि सों अंतःकरन सों प्रेममय होय रहे हैं, वक्रविधि कहति है, तनक थोरी जो है कचाई व्यवहार की, सो हमकों दुख देति, बिपरीत लच्छना करि सुख देति है जानिए, मुहँ लागि मुख सों मुख लगाए रहत हैं, हमारो वियोग एक घरी भी नहीं सह्यौ जात है, सूरन जमीकंद पूरब में औल कहत हैं ताकी उपमा देति है, सलोनौ लौन सहित है, औ नेह तेल तासों पागि रह्यौ है, जो कच्चा रहे तो मुह में लागै, किंवा मुहँ लागि हमारे मुख सों लागि रहे हैं, हमारी बात नही सहत हैं, या अर्थ करैं बिब्बोक हाव, "है विब्बोक जु इष्ट को गर्व अनादर सोय" लाल उपमेय, सूरन उपमान, लौं वाचक, मुंह लागि साधारन धर्म, पूर्नोपमालंकार—'इहिंविधि सब समता मिलै पूरन उपमा जानि' खंडिता में औरनि सों नायक कों बात कहत सुनी है, औरनि सों अंतःकरन की लगनि नही है, मुखलागि है, मुंह सौं लगै हैं, अंतःकरन सों प्रेम नहीं, एतनोई हमैं दुख देति है, सूरन भी हृदय कों नहीं लगै है, मुख लागि शब्द छल करि कह्यौ, मुख्य खंडिता को उदाहरन नहीं ॥ ४०८ ॥

पल सोहैं पगि पीक रँग छल सोहैं सब बैन।
बल सोहैं कत कीजियत ए अलसोहैं नैन ॥ ४१० ॥

पल इति। नायिका वचन—पीक के रंग सों पगिकै मिलि कै पलक सोहत हैं, छल कपट सों वचन सोभत है, किंवा छल

सौंह सपथ सब बात मैं है छल करत हौ, औ सौंह काढ़त हौ, बल सौं जो रावरी सों साम्हनें क्यौं करत हौ, ये अलसौहे नैन, "धीरा बोलै बक्रविधि' बलसों जोरावरी सों कत क्यौं सौंहे सपथ कीजियतु है, ये तुमारे आलसभरे नैन हैं सो साची हैं, जामें व्यंग्य रहै सो उत्तम, जामें थोरो व्यंग सो मध्यम, जामें व्यङ्ग्य नहीं सो अधम, इहां व्यङ्ग्य नहीं, सौंह करिबे को निषेध को समर्थन करै है । काव्यलिंगअलङ्कार—

"काव्यलिंग जहं अर्थ कौं करै समर्थन जानि" ॥ ४१० ॥

कत लपटैयत मो गरे सो न जु ही निसि सैन ।
जिहि चंपकबरनी किए गुलअनार रँग नैन ॥४११॥

कत इति । नायिकावाक्य—क्यौं मो गरें मेरे गर सौं लपटात हौ ? सो न, सो मैं नहीं, जु ही, निसि सैन, जु ही नाम जो ही अर्थात् रही, निसा राति तामें तुमारे साथ सैन मैं सज्या विषैं, जो चम्पकबरनी ने तुमारे गुल अनार रंग नैन किए हैं । फूलबन्द, मोगरा, सोनजुही, चम्पा, गुलअनार । मोगरा और सोनजुही में श्लेष, औरि में श्लेष नहीं निबाह्यौ, यातें श्लेष अलङ्कार, औ उपमालङ्कार भी है, इहां मुख्य मुद्रालङ्कार है ॥ ४११ ॥

भए बटाऊ नेह तजि बादि बकति बेकाज ।
अब अलि देत उराहनो उर उपजति अति लाज ॥

भए इति । नायक प्रात आयो है, तब सखी उराहनो देति है, तहां सखी सों नायिकावचन—हमसों नेह कों तजि कैं ए बटाऊ बटोही भए, औरि की राह लगी, किंवा इनसों नेह तजौ

ए वटाऊ भए, वादि फेरि इनसों वकति है, अनहक कहति है सो वेकाज वृथा, हे अलि अब इनै उराहनो देति है, तासौं इनकै उरमें, किंवा हमारे उर में अति लाज उपजै, नायक तौ इनै चाहत नाहि नायिका इतनी चाहति है। किम्वा उद्धवजी ज्ञान को उपदेश करत हैं, तहां मधुकर सौं व्रजदेविनि की उक्ति, हे अलि उद्धव जी उनैं कृष्ण कौं उराहनो देत उर में अति लाज उपजति है, औरि वही अर्थ इनैं उराहनो दे है, तूं वेकाम की वात कहति है, औरि ठौर मति जाहु यह निषेध ध्वनि में निकरै है, आक्षेपालंकार—"दुरै निषेध जुविधि वचन" ॥ ४१२ ॥

सुभरु भर्‌यौ तुव गुन-कननि पचयो कटक कुचाल ।
क्यों धौं दार्‌यों लौं हिये दरकत नाहिन लाल॥४१३॥

सुभरु इति । अधीरा की उक्ति—तुमारो जो गुन, सो सब है कन, दाना, तिननि सौं सुभर सुंदरी तरह सौं भर्‌यो है पूर्न है, तुमारो कपट औ कुचाल कुचलन तासौं पकायो है, हे लाल हमारो हियो क्यौं काहे धौं दाख्यौ लौं अनार की तरह दरकत फाटत नाहिन नाहीं है, गुनकन निरूपक, दाख्यौं उपमान, हिय उपमेय, लौं वाचक, दरकत धर्म, उपमा दरकिवे के कारन है, पैं दरकै नहीं, विसेषोक्ति, विसेषोक्ति जो हेतु सौं कारज उपजै नांहिं ॥

मैं तपाय त्रै ताप सौं राख्यौ हियो हमाम ।
(मति कबहूं आवै इहां पुलकि पसीजे स्याम)॥४१४॥

मैं तपाय इति । खंडिता में व्यक्त नहीं लगै, नायक कौं सुनाय कैं नायिका की उक्ति—तीनि ताप, ताप आधिभौतिक

जो भूत प्रानी सों होय सौति सों एक ताप भयो, दूसरो आधिदैविक देवता सों होय दूसरो ताप काम सों भयो, तीसरो आध्यात्मिक आत्मा विषें होय, इहां अनादर सों मन को दुख, मैं यह तीनि ताप सों हृदय सो है हमास, हमास लोह को कराह गाड़्यो रहत है कोठरी मैं यामें जल भरि कें गरम करत हैं तहां लोग नहात हैं ताकों तपाय राख्यौ है मति आशंका बिषै, कबहूं इहां आवै, सौति के वस परें हैं आवनों दुर्लभ, पुलकै औ पसीजै किंवा, कबहूं उनें मति स्मरन आवै हमारी वह भी प्रिया है दुखी है, तो पुलकै हमैं देखि कैं औ पसीजे को अर्थ राजी होनो भी है, स्याम, कोई वैष्णव की उक्ति, हमारी भक्ति सों सानंद होय पुलकै कुछु मोहि बिषै प्रसन्नता करैं, हिय सो हमास रूपक—॥ ४१४ ॥

आज कछू औरैं भए ठए नए ठिक ठैन ।
चितके हितके चुगल ए नितके होहिं न नैन ॥४१५॥

आजु कछू इति। नायिका की उक्ति नायक सों होय तो खंडिता, सखी की उक्ति तो लच्छिता, नायिका की उक्ति सखी सों, तो अन्यसंभोग दुःखिता। निति के होहि न नैंन, ए तुमारे निति के सदा के नैंन नहीं है। आजु कछू औरही भए हैं, नए ठीक ठाकनि सों ठए हैं, बने हैं चित्त मैं जो हित किए हो ताके चुगुल हैं. औरै पद तें भेदकातिशयोक्ति, औरि दिन औरि आजु औरि ॥ ४१५ ॥

फिरत जु अटकत कटनि विन रसिक सुरस नहि स्याल।
नए नए निति निति हितनि कत सकुचावत लाल ४१६

फिरत इति । नायिकावाक्य है रसिक, रसिक को अर्थ—तारीफ करिबे योग्य सुंदर प्रसस्त औ निंदित औ जाकौं रस राग रहै सो रसिक, तुम कटनि बिना कटनि को अर्थ अति आसक्त ताहि बिना, इहां लच्छना जानिए, जो कोई कटै है सो तहांई रहत है, कटनि चूर चूर श्रृंगार मैं कहत हैं, चूर चूर भए बिना रंग नहीं चढ़त है, अटकत स्त्रीन सौं उरझात फिरत हौ, यह सुरस है श्रृंगार रस है ख्याल नहीं है, निति निति सदा नए नए हित सौं नवीन हित करत फिरत हौ तासौं कत क्यौं सकुचावत हौ? लजात हो ?। औरि स्त्री कहैंगी इनकी प्रिया हित नहीं करति है किंवा, सुंदरी नांही है तासौं ए फिरत फिरैं हैं, खियाल नही है, यातें लोकोक्ति, "लोकोकति कछु बचन ज्यौं लीनें लोकप्रवाद" कटनि कारन अटकिबे को सो नहो है, अटकिबो कार्य्य है, बिभावना अलंकार। 'होति छ भांति बिभावना कारन बिनहीं काज' मुख्य इहां प्रतिषेधालंकार है। ख्यालही मैं तुमारी प्रवीनता है श्रृंगार में नहीं ॥ ४१६ ॥

जो तिय तुव मनभावती राखी हिए बसाय ।
मोहिं खिजावत दृगनि ह्वै वहिऐ उझकति आय॥४१७॥

जो तिय इति। नायक सौं नायिकावाक्य—जो स्त्री तुमारी मनभावती है, संसार तौ वाकौं अछी नहीं कहै है, हृदय मैं बसायकैं राखी है, तुमारे दृगनि मैं होयकैं आयकैं मोहि खिजावति है, मोही आंखिनि मैं आयकैं मानौ उझकति है, वा नायिकामय तुम होय रहे हौ, गम्योत्प्रेक्षा मानौ उपर सौं जानि परत है ॥ ४१७ ॥

मोहिं करत कत बावरी करैं दुराव दुरै न ।
कहैं देत रँग राति के रँगनिचुरत से नैन ॥४१८॥

मोहि इति। खंडिता लच्छिता अन्य संभोगदुःखिता में लागत है—मोहि कत क्यों बावरी करौ हौ? छपाव करैं छपै नहीं, राति के रंग कों लच्छना सों बिलास जानिए, कहि देत है, रंग चूवत से जे नैन हैं ते राति जगे अति लाल भए हैं मानौं रंग चूवै है, इहां से मानो को अर्थ कहत है कि याके आगें है, अनुक्तास्पद वस्तूत्प्रेक्षा ॥ ४१८ ॥

पट सौं पौंछि परे करौ खरी भयानक-भेष ।
नागिन ह्वै लागति दृगनि नागवेलि की रेख ४१९॥

पट इति। नायक सौं नायिकावाक्य—पट कपरा सों पौंछि कैं परे करौ ष दूरि करौ खरी अति भयानक भेष है, नायिका के मुख की जो नागवेलि पान ताकी रेखा नागिनि होय कैं दृगनि में लागति है, जड़ रेखा में सक्तिविशेष यातें खरी भयानक कही, नागवेलि की रेखा उपमेय सो उपमान नागिनि होय कैं लागति है डसति है, परिनामालंकार, "करै क्रिया उपमान ह्वै बर्ननीय परिनाम"। कहूं नागिनि सी यह भी पाठ है॥ ४१९ ॥

ससिबदनी मोकों कहत हौं समुझी निज बात ।
नैन-नलिन प्यौ रावरे न्याय निरखि नै जात ॥४२०॥

ससि इति। नायक सों नायिकावाक्य—तुम हम कौं ससिबदनी चंदमुखी कहत हौ, हौं समुझी निज बात, आपनी बात

किंवा निज सार जो है बात सो समुझी है, ष्यौ नायक तुमरे नैंन नलिन कमल हैं, न्याय है युक्त है जो हमारो मुख देखि कै नै जात हैं, तुम सापराध हौ लाज सौं नीचौ मुख करत हौ यह ध्वनि, ससि सो है बदन जाको उपमा नैननलिन रूपक ससि-बदनी बिसेषन साभिप्राय है—

है परिकर आसय लिए जहां विशेष न होय। ४२०।

टुरै न निघरघट्यौ दिऐ ए रावरी कुचाल।
बिषसी लागति है बुरी हँसी खिसी की लाल ४२१

टुरै न इति। नायक सों नायिकावाक्य—हे लाल ए रावरी कुचाल यह जो तुमारी कुचलन, सापराध होय आए हौ, निघर-घट्यौ दिए, टुरै छपै नहीं, निघरघट दुलखिवो पूरब में घघीट कहै है, तुम यह काम किए हौ, हम क्या ऐसो काम करैंगे या तरह, विष सारीखी बुरी लागति हौ, हँसी खिसी की कछु लाज कछु क्रोध सो खिसी, विष उपमान, हँसी उपमेय, सी वाचक, बुरी लागिबो धर्म। पूर्णोपमालंकार ॥ ४२१ ॥

जिहिं भामिनि भूषन रच्यो चरन-महाउर भाल।
वही मनो अँखिया रँगी ओठनि के रँग लाल॥४२२॥

जिहि भामिनि इति। नायिकावाक्य—मान में वाके पाय परे हौ जो भामिनि क्रोधवाली ने अपने चरन के महावर सौं तुमारे भाल लिलार में भूषन सोभा रची है, चरन न कहते तौ केवल महावर आवतो, पाव परनों नहीं निकरतो, हे लाल वाही नायिका ने ओठनि के रंग सौं आखें रङ्गी हैं मानौ, जागे हौ

राति तासौं आंखि लालि हैं, मानो को अन्वय क्रिया सों है,यातें अनुक्तास्पद वस्तूत्प्रेक्षा ॥ ४२२ ॥

चितवनि रूखे दृगनि की बिन हाँसी मुसुक्यान ।
मान जनायो मानिनी जानि लियो पिय जान ॥४२३॥

चितवनि इति। सखी सों सखी—रूक्ष नैननि सों चितावनी हँसी की बात बिना मुसुक्यावनी, या दोऊ बातनि सों मानिनी नें मान जनायो प्रकासित कियौ, जानि लियो पिय ने, पिय कैसो है, जान प्रवीन है, किंवा, हे सखि तूं या बात कूं जान समुझ, परोक्ष में कहति हौं, परकै आसय कै जाननवाले नायक सों इन चेष्टा मान की करी नायक ने जान्यौ यातैं, सूक्ष्म अलंकार। "सूछम परआसै लखे सैननि मैं कछु भाय" मान को कारन चिन्ह परस्त्री को सौ नहीं देख्यौ मान कियौ। विभावना अलंकार—

होति छ भांति बिभावना कारन बिनही काज ॥ ४२३ ॥

बिलखी लखै खरी खरी भरी अनख बैराग ।
मृगनैनी सैन न भजै लखि बेनी के दाग ॥४२४॥

बिलखी इति। सखी सों सखीवाक्य—बिलखी आंसू भारती, खरी खड़ी लखै है देखति है, खरी अति नायक सों अनख क्रोध, बैराग्य को अर्थ इहां बेराजीपनों अरुचि जानिए तासौं भरी है, मृग नैंनीसैन सय्या ताकौं नहीं भजै है सेवै है आवै है, बेनी पराई नायिका कीचोटी को दाग निसानी देखि कैं, मृग के नैन से नैंन हैं जाके, मृग उपमान नहीं मृग के नैंन उपमान सो लक्षना सों जानिए है इहां है नहीं, वाचक नहीं है धर्म नहीं

है, बड़े कजरारे इत्यादि, केवल नैंन उपमेय है, उपमान वाचक धर्मलुप्ता, बेनी के दाग सों सेज कों नहीं आवनो दृढ़ कियो। काव्य लिंग, खरी खरी जमक, छेकानुप्रास—

"जहां बीच पद दे परैं अच्छर समता आय।
तहँ छेकानुप्रास है कहत सुकवि समुदाय॥ ३२४॥

हँसि हँसाय उर लाय उठि कहे जु रूषे बैन।
जकित थकित ह्वै ताकि रहे तकाति तिरीछे नैन॥४२५॥

हँसि हँसाय इति। मानिनी सों सखीवचन—दोस तेरोई है, तादिन तूंही रूखे बैन कहे, अब नायक आयो है तूं हँसि नायक कों हँसाय, किंवा, नायक कों हँसाय कैं तूं हँसि, उठि उर सों लाय कैं, जकित थकित जहां के तहांही होइ कैं रहि कैं, ताकि रहे हैं तेरे तिरछोंहें तीरीछे वक्र नैननि कों। सखी सों सखी की भी उक्ति लगै है, हँस हँसाय इत्यादि करि रूखे रुक्ष वचन, नायिका नें कहे, औरि वही अर्थ, रूखे बैन हेतु जकित थकित होनो हेतुमान, हेतु अलंकार। "हेतु अलंकृति होति जहँ कारन कारज संग" कहूं जकित से ह्वै रहे यह भी पाठ है तहां उत्प्रेक्षा॥ ४२५॥

रिस की सी रुष ससिमुखी हँसि हँसि बोलति बैन।
गूढ़ मान मन क्यों रहै भए बूढ़ रँग नैन॥ ४२६॥

रिस की इति। नायक की उक्ति किंवा सखी की उक्ति मानिनी सों—हे ससि मुखी रिस क्रोध की सी रुख तौर चेष्टा है तेरी, औ हँसि-हँसि कैं तूं बैंन वचन बोलति है, गूढ़ गुप्त मन विषैं मान क्यों करि रहै, तेरे नैंन बूढ़ के रंग भए, बूढ़ कों सा-

वन की डोकरी कहत हैं, बीरबूटी कहत हैं, इन्द्रवधू संस्कृत नाम, नैंन बूढ़रंग भए यातें मान प्रगट कियो, काव्यलिंग, बूढ़ के से नैन रंग भए वाचकलुप्ता, उपमा ॥ ४२६ ॥

मुँह मिठास दृग चीकने भौंहैं सरल सुहाय ।
तऊ खरे आदर खरो खिन खिन हियो सँकाय॥४२७॥

मुंह मिठास इति। सखी की उक्ति किंवा नायक की उक्ति नायिका सौं तुमारे मुख में मिठास है कटु वचन नहीं कहति है दृग चीकने हैं रूखे नहीं, भोंहैं सरल सूधी हैं, वक्र नहीं सोभे है सुभाय यह पाठ में भाव भी सुंदर है, तऊ तौभी खरे आदर सौं, अति आदर सौं खरो अति छन छन में हृदय सँकाय है डरे है, सखी की उक्ति में तौभी खरे खड़े हैं, आदर खरो आदर तौ तूं खरो सांच करति है, तोसौं डरत है, और अर्थ वैसेही, आदर तें संका विरुद्ध तं कार्य्य भयो, काहू कारन तें जहँ कारज होय विरुद्ध ॥

पति-रितु-औगुन गुन बढ़त मान माह को सीत ।
जात कठिन ह्वै अति मृदौ रमनी-मन-नवनीत॥४२८॥

पति ऋतु इति। भाषा में ऋतु स्त्रीलिंग है पति सौं रूपक जोग नहीं, ये संस्कृत में पुरुष है यह रीति लीनी है, पति सौ रितु है औगुन और नायिका के संग सौं मान बढ़त है, ऋतु के गुन सौं माघ को सीत बढ़त है. अति मृदु कोमल है रमनी नायिका ताको मन औ नवनीत माखन सो कठोर होय जात है कबि की उक्ति, पति सौ ऋतु सौं रूपक, बढ़िबो एक क्रिया लगै है, यातें दीपक भी जानिए ॥ ४२८ ॥

है, बड़े कजरारे इत्यादि, केवल नैंन उपमेय है, उपमान वाचक धर्मलुप्ता, बेनी के दाग सों सेज कों नहीं आवनो दृढ़ कियौ। काव्य लिंग, खरी खरी जमक, छेकानुप्रास—

"जहां बीच पद द्वै परै अक्षर समता आय।
तहँ छेकानुप्रास है कहत सुकवि समुदाय॥ २२४॥

हँसि हँसाय उर लाय उठि कहे जु रूषे बैन।
जकित थकित ह्वै ताकि रहे तकाति तिरीछे नैन॥४२५॥

हँसि हँसाय इति। मानिनी सों सखीवचन—दोस तेरोई है, तादिन तूंही रूखे बैन कहे, अब नायक आयो है तूं हँसि नायक कों हँसाय, किंवा, नायक कों हँसाय कैं तूं हँसि, उठि उर सौं लाय कैं, जकित थकित जहां के तहांही होइ कैं रहि कैं, ताकि रहे हैं तेरे तिरछोंहैं तीरीछे वक्र नैननि कौं। सखी सों सखी की भी उक्ति लगै है, हँस हँसाय इत्यादि करि रूखे रुच वचन, नायिका नें कहे, औरि वही अर्थ, रूखे बैन हेतु जकित थकित होनो हेतुमान, हेतु अलंकार। "हेतु अलंकृति होति जहँ कारन कारज संग" कहूं जकित से ह्वै रहे यह भी पाठ है तहां उत्प्रेक्षा॥ ४२५॥

रिस की सी रुष ससिमुखी हँसि हँसि बोलति बैन।
गूढ़ मान मन क्यों रहै भए बूढ़ रँग नैन॥ ४२६॥

रिस की इति। नायक की उक्ति किंवा सखी की उक्ति मानिनी सौं—हे ससि मुखी रिस क्रोध की सी रुख तौर चेष्टा है तेरी, औ हँसि हँसि कैं तूं बैंन वचन बोलति है, गूढ़ गुप्त मन विषैं मान क्यों करि रहै, तेरे नैंन बूढ़ के रंग भए, बूढ़ कौं सा-

बन की डोकरी कहत हैं, बीरबूटी कहत हैं, इन्द्रवधू संस्कृत नाम, नैंन बूढ़रंग भए यातें मान प्रगट कियो, काव्यलिंग, बूढ़ की से नैन रंग भए वाचकलुप्ता, उपमा ॥ ४२६ ॥

मुँह मिठास दृग चीकने भौंहैं सरल सुहाय ।
तऊ खरे आदर खरो खिन खिन हियो सँकाय॥४२७॥

मुंह मिठास इति। सखी की उक्ति किंवा नायक की उक्ति नायिका सौं तुमारे मुख में मिठास है कटु बचन नहीं कहति है दृग चीकने हैं रूखे नहीं, भौंहैं सरल सूधी हैं, बक्र नहीं सोभे है सुभाय यह पाठ में भाव भी सुंदर है, तऊ तौभी खरे आदर सौं, अति आदर सौं खरो अति छन छन में हृदय सँकाय है डरै है, सखी की उक्ति में तौभी खरे खड़े हैं, आदर खरो आदर तौ तूं खरो सांच करति है, तोसौं डरत है, औरि अर्थ वैसेही, आदर तैं संका विरुद्ध तं कार्य्य भयो, काह्न कारन तें जहँ कारज होय विरुद्ध ॥

पति-रितु-औगुन गुन वढ़त मान माह को सीत ।
जात कठिन ह्वै अति मृदो रमनी-मन-नवनीत॥४२८॥

पति ऋतु इति। भाषा में ऋतु स्त्रीलिंग है पति सौं रूपक जोग नही, ये संस्कृत में पुरुष है यह रीति लीनी है, पति सौ रितु है औगुन औरि नायिका के संग सौं मान वढ़त है, ऋतु के गुन सौं माघ को सीत वढ़त है, अति मृदु कोमल है रमनी नायिका ताको मन औ नवनीति माखन सौ कठोर होय जात है कवि की उक्ति, पति सौ ऋतु सौं रूपक, वढ़िवो एक क्रिया लगे है, यातें दीपक भी जानिए ॥ ४२८ ॥

कपट सतर भौंहे करी मुख सतरौंहें वैन ।
सहज हँसौंहें जानिकै सौंहें करति न नैन ॥ ४२९ ॥

कपट इति। सखी सौं सखीवाक्य—कपट सौं सतर तरेरी भौंहैं करी, मुख सों सतरौंहें क्रोध सहित वैन वचन कहे, सहजै सुभावही तें हँसौंहें हसनवाले जानि कैं सौंहें नायक कैं सांमने नैंन नही करति है, जो मनाइवे ताई नहीं ठहरै सो संभोग संचारी मान, सहज हँसौंहें सौं नैंननि कौं नहीं सांमनें किये ताकौ समर्थन भयो, काव्यलिंग, भौहें सतरौंहें हसौंहैं, छेकानुप्रास है।

सोवति लखि मन मान धरि ढिग सोयो प्यौ आय।
रही सुपनि की मिलन मिलि तिय हिय सौं लपटाय॥

सोवति इति। सखी सौं सखी—मन में मान धरिकैं, सोवति है या बात कौं लखि कैं जानि कैं प्यौ नायक ढिग नजीक आय कै सोयौ, सपना की मिलन सौं मिलि रही नींद में लपटि गई है, पिय के हिय सौं लपटाय कैं, स्वप्न के मिलन सौं आपनौ इष्ट साध्यौ, "मिस करि कारज साधिए जो कछु चितहि सुहात" पर्य्यायोक्ति ॥ ४३ ॥

दोऊ अधिकाई भरे एकै गौं गहराय ।
कौन मनावै को मनै मानै मत ठहराय ॥ ४३१ ॥

दोऊ इति। सखी सों सखीवचन—क्रीड़ा कलह सौं उपजै सो प्रनय मान कहावै, रूप गुन कुल संपति की अधिकाई है ख्याल छोड़ि बैठे हैं हमारो दाव देहु तो खेलैं नहीं तो कौन खेलै दोऊ दंपति अधिकाई भरे हैं, एकही गौंसों डौर सौं गहरात है,

हमारे कौनं मनाइवे जाय, आपुही मानैंगे ऐसे वचनं सी गहरानों, पूरब मैं अगरात कहत है, कौन मनावै, औ कौन मानै मानही मतं इष्ट वहरात है, किंवा मतं आसंका बिषें मानै मति वहरि जाय. मति येहं भी कहूं पाठ है, किंवा नायिका की आसक्ति औरि नायक मो है नायक की अ-सक्ति औरि नायिका सैं है एसैं भी लगावत हैं, मानठहरावनें कों दृढ कियौ, काव्यलिंग।

काव्य लिंग जहँ अर्थ को करै समर्थन जानि। ४३१॥

लग्यौ सुमन ह्वै है सुफल आतप रौस निवारि ।
वारी वारी आपनी सींच सुहृदता-वारि ॥४३२॥

लग्यौ इति । सखी को उक्ति नायिका सों—जेसो सुमन फूल लग्यौ है तैसो फल होयगो सुंदर मन लग्यौ है तौ फल को अर्थसिद्धि होयगी, आतप धूप सो है रोस क्रोध ताकौ निवारि रोक, हे वावरी थोरे दिन की आपनी वारी पारी अर्थात् जादिन तेरे घर नायक आवै, सुहृदता जो वारि जल है तासौं सींच, बिहारी को दोहा नही, क्रमभंग है, आतप रोस कह्यौ तौ वारि सुहृदता चाहिये, वारी वारी जमक, श्लेष सुमन फल ॥ ४३२ ॥

गह्यौ अबोलो बोलि प्यौ आपै पठै बसीठ ।
दीठि चुराई दुहुन की लखि सकुचौहीं दीठि ॥४३३॥

गह्यौ इति। सखी सौं सखीवाक्य—पिय कौं बोलि कैं बुलाय कै अबोलो मौन गह्यौ, कोई सुंदरी सखी सौं आपुही बसीठ सदेस पठाय कैं, क्यौं डीठि चुराई दुहुन कौं साम्हनें नजरि नहीं करै है, लखि कैं देखि कैं, औ सुकुचौंही. लज्जित; दीठि को अर्थ

देखि कैं। डीठि के चोराइबे सों औ लज्जा सों संभोग को निश्चय कियो, अनुमानालंकार—

जहँ अदृष्ट कों हेतु सों जानि लेत अनुमान ॥४३३॥

खरी पातरी कान की कौंन बहाऊँ बानि।
आककली न रली करै अली अली जियजानि॥४३४॥

खरी दूति। तूं कान की खरी अति पातरी है हलुकी है जो कछु सुनैं सो मानि लेति है, विचारि नहीं सवुक तौर यह अर्थ, कौंन तरह की तेरी बानि प्रकृति है, ताकों बहावौं बहाय देउं, हे अलि हे सखि यह बात तूं जिय में निश्चय कर जान कि आक की कली में अलि जो भौंर सो रली विहार नहीं करै, औरि नायिका आक की कली के समान हैं, आक की कली इत्यादि सों कह्यो अर्थ पुष्ट कियो, अर्थान्तन्यास है—

कह्यो अर्थ जहँ पोषिए औरि अर्थ सों मीत।
सो अर्थान्तरन्यास है बुध जन करत प्रतीत। इहां दृष्टांत भी भासे है ॥४३४॥

मान करति बरजति न हौं उलटि दिवावति सौंह।
करी रिसौंही जाँयगी सहज हँसौंहीं भौंह ॥४३५॥

मान दूति। सखीवाक्य—मान करति मैं नहीं बरजति हौं उलटी मै सौंह दिवावति हौं, सौंह को उलटि पढ़ैं, हंसौ, यह निकरत है, मान मति करौ, रिसौंही रिस भरी भौंह करी जायगी? न करी जांयगी, स्वर भेद सों अर्थ, सहजैं विना कारनहीं हँसौंही जो हैं भौंह, वक्रोक्ति। श्लेष काकु करि अर्थ की रचना औरैं होय—

"वक्र उक्ति सो जानिये मान सलिल मति होय" ॥४३५॥

रुख रूखी मिस रोख मुख कहति रुखौं हैं बैन ।
रूखे कैसे होत ए नेहचीकने नैन ॥ ४३६ ॥

रुख रूखी इति । मान छोड़ावति सखीवाक्य—रुख तौर रूखी रूक्ष है, मिस छल को रोस कोप मुख में है, औ रूखे बैन वचन कहति है, रूखे रूक्ष क्यौं करि होत हैं ए नेह सों चीकने नैन, जो चीकनों सो रूखो नहीं होत है, यातें विरोधाभास ॥

सौंहँहूँ चाह्यौ न तैं केती द्याई सौंह ।
एहो क्यौं बैठी किए ऐंठी मैंठी भौंह ॥ ४३७ ॥

सोहँहूं इति । मानिनी ने सखी तें नायक के सौहँ सामने नहीं चाह्यौ देख्यौ—कितनी मैं सौंह सपथ दियाई तू देखि, एहो अब ऐंठो जो ऐंठी भौंह किए, क्यौं बैठी हौ ? सौंह कारन सों सामने देखिबो कार्ज नहीं भयो, विसेषोक्ति, "विसेषोक्ति जो हेतु सों कारज उपजै नांहि" छेकानुप्रास ॥ ४३७ ॥

एरी यह तेरी दई क्योंहूँ प्रकृति न जाय ।
नेहभरे ही राखिए तूँ रूखिये लखाय ॥ ४६८ ॥

एरी इति । सखीवचन—हे दई हे दैव, एरी सखी तेरी यह प्रकृति सुभाव कोई तरह सों नहीं जात है । नायक के नेहभरे हिय में तोहि राखिये है तौभी तू रूखी रूक्ष लखाति है। जो नेह अर्थात् तेल में रहै सो चीकनो होय, हृदय को गुन नहीं लगै है, यातें अतद्गुन, औ विरोधाभास भी है। "सु अतद्गुन जहँ संग को कछु गुन लागत नांहि" विशेषोक्ति अलङ्कार भी भासै है ॥४३८॥

विधि विधि कै निकरै टरै नहीं परेहूँ पान ।
चितै कितै तैं लै धर्‌यौ इतै इतो तन मान ॥४३९॥

विधि विधि कै इति—मानिनी सों सखीवाक्य—विधि विधि की वचन को ऊपर सों ले आइये, निकरै या पद के सामर्थ्य तैं तरह तरह की बात कहति है। पान को अर्थ पावन परैं भी मान टरै नहीं है, चितै हमारी ओर, देखि कितै तैं कहां तें लेकर धर्‌यौ राख्यौ इतै एतनो बड़ो मान एतने छोटे तन में हाथ सों दिखाय कहति है। किम्बा विधि ब्रह्मा तिनकी विधि करि क्रियाकरि निकरै तो निकरै आदमी को साध्य नहीं, किम्बा विधि ब्रह्मा तिनको जो विधि बनावनिहार परमेश्वर, कै को अर्थ करि परमेश्वर निकारै तो निकरै और अर्थ वही, किम्बा इतै यहां तें सरीर तें चितै चित को कितै लै धर्‌यौ कहां लै करि राख्यौ तेरो मन ठिकाने नहीं; पूर्वीभाषा में इस्को अर्थ यह, यह तौत है तूफान है छल है। न मान मान नहीं है, मानिनी तो जो कोई कहै है सो सुनै है। याही तें परमेश्वर सों किम्बा विधाता की क्रिया करि निकरै, पांव परिबो मान छोड़ाइबे को कारन है। मान छुटिबो कार्ज नहीं भयो, विशेषोक्ति, "विशेषोक्ति जो हेतु सों कारज उपजै नांहि" सरीर आधार तें मान आध्येय बड़ा बातें अधिक अलङ्कार—

"अधिकाई आधार तें जब अधेय की होय" ॥ ४३८ ॥

तो-रस-राच्यौ आन वस कहै कुटिलमति कूर ।
जीभ निवौरी क्यौं लगै बौरी चाखि अँगूर ॥ ४४० ॥

तो रस इति। सखीवचन मानिनी सों—तेरे रस सों राग सों की राच्यौ है रंग्यो है तोसों जो अनुरक्त है, सो आन नायिकावस

यह बात तोसों जिनने कही है सो कुटिल दुखदाई है, कुटिल भाषा में दुखदाई को भी कहिये है। मतिक्रूर है जिनकी बुद्धि में दया नहीं है, ऐसे प्यार में क्यों बिगार कराइये. हे बौरी विक्षिप्त, अँगूर चाखि के निबौरी नीम के फल सों जीभि क्यों करि लगै? आसक्त होय, तू श्रेष्ट और निकृष्ट, एक मामान्य बात कहि विशेष बात सों पीछे पुष्ट कीजिये, अर्थान्तर्न्यास, "सामान्य तें विसेष जब तहँ अर्थान्तरन्यास" ॥ ४४० ॥

हा हा वदन उघारि दृग सुफल करैं सब कोय ।
रोज सरोजनि कै परै हँसी ससी की होय ॥४४१॥

हाहा इति। दिन में सखी को वचन मानिनी सों—हाहा खाति हौं अति निहोरो करति हौं यह अर्थ, तू वदन मुख को उघार, सब कोई सखीजन आपने दृग कों सफल करैं, लच्छना सों नैन को सुख लेंइ यह अर्थ, अबही फूले सरोजनि को रोज रोग होयगो तेरो मुख कमल को चन्द्रमा को शत्रुता है सत्रु चोर मित्र सोदर इत्यादि पद अर्थी उपमा के द्योतक हैं, सत्रु की सोभा देखि के सत्रु के मन में दुख होय तासों रोज जानिये, परै कहिये आगे राति विषे ससि चन्द्र ताकी हँसी होय मुख के आगे चन्द्रमा कछु नहीं, एकही ठौर लगाये दिन मे चन्द्रमा प्रभाहीन राति में कमल सोभाहीन, यातें बने नहीं, मुख उपमेय तासों कमल चन्द्रमा को अनादर. प्रतीप 'अनआदर उपमेय तें जब पावै उपमान' कोई सरोज सों सरोजमुखी लेत हैं। ससि सों ससिमुखी लेत है सो अर्थ साफ नहीं, काव्यलिङ्ग भी सम्भव है, वदन उघारिबो इष्ट ताको समर्थन जुक्ति सों करति है ॥ ४४१ ॥

गहिली गरव न कीजिऐ समैं सुहागहिं पाय ।
जिय की जीवनि जेठ ज्यौं माह न छांह सुहाय ॥४४२॥

गहिली इति । सखीवचन मानिनी सों—हे गहिली बावरी, गरब नहीं कीजिये, समय सोहागहिँ पाय, जो ऐसो अर्थ कीजिये समय जोबन तामे सौभाग्य को पाय कै तो ध्वनि में निकरै, साँझ रस कोई दिन में बूढ़ा हायगी तब तोहि कौन पूछैगो, समय को अर्थ संकेत मिलिबे को स्थान तहां तू बैठी है । नायक तेरो बस है, यह सौभाग्य, ताको पाय कै, नायिका को गर्व है तो अच्छा मैं या समय में नहीं, जीव की जीवन जेठ में है तौभी माह में छाया नहीं सुहाति है, कोई समै में गर्व अच्छा कोई समै में नहीं किम्वा हे जीव की, जेठ में तो जीवन है तौभी माह में छाया नहीं सुहाति है, रसिकप्रिया में, 'जीजै री जीव की नाक दै चूनो' हे जीव की ऐसे जानिये, किम्बा नायक ने तोहि गहिली पकरि ली, अब गरब न कीजिये, हम बड़े कुल की हमैं तुम जोरावरी सों पकरि लेहुगे इत्यादि गर्ववाक्य ताको समय सांत करो, गर्व मति करो, नायक सों जो सुख सौभाग्य ताको पाय कै, हे जीव की आगे वही अर्थ, दृष्टान्त अलङ्कार—किम्बा कलहान्तरिता के पति सहित विहार करति जो है और नायिका, तासों कलहान्तरिता सो सखी को बचन, हे गहिली गरव न कीजिये, कोई एक समय में सौभाग्य को पाय कै वा नायिका सों विरह है सो जेठ है तामे तू जीव की जीवन भई है वासों प्यार होयगो तो माह तहां तू छांह की तरह नहीं सोहायगी ॥ ४४२ ॥

कहा लेहुगे खेल मैं तजौ अटपटी बात ।
नैंकु हँसौंहीं हैं भई भौंहैं सौंहे खात ॥४४३॥

मान में सखीवचन नायक सों—कहा लेहुगे इति। हे नायक, और नायिका के संग में तुम खेलत हो, ए खेल में कहा लेहुगे? कहा सिद्धि होयगी? वह तो मान करि बैठी है तुम और के संग में खेलत हो यह अटपटी बात है। अरुचि करावनवाली क्रिया सो यहां अटपटी, पूरव में अटपटाइ कहत हैं। ताको तुम तजो, सोहैं खात, हमारे सपथ के किये वाकी भौंहैं थोरी सी हँसौंही भई है, हँसने में जैसो होति है, सौहें खानो हेतु हँसोही हेतुमान, हेतु अलङ्कार—

"हेतु अलंकृति होय जब कारन कारज संग" ॥ ४४३ ॥

सकुचि न रहिए स्याम सुनि ए सतरौंहें बैन ।
देत रचौंहें चित कहे नेह-नचौंहें नैन ॥४४४॥

सकुचि न इति। नायक सों सखी—हे स्याम नायिका के ये सतरौहैं क्रोधसहित वचन सुनि के संकोच करि नहीं रहिये, नेह सों नचौहैं नाचत से चञ्चल जे हैं नैन सो चित को रचौहैं, तुम विषे अनुरक्त करि देत हैं, रचौहैं चित्त को दृढ़ कियो काव्यलिङ्ग ॥ ४४४ ॥

चलो चलैं छुटि जाइगो हठ रावरे सँकोच ।
खरे चढ़ाये हे तबै आए लोचन लोच ॥४४५॥

चलो इति। नायक सों सखीवचन—फेरि नायकवचन, सखी कहै है तुम चलो, नायकवचन चलैं छुटि जायगो हठ? फेरि सखी,

रावरे सँकोच तुमारे संकोच सों। नायकवचन तवै वा समै में तो नैन खरे अति चढ़ाये थे। सखीवचन, अंव लोचन में लोच चाह आई। हठि छूटि जायगो ताको दृढ़ कियो, काव्यलिङ्ग ॥ ४४५ ॥

अनरसहूं रस पाइए रसिक रसीली पास ।
जैसें सांठे की कठिन गांठैं खरी मिठास ॥४४६॥

अनरस इति। नायक सों सखी—हे रसिक अनरस हूं, मान विषे वह अनरस किए है तुम सों प्यार नहीं है तौभी वह रसीली रसभरी जो नायिका है ताके पास रस सुख पाईये है, मान की सोभा देखि कैं मन प्रसन्न होत है, जैसें सांठ ऊख ताकी गांठ कठिन कठोर तौ खरी है, अति है, किंवा, खरी सांठ है, तौभी मिठास है वामैं मिठाई है, खरी मिठास ऐसो अर्थ नहीं लगाइए, भरी मिठास यों भी कोई पढ़ै है, दृष्टांत अलंकार—

पद समूह जहँ जुग धरम जिम बिंबित प्रतिबिंब ।
सुकवि कहत दृष्टांत तहँ जों मनि दरपनबिंब ॥ ४४६ ॥

क्यौंहू सह वात न लगै थाके भेद उपाय ।
हठ दृढ़ गढ़ गढ़वै सुचलि लीजे सुरँग लगाय ॥४४७॥

क्यौंहू इति। दूती की उक्ति नायक सों—क्यौंहू कोई तरह किंवा कोई तरह सह संग है सहनायक वात नहीं लागति है, किंवा कोई तरह सह वात में हमारे वातनि में नहीं लगति है, दूसरो अर्थ कोट पछ सह वात सीढ़ी नहीं लगै, रसिकप्रिया में मांन छोड़ाइवे में साम दाम भेद लिख्यौ ताको उपाय थाके, कोट पछ गढ़वै कों फोरि लेनों, हठ सोई है दृढ़ गढ़ तहां गढ़वै नायिका है ताकों सुरंग आछो जो है राग प्यार तासों लगाय लीजिए. कोट में सुरंग लगावत हैं, रसिक-

लिया 'सामदान अरु भेद पुनि प्रणति उपेक्षा मानि' इह गढ़ रूपक सुरंग में श्लेष—

"एक शब्द के अर्थ जहँ भासत आय अनेक।
सब्द श्लेष सो कहत है जाके बुद्धि विवेक" ॥ ४४७ ॥

वाही दिन तैं ना मिट्यौ मान कलह को मूल।
भलैं पधारे पाहुने ह्वै गुड़हर को फूल ॥४४८॥

वाही दिन इति। गुड़हर संस्कृत में ओढ़पुष्प को कहत हैं, पूरब में ड़ल कहत हैं, जहां रहै तहां कलह करावै, जो ऐसो अर्थ करै तौ रसाभास होय पाहुनासों नायिका ने रति करी, तासौं कलह कौ मूल मान भयौ, तौ रसाभास है, "अनुचित वर्णन होत जहँ रसाभास तहँ दोष" सखी कौ वचन नायक सौं—वाही दिन तैं नांही मिट्यौ है, मान सो कलह कौ मूल, भलै पधारे भलें आए तुम काहू का पांहुन होय कैं गुड़हर के फूल भए, नायक न्यौता में गयौ थौ तहां स्नेह भयौ सो नायिका जानि गई, किंवा, पाहुनां सों सखीवचन, पाहुनां आए तानें नायक के विवाह की बात कही मान सो है कलह कौ मूल, तुम गुड़हर के फूल भए, रूपक अलंकार ॥ ४४८ ॥

आए आपु भली करी मेटन मान मरोर।
दूरि करौ यह देखिहै छला छिगुनिआ छोर ॥४४९

आए इति। सखी वचन नायक सौं—आए तुम सौ भली करी मेटिवे कौं मान कौ मरोर गर्व हमं सौं औरि सुंदरी कौनि है जास नायक जात है, दूरि करौ उतारौ, यह छला अंगूठी छिगुनी कनिष्ठा आंगुरी ताके छोर अग्र भाग में है सो देखैगी, जौ तुमारी

अंगूठी होती तो छोर में क्यों रहती, अंगुरी को औ अंगूठी को मेल नहीं यातें, विषमालंकार—

"विषय अलंकृति तीन विधि अनमिलते को संग ॥ ४४६ ॥

हम हारी कै कै हहा पायनि पार्‍यौ प्यौर ।
लेहु कहा अजहूँ किये तेह तरेरे त्यौर ॥ ४५० ॥

अथ मनाइवो वर्नन—हम हारी इति। मानिनी सों सखी-वचन—हम हाहा करिकैं हारी, अरु प्यौ नायक कौं पावनि पार्‍यौ लेहुगी कहा क्या, अजहूं अब भी तेह क्रोध सौं तौर तरह तरेरे तरेरि राखी है, डरपावनी करि राखी है, मान छोड़ाइबे को हेतु हाहा करिवो है, मान छूटिवौ रूप कार्य्य नहीं भयौ, विशेषोक्ति

"विशेषोक्ति जो हेतु सौं कारज उपजै नांहि" ॥ ४५० ॥

लखि गुरुजन बिच कमल सों सीस छुवायो स्याम ।
हरि सनमुख करि आरसी हिये लगाई बाम ॥४५१॥

लखि गुरु इति। मान को अवशेष है, तहां सखी सौं सखी वचन—नायिका कौं गुरुजन सासु जेठानी के वीच में स्याम नायक ने लखि कैं कमल सौं सीस छुवायौ, तब नायिका ने हरि कै साम्हने आरसी करिकैं नायक को प्रतिबिम्ब पर्‍यो तब बाम ने हृदय सौं लगाई, यह अक्षरार्थ। रसिक प्रिया में बोधक हाव कहत है, चेष्टा वैशिष्ट्य सों ध्वनि, वक्ता को वैशिष्ट्य तें बोद्धव्यवाच्य अन्य संनिधि इत्यादि वैशिष्ट्य तें ध्वनि होति है, साध्यवसाना लक्षना सों, कमल चरन की प्रतीति करावत है, कमल सों सीस छुवायो प्रनाम कियो, गुरुमान को अवशेष है, सो पाव परे बिना

नहीं छूटै, तब हरि कौ साम्हनै आरसी करि नायिका नै हृदय सौं लगाई तुम हमारे हृदय में बसत हौ, किंवा सूर्य्य के साम्हने आरसी करि हृदय सौं लगाई, सूर्य्य को नाम भी हरि है, नायक के साम्हने आरसी करै तौ चतुरि स्त्री जानी जाय, आरसी सूर्य्य कौं दिखाय कैं देखै है यह गूढ़ विंग्य है। किंवा, हरि सनमुख आरसी कीनी, तुम आरसी से हौ, आरसी में दीय रूप होत है, आगे प्रकास पीछैं अप्रकास, ऐसे तुम हौ, हमारे आगें औरि परोच्छ मैं और, तोभी तुमैं हृदय सौं लगायौ। किंवा, सूर्य्य के सनमुख आरसी करि हिए लगाई, कुच कौं पहार करि बर्नत है, "कुच गिरि चढ़ि अति थकित ह्वै" सूर्ज जब अस्ताचल कौं जायगोतब मिलौंगी। किंवा, नायिका नै औरि स्त्री सौं नायक की प्रीति सुनी है, तासौं मान कियो सो बात कौं झुठावत हैं, कमल सौं सीस छुवायो, मुख की उपमा है चन्द्रमा की, अर्थ यह कि चन्द्रमा सों कमलिनी सों जैसें प्रीति नहीं, चन्द्रमा की प्रीति एक कुमुदनी सों है, तैसें हमारी प्रीति औरि नायिका सों नहीं एक तुमही सों है। किंवा, कमल सौं सीस छुवायौ सीस में नेत्र भी है नैत्र सौं छुवायौ तो कमल सों सीस छूयो गयो, कमल नाम जल को है, नेत्रनि कौं मीन की उपमा है, जैसें जल बिना मीन व्याकुल है, ऐसें अब ताईं हमारे नैत्र तुमैं देखें बिना व्याकुल थे, अब तुमैं देख्यो मानो मीन कौं जल मिल्यौ। किंवा, सीस कौं फेरि पढ़ै ससी होत है, ससि सौं कमल सों स्नेह नहीं, तैसें हमारे औरि नायिका सौं स्नेह नहीं, तब हरि को सन कहिए उत्तम को मुख सो आरसी में प्रतिबिम्बत करि आरसी हिए लगाई।

किंवा कमल सों सीस छुवायो सीस अंग है हमारे कमल को अंग तरह है कमल जल में रहत है, जल सों लिप्त नहीं होत है तैसें, हम खौनि में रहते हैं खीन सों लिप्त नहीं होत हैं, नायिका ने आरसी दिखाई आरसी को नाम मुकुर है, तुम अपराध करत हौ मुकर जात हौ नटि जात हौ, हम नहीं कियौ हृदय लगायो अङ्गीकार कियो, ऐसें औरि भी जानिए। सूक्ष्मालङ्कार—

"सूक्ष्म पर आसे लखे ताहि बतावे भाव" ॥ ४५१ ॥

मन न मनावन को करै देत रुठाय रुठाय।
कौतुक लागे पिय प्रिया खिझहूँ रिझवति जाय॥४५२॥

मन न इति। सखी सों सखी—नायक को मन मनाइवे को नहीं करै प्यारी कों रुठाय रुठाय देत है, अति सुन्दरी है, प्रिय कौतुक सों लागे है, प्रिया खीझति तोभी ऐसी चेष्टा करति है. रिझावति जाति है, खीझि तें रिझावनो विरुद्ध तें काजं, विभावना—"काहू कारन ते जवै कारज होय विरुद्ध" ॥ ४५२ ॥

सकत न तुअ ताते वचन मो रस को रस खोय।
खिन खिन औंटे छीर लों खरो सवादिल होय॥४५३॥

सकत इति। नायकवचन नायिका सों—तुमारे जे ताते वचन हैं लक्षना सों उत्कट वचन जानिये, सो हमारो जो तुम विषें रस अनुराग ताको जो रस सवाद ताकों खोय गँवाय नहीं सकत है, छन छन में औटे दूध को तरह खरो अति सवादिल स्वादु विशिष्ट होत है, रस उपमेय, छीर उपमान, दूसरो रस धर्म लों वाचक। पूर्णोपमा॥ ४५३ ॥

खरे अदब इठलाहठी उर उपजावति त्रास ।
दुसह सङ्क विसकी करै जैसे सौंठि मिठास ॥४५४॥

खरे इति। नायक की उक्ति खण्डिता धीरा सों—खरे अति अदब सों। किंवा नायक खरे खड़े हैं तूं अदब सों इठलाहटि में अदब, सौंठि में मिठास, दृष्टान्त अलङ्कार—

'पद समूह जहं दुग धरम जिमि बिम्बित प्रतिबिम्ब।
सुकवि कहत दृष्टान्त जहं ज्यों मनि दरपन बिम्ब'॥

अदब त्रास उपजावे। विभावना—काहू कारन ते जबै कारज होय विरुद्ध॥४५६॥

राति द्यौस हौंसे रहति मान न ठिकु ठहराय ।
जेतो औगुन ढूँढ़िये गुनै हाथ परि जाय ॥ ४५५ ॥

अथ मान छुटिबो—राति इति। सम्भोग से आरी मान जो बिना मनाये छूटै, नायिकावचन सखी सों, राति दिन हौंस मिटिबे की चाह रहत है। मान ठीक निश्चय नहीं ठहरात है, नायक को जितनों औगुन ढूंढ़िये है। गुनही नायक को हाथ में लक्षना सों चित में परि जात है आवत है, धीरोदात्त नायक है। सुजस रु छमा मरोर विनय गरब और धीरोदात लखै बहुगुन धन धारी है। आवत की रासि में दस वीस काङ्कर रहै तो हाथ नहीं आवै, औगुन खोजिबो अभीष्ट, गुन हाथ आवै अनभीष्ट, विषाद अलङ्कार—

'सो विषाद चित चाह तें उलटो है कछु आय'॥६११॥

भितर भौंह रूखे वचन करत कठिन मन नीठि ।
कहा करौं ह्वै जात हरि हेरि हँसौंही डीठि ॥ ४५६ ॥

सतर इति। सखी सों नायिकावचन—सतर तरेरी भौंह कोप सों चढ़ाई, ओप रुख वचन में मन को नीठि कोई तरह कठोर करति हौं, मैं कहा करौं हरि को हेरि के, डीठि हँसोंही होय जाय है। ईर्षा की सान्ति हर्षभाव को उदय सर्वत्र मान छूटिबे में जानिये, सतर भौंह आदि हँसौंही डीठि के बाधक हैं, तौभी होत है, विभावना अलङ्कार—

"प्रतिबन्धक के होतहू कारज पूरण मानि"। ४५६॥

तो ही को छुटि मान गो देखतही ब्रजराज।
रही घरिक लौं मानसी मान करे की लाज॥४५७॥

तो ही को इति। सखी सों सखीवचन नायिका सों—तेरे ही को हृदय को मान छूटि गयो ब्रजराज के देखतही, ऊपर तो लाज की क्रिया नहीं, घरी एक ताईं मानसी मनमें जो उपजै सो मानसी मान करिबे की लाज मानसी रही मन में रही नायिका की प्रीति नायक को अति सौन्दर्य्यध्वनि, कृष्ण को दरसन कारन मान छुटिबो कार्ज सो संगही भयो पहिले देखे मनावै तब मान छूटै, चपलातिशयोक्ति—

"चपलातुक्ति जु हेतु के होत नामही काम"॥४५७।

दहैं निगोड़े नैन ए गहैं न चेत अचेत।
हौं कसिकै रिस को करौं ए निसिखे हँसि देत॥४५८॥

दहैं इति। नायिकावचन नेत्र सों—निगोड़ा गाली विषे रूढ़ है ए निगोड़े नैन हमें दहत हैं दुख देत हैं। अचेत है चेत सावधानी नहीं गहै, हमको कहा कर्त्तव्य है, किम्वा—चेतही गहै

नही अचेतही गहै नहीं, मै कसि कै खैंचि कै रिस को करति हौं ए निसिखै, जाको सीख सिछा नही लगी सो निसिष, क्रोध नहीं सीखैं हँसि देत हैं। निगोडा वारत हैं लोकोक्ति, रिस करिवो हँसी को प्रतिवन्धक है तौभी हँसो कार्ज होत है, विभावना—

"प्रतिवन्धक के होतहूं कारज पूरन मानि" ॥ ४५८ ॥

तुहूँ कहै हौं आपुहूँ समुझति सबै सयान।
लखि मोहन जौं मन रहै तो मैं राखौं मान॥४५९॥

तुहूं कहै इति। नायिकावचन सखी सों—तू भी कहति है और भी कहति हैं, हूं मैं आपु भी सब सयानी समुझति हौं। मोहन को देखि कै जो मन रहि सकै तो मैं मान को राखै, मन को कार्ज मान है, हौं आपु दोय पद सों यह अर्थ कोई के सिखाये बिन जानति हौं, सयान समुझिवो वो सखी को उपदेस कारन, तासों मान रहनो कार्ज नही भयो, विशेषोक्ति—"विशेषोक्ति जो हेतु सों कारज उपजै नाहि" जो तो पद सों, सम्भावनालङ्कार॥ ४५९॥

मोहि लजावत निलज ए हुलसि मिलत सब गात।
भानु उदै की ओस लौं मान न जान्यो जात॥४६०॥

मोहि इति। नायिका की उक्ति सखी सों—मोहि हमारे निलज गात अङ्ग लजावत हैं, नायक कौं देखिकैं हुलसि कैं मिलत हैं, भानु सूर्ज को उदै समै विषैं ओस की तरह मान कौं जानो नहीं जान्यो परैहै, ओस उपमान उपमेय लों वाचक जानो धर्म। पूर्णोपमा॥ ४६०॥

खिंचे मान अपराध तें चलिगे बढ़े अचैन।
जुरत दीठि तजि रिसि खिसी हँसे दुहुन के नैन॥४६१॥

खिचे इति। सखी सों सखी—नायिका मान सो खींचो है मान ने रोकि राखी है मान नहीं जान देयो, नायक अपराध सों खींच्यौ थो तौभी चलि के गये मिलिवे को, जब अचैन बढ़ो देखे विना दुख बढ़ो, डीठि के मिलतही दुहुन के नैन हँसे, नायिका के नैन रिस छाड़ि के नायक के नैन खीसी सरमिन्दगी लिये कछु रोसा ताको तजि के, सखी दूती पठाइवे को उपाय नहीं कियो मिलन भयो, प्रहर्षन—

"तोनि प्रहर्षन जतन बिन वाञ्छित फल जो होय"॥४६१॥

नभ लाली चाली निसा चटकाली धुनि कीन।
रतिपाली आली अनत आये बनमाली न॥४६२॥

विप्रलब्धा वर्नन—नभ लाली इति। विप्रलब्धावचन सखी सों। नभ आकास में लाली भई, निसा राति चली बीती यह अर्थ। चटक, या देश में चिड़ा कहत हैं, पूरब में गवरा कहत हैं, अलि भौंरा ताने धुनि शब्द किए, किंवा चटक की आली पंगति ने धुनि कीनी। हे आली नायक ने अनत अन्यत्र रति प्रीति पाली प्रीति को पालन कियौ, या कारन तें बनमाली आये नहीं, प्रात भयो नायक नहीं आयो यातें विप्रलब्धा, संकेत में बैठी सोच करे है यातें उत्कण्ठिता भी कहत हैं—

"जासों करे सहेट पिय ताके ढिग नहि जाय।
ताहि विप्रलब्धा कहैं सो चित में अकुलाय॥१॥
प्रीतम कौने कारने आए नहि संकेत।
चिन्ता जो मन में करे उत्का सो यह हेत"॥२॥

कोई कहत है रूठि चलैं तहां विप्रलब्धा, इहां उत्का है, कोमलावृत्ति छेपकानुप्रास की संसृष्टि, अन्यत्र रतिपाली याते नहीं आयो, अनुमानालंकार ॥ ४६२ ॥

दच्छिन पिय के वाम बसि बिसराई तिय आन ।
एकै वासर के विरह लागे वरष विहान ॥ ४६३ ॥

अथ धृष्ट नायक वर्नन—दच्छिन इति । नायिका के पक्ष की सखी नायक के पक्ष को सखी सौं कहति है—पहिलैं तो नायक दच्छिन थो सबसों समान प्रीति करै थो, अब वाम दुष्ट स्त्री के बस होय कें औरि तिय नायिका कौं बिसराई, एकही बासर दिन के बिरह सों लागे बरष बीतिबे उत्कण्ठा सों । किंवा दच्छिन प्रवीन बाम स्त्री के बस होय कें पिय ने आन तिय कौं बिसराई । किंवा, नायिका की उक्ति कोई स्त्री सों । दच्छिन प्रवीन जो है पिय नायक सो बाम के बस होय कें है तिय हमसों आन कहिए सौंह करी थी तुमारो त्याग कबही नहीं करोंगो ताकों बिसराई, उत्तरार्द्ध को वही अर्थ । नायक सो अनुकूल कहै दूसरी तिय जो चितहू न चितावै । 'दच्छिन सो सम प्रीति गहै निज प्यारिन सों सबकै मन भावै' । दच्छिन सो बाम के बस होय, विरोधाभास—

'भासै जहां विरोध सों वहै विरोधाभास' ॥ ४६३ ॥

आपु दियो मन फेरि लै पलटै दीनी पीठ ।
कौन चाल यह रावरी लाल लुकावत दीठ ॥ ४६४ ॥

आपु दियो इति । नायिका की उक्ति नायक सौं—आपु तुम मन हमकौं दियो थो सो फेरि लियकैं, ताको पलटो बदला पीठि

दीनी हमारी ओर नहीं देखत हो। हे लाल यह तुमारी कौन चाल तरह है दृष्टि कों कमावत हो। परिवृत्ति अलङ्कार—

"अहं देकी कम लीजिए बहु सो परिवृति जानि,॥ ४६॥"

मोहि दियो मेरो भयो रहत जु जिय मिलि साथ।
सो मन बाँधि न सौंपिये पिय सौतिन के हाथ॥४६५॥

मोहि इति। नायिका की उक्ति नायक सों—मोहि दियो मेरे भयो हमारे जीव के साथ मिलिकें रहत है, ऐसो जो मन है ताकों हे पिय बाँधि कें सौतिनि के हाथ नहीं सौंपिये, बाँधि कहै जो रावरी सौं देत हौं। किंवा हे पिय सौं सयकरा तिनिकी लुगाइनि के हाथ नहीं सौंपिये ताकौं दृढ़ करति है, मोहि दियौ मेरो भयो जीव के साथ रहत है एतना सौं। काव्यलिंगअलङ्कार॥

मार्‍यौ मनहारिन भई गार्‍यौ खरी मिठाहि।
वाको अति अनखाहटो मुसक्याहटि बिन नाह॥४६६॥

मार्‍यौ इति। धृष्ट नायक की उक्ति नायिका की सखी सों— वा नायिका ने लीलाकमल सों मार्‍यौ हमें सापराध मानि कैं, तासौं हमारे मनमें हारि पराजय किंवा हानि नहीं भई, किंवा "गुरु लघु लघु गुरु होत है निज इच्छा अनुसार"। मान को मन है, हमारो मान मार्‍यौ अनादर कियौ, तासों हमारी हारि हानि बिगार नहीं भयो, किंवा वा नायिका ने आपनो मन मार्‍यौ है, हमसों मन खैंचि बैठी है, तासों हमारी हारि बिगार नहीं भयो है कहा, बहुत बिगार भयो है, क्यों जाकी गार्‍यौं गारी भी खरी अति मिठास है, वाको अनखाहट अनसाइवो रिस भरी बोलनि

सो मुसक्यानि बिना नहीं रिसाति है तौभी मुसक्याय कैं मास्यो मनुहारिन भरी ऐसो भी कोई पढ़त है, मनुहारि को अर्थ आदर जानिए गारी सों मन विषें हारि नहीं भई, गारी हानि को कारन है तासों हानि नहीं भई। विशेषोक्ति—

"विशेषोक्ति जहं हेतु सो कारज उपजत नाहि,, ॥ ४६६ ॥

प्रिय सौतिनि देखत दई अपने हिय तें लाल ।
फिरति डहडही सबनि में वही मरगजी माल॥४६७॥

सौति वर्नन—प्रिय दूति। सखी सों सखीवचन—लाल नै प्रिया जो है नायिका ताकौं सौतिनि के देखत अपने हृदय तें माला दीनी, वाही मरगजी मैली माला सों, सब सौतिनि में डहडही सानन्द फिरति है, मैली माला तें डहडही फिरै। बिभावना—"काहू कारन तें जबै कारज होय विरुद्ध" ॥ ४६७ ॥

बालम बारैं सौति के सुनि परनारि बिहार ।
भौ रस अनरस रिस रली रीझ खीझ इकबार॥४६८॥

बालम दूति। सखी सों सखीवचन—बालम नायक ताकौं सौति के बारे में सौति के सम्भोग के दिन में, जादिन सौति की पारी थी, परि नारि सों बिहार सुनिकैं, पहिलें तो नायिका कों रस राग भयो सौति नै दुख पायो तासौं, ताकौं दाबि कैं अनरस अरुचि उपजि आई, फेरि बिचारत होय चारि घरी पीछें रिस भी होय आयी, हमारे दूहां को न आये यातें, फेरि रली रमन कौतुक होय आयो. वा नायिका की कहा दसा है सखी तूं नायकै देखि आव, हमारे दूहां सों नायक औरि पास नहीं जाय वाकी दूहां सों

गयो, नायक रूप गुन में समुझत है, यातें रीझि भई, परस्त्री पास जाने की बानि लागी है तौ हमारे इहां सों भी जायगो यातें खीझि भई, एक वार को अर्थ एक दिन में, यह भाव सावल्य कहावत है, एक भाव कों दबाय कैं एक भाव उपजै ।

सभाप्रकास—"दाबत भावहि भाव जो उपजत अंगनि आय ।
ताहि कहत सावल्य सो जो कवि में सरसाय" ॥

किंवा वाको जो अनरस रस को अभाव सो याकों रस भयो, वाको जो रिस सो याकों रली रमन भयो वाको जो खीझ सो याकों रीझ भई, एक दिन में किंवा, परिनारिविहार सुनि कैं एक वार खीझि कैं हमारे इहां क्यों न आये यातें पीछैं रीझि। नायक रूप गुन में समुझत है, फेरि अनरस आनि नायिका सों जो भयो रस तासों नायिका कों औरस भयानक रस भयो डर भो, ऐसी बोलनि है, हमारे इहां सों भी औरि पास कहूं जाहिंगे यातें रिस रली रिसमें रली रिसकों प्राप्त भई, रलि मिलि ऐसी बोलनि है, किंवा सौति के बारे में परिनारि विहार कियो है, सखी नायिका सों कहति है, यह रस की बात है, सो तोहि अनरस भयो कहा? तूं अनरस मति करै, तेरे इहां सों तो कवहूं जाहिंगे नहीं, जो तेरी सौति रिसमें रली है तिनकी जो खीझ है तासों तूं एक वार रीझ वारे वालम ने बालक नायक भी ऐसें अर्थ किए नीरस होय तातें नहीं लगायो, एक पद जहां अनेक सों लागे सो दीपक अनरस सों रस सो इत्यादि सों भी पद लागत है यातें दीपक । इहां हेतु अलंकार । परनारिविहार हेतु, रस अनरस हेतुमान ।

"हेतु अलंकृत दोय अब कारन कारज संग" ॥ ४६८ ॥

सुघरि-सौतिवस पिय सुनति दुलहिन दुगुन हुलास ।
लखी सखी तन दीठिकर सगरव सलज सहास ४६९

सुघरि इति। सखी सों सखी—सुघरि चतुरि सौति के बसि पिय कों सुनत कै दुलहिनि कौं दुगुनो हुलास आनन्द, मो मैं रूप भी है, चतुराई भी है यातैं, सखी की तन ओर डीठि करि देखी सगरव, हमारे आगें वह कहा है, सलज नई आई है याते, सहास हाँसीसहित मन को मोद सूचित कियो, यह वात सुनि हम वहुत राजी भई. सौति के वस कारन तासौं हुलास भयौ ।
विभावना—"काहू कारन तें जवैं कारज होय विरुद्ध" ॥ ४६९ ॥

हठि हित करि प्रीतम लियौ कियो जु सौति-सिंगार ।
अपने कर मोतिनि गुह्यौ भयौ हरा हरहार ॥ ४७० ॥

हठिहि इति। सखी सों सखी—हठि कै हित करिकैं प्रीतम ने नायिका सों माला लीनी सो सौति कौं पहिराई. सौति को सिंगार कियौ जाकी माला लीनी ताकौ, आपने हाथ सों मोतिन सों गुह्यौ जो है हरा हार, सो सौति के गर में देखत कै भयानक लागत है, हर जो महादेव तिनको हार सर्प ताहि तुल्य भयौ, या अर्थ में नायक को दारिद्र भासै है । सौति को लेकैं दियौ, ऐसैं अर्थ । नायिका ने आपने घर में नायक को सिंगार कियो है हार पहिरायो है, तब नायक सौति के घर गयौ है ताकौ हार पहिरैं, प्रीतम सों हठि करि हित करि हार लियौ, ताकौ सौति ने आपनो सिंगार कियो जानि पहिले सिंगार कियो ताकौ हरहार भयो, हर के हार सो भयो, दुखदाई भयो। वाचक धर्मलुप्तालंकार ॥ ४७० ॥

विथुर्‌यौ जावक सौतिपग निरखि हँसी गहि गाँस ।
सलज हँसौंहीं लखि लियौ आधी हँसी उसास ४७१

विथुर्यौ इति । सखी सों सखी—सौति के पाउ में विथुर्यौ विखर्‌यौ अस्त व्यस्त जावक महावर ताकों देखि कैं, गाँस अभिप्राय लिकैं हँसी, यह फूहरि है, ऐसो जावक दियो है यह गाँस, वा नायिका कों सलज औ हँसती सी देखि लियौ । किंवा, नायक कों सलज, नायिका कौं हँसौंही देखि लियौ, यह नायक ने दियो है, किंवा नायक पाव पर्‌यौ है तासों, आधी हाँसी में उसास निखास लियौ, 'विथुर्यौ जावक हेतु' हँसी हेतुमान, हेतु अलंकार, आधी हँसी उसास सहित भई, इहां सहोक्ति—

"सो सहोक्ति जहँ साथही बरने रस सरसाय ॥ ४०१ ॥

बाढ़त तो उर उरज-भरु भरु तरुनई विकास ।
बोझनि सौतिन के हिये आवत रूँधि उसास ॥४७२

बाढ़त इति । नायिका सों सखीवचन—तेरे उर वक्षस्थल में उरज कुच ताको भरु कहिए भार सो बाढ़त है, तरुनाई जवानी ताको भरु आधिक्य, औ विकास प्रकास, किंवा तरुनाई को विकास भरु भारी बड़ो बाढ़त है, बोझनि सौं सौति के सौन्दर्य की दुख ताके भार सों सौतिन के हृदय सों रुकी सी दबी सी निखास आवति है, जाकौं भार परे ताकों रुकिकै उसास आवै, उरज कों भार औरि के उर, बोझ कों रुकी उसास कारन औरि ठौर, असंगति अलङ्कार—"तीनि असंगति काज अरु कारन न्यारे ठांव" ॥ ४०१ ॥

दीठि परोसिनि ईठ है कहै जु गहैं सयान ।
सबै सँदेसे कहि कह्यो मुसुक्याहटि में मान ॥४७३॥

परोसिनि वर्नन । दीठि दूति । सखी सों सखीवचन— नायक कों सुनावै है परोसिनि सों कहति है, दीठि परोसिनि ईठ के, नायक कों दीठि कहिए देखि कैं, परोसिनि कौ ईठ कहिए मित्र होयकैं परोसिनि सों कहति है, गहैं सयान, सयान सुज्ञान जो है नायक सो या वात कौं गहैं ग्रहन करैं, नायिका हमसों कहति है, परोसिनि कै मिसि करि, सबै संदेसा कहि कैं कह्यो, मुसुक्याहटि में मान, असमय की मुसुक्याहटि तामें मान कह्यो जतायौ जो पूछैं संदेसा कहा कह्यो, सबै यह संदेसो कहिकै, नायक सौं कहि हौं, वह नायिका जासों आसक्त भए हो, सो तुमारी सवय है वय कहिए उमिरि, सो तुमारो वाकी एक, ध्वनि में रूप गुन है नहीं, हम थोरी दिन की, तुमारे कुल नहीं जानति हैं यह संदेसो नायक नजीक सुनै है, किंवा कवहूं नायक या परोसिनि सों मुसुक्यायो थो सो देखि नायिका ने मान कियो, तब नायक ने वाहि परोसिनि कौं मनाइवे कों पठाई । नायिका कों मान किये दीठि देखि कैं हठ होय कै सयान चतुराई गहै कहै है, नायक के सव संदेसा कहिकै कह्यो, मुसुक्याहटि में मान, नायक हमसों मुसुक्यायो थो तामें तूं मान कियो, मुसुक्याहटि सों मान ऐसो चाहिए, तहां ऐसो भी बोलनि है, ख्याल सौं राजी भयौ ख्याल में राजी भयो, कहूं ढीठ परोसिनि यह भी पाठ है । नायिकावचन दूती सों । ढीठ जो है ना-

नायक कौं देखत कै तब काल नहीं परै, अब क्यौंकरि काल परिहै कौन कै अगोट रहिहैं नहीं रहिहैं काकु करिकैं । वक्रोक्ति अलङ्कार—"वक्रोक्ति स्वर श्लेष सों अर्थ फेर ज्यौं होय" । काव्यलिङ्ग भी सम्भवै है, प्रोष्यतपतिका नायिका ॥ ४७६ ॥

पूस मास सुनि सखिन सौं सांई चलत सवार ।
गहि कर वीन प्रवीन तिय राग्यौ राग मलार॥४७७॥

पूस मास इति । सखी सों सखीवचन—सीतकाल में नायक को बिछोह अति दुखदायक है, पूस महीना मैं सखीनि सों सुन्यौ स्वामी सवार प्रात चलत है, प्रवीन जो है नायिका सो बीना गहिकैं कर मैं, मल्लार राग राग्यौ गायौ, अकालवृष्टि यात्रा कौं निषिद्ध है, पूस कै मेह मे जानो नहीं होय सकै । किंवा मल्ल एक असुर दक्षिन मैं भयो हो, ताकौं शिव ने अवतार लैकं मार्यौ मल्लारि शिव को नाम है, भाषा मैं मल्लार कह्यौ, राग में मल्लार जो है शिव ताकौं गायौ है शिव काम सौं तुम रक्षा करो । गाइबे कै छल करि नायक को गमन निषेध्यौ । पर्यायोक्ति । प्रोष्यतपतिका क्रियाविदग्धा है ॥ ४७७ ॥

ललन चलन सुनि चुप रही बोली आप न ईठ ।
राख्यौ गहि गाढ़े गरै मनो गलगली दीठ ॥ ४७८ ॥

ललन इति । सखी सों सखीवचन—आपनो इष्ट नहीं बोली, चुप रही अचेत भई गलगली आँसू भरी जेहै दृष्टि ताने वाके गरें गर कौं गाढ़ौ गहि कैं राख्यौ है, मानो यातें नहीं बोली । किंवा, प्रान वाको जातो, सो दृष्टि ने प्रान कौं गाढ़ें गलो गहिकैं राख्यौ

मानो। मानो उत्प्रेक्षा, व्यंजक ताको अन्वय राख्यौ यह क्रिया सों है। अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ॥ ४७८ ॥

बिलखी डबकौंहैं चखनि तिय लखि गमन बराय ।
पिय गहवर आए गरें राखी गरें लगाय ॥ ४७९ ॥

बिलखी इति। सखी सों सखी—बिलखी डबकौंहैं चखनि आंसू परिवे चाहत हैं ऐसे चख नेत्र हैं, तिय ने नायक को गमन देखि बरायो। आंसू परिवे नहीं दिये, पिय कौं गहवर गल-गला गरें आयौ, तब नायिका कौं गरे सों लगाय कैं राखी, गरे गरे शब्द अर्थ दूनौ की आवृत्ति है। आवृत्तिदीपक, 'पद अरु अर्थ दुहुन की आवृत्ति तीजे लेख ॥ ४७९ ॥

चलत चलत लौं ले चले सब सुख संग लगाय ।
ग्रीषम बासर सिसिर निस पिय मो पास बसाय ॥

चलत इति। नायिका की उक्ति सखी सों—चलत चलत, सब जे सुख हैं जसे भूषन वस्त्र पहिरिबौ, सुगन्ध लगाइबौ, सुखसौं सोइबो इत्यादि, ताकौं आपने सग लगाय ले चले, लौं को अर्थ मानो, चलत चलत सो लौं को अन्वय नहीं, नायक आये फेरि सुख आवैगो, ग्रीषम के बासर जेठ असाढ़ के दिन, सिसिर माघ फागुन की राति पिय मेरे पास निकट बसाय कैं राखि कैं, यह अर्थ। नायक बिन दिन बड़ो होत है, राति बड़ी होति है, किंवा सिसिर की निसा विष ग्रीषम के दिन राखि कैं चले, राति मैं ताप होत है, किंवा ग्रीषम के दिन में सिसिर की निसा राखि चले, काम सौं धूजति हौं, ताप कंपा काम सौं बरनत है। भाषा

भूषन—"ताप कँप है ज्वर नहीं ना सखि मदन सताय"। किंवा
दिन मैं तपौं हौं राति मैं धूजति हौं. सब सुख संग लगाय कौं ले
चलि, लौं को अर्थ मानौ । अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ॥ ४८० ॥

अजौं न आये सहज रँग विरहदूबरे गात ।
अबहीं कहा चलाइये ललन चलन की बात ॥४८१॥

अजौं न दूति । एक वेर नायक परदेस सौं आयौ है, फेरि वि-
देस कौं जान चाहत है, तहां गमिष्यत्पतिका की सखी को वचन
नायक सौं, अजौं अबताईं भी सहज रंग सहज को स्वभाव को जो
रंग रूप थे ते नहीं आए, क्यौं विरह सौं दूबरे गात हैं, हे ललन
अवहीं तुरतें चलन की बात कहा क्यौं चलाइयत है? किंवा, उ-
त्कंठिता नायिका को वचन, सहज रंग जो नायक, भूषनादि
बिना स्वभावही को है रूप जाको सो अब भी नहीं आए, पलक
घरी पहर को भी विरह मानत है। किंवा, परकीया नायिका ब-
हुत दिन में संकेत मैं आई है यातैं, मेरे विरह सौं दूबरे नायिका
के गात है सखीनैं जांनी अब यह जायगो । सखीवचन अबहीं
कहा चलाइयत है चलन की बात यामैं लल न, लल कहिए सौ-
रस्य मजा सो नहीं, किंवा, नायिका नायक कौं कहति है, तुमारे
सहज के रंग नहीं आए, विरह सौं दूबरे गात हैं, नहीं चलिवे
को समर्थन करै है, यातैं काव्यलिंग ॥ ४८१ ॥

ललन-चलन सुनि पलनि मैं अँसुआँ झलके आय ।
भई लखाय न सखिनिहूँ झूठेहीं जँभुआय ॥४८२॥

ललन दूति । सखी सौं सखीवाक्य—ललन को चलन सुनि

कें पलक मैं अंसूआ आंसू झलकि दिखाई दीनी आयकें, सखिनहू सों लच्छित नहीं भई, झूठेही जँभुआय कें, जभाई लेकें, उवासी खायकें, 'भई न लच्छित सखिनहूं' ऐसो पाठ चाहिए। जँभाई सों आंसू छपायो, युक्ति अलंकार,—

"इहै युक्ति कीनें क्रिया मर्म छपायो जाय।
पोय चलत आसू चले पोंछति नैन जभाय" ॥ ४८२ ॥

चाहभरी अति रसभरी बिरहभरी सब बात ।
कोरि सँदेसे दुहुन के चले पौरि लौं जात ॥ ४८३ ॥

चाह भरी इति। सखी सों सखीवचन—चाह इत्यादि भरी बात है, जामें एसे सदेसे कोटिनि दुहुन के दंपति के जात है, पौरि दहलीजि ताई चले हैं भरी शब्द की आवृत्ति सों, आवृत्ति दीपक ॥ ४८३ ॥

मिलि चलि चलि मिलि मिलि चलत आँगन अथयो भान।
भयो मुहूरत भोर को पौरिहि प्रथम मिलान ॥४८४॥

मिलि चलि इति। सखी सों सखी—मिलि कें चले है, चलि कें मिले है, आगनही में भानु सूर्य अथयो अस्त भयो, अब भोर प्रात को मुहूरत दो घरी को महूरत, सुदिनो भयो, पौरि में दहलीजि में प्रथम मिलान प्रथम प्रस्थान, पहिलो डेरो यह अर्थ एक मिलि चलत को अर्थ बांहि जोरि कै चलत है, आवृत्ति दीपक ॥

दुसह बिरह दारुन दसा रह्यो न औरि उपाय ।
जात जात ज्यों राखिए पिय की बात सुनाय ॥४८५॥

दुसह इति। सखी सों सखीवचन—दुसह बिरह है दारुन

भयानक दसा है, औरि उपाय नहीं रह्यौ, जात जात कै ज्यौं प्रान
कौं राखिए, पिय कौ बात सुनाय, पिय कै आवनै की बात सु-
नाय कैं । किंवा, पिछवारें जाय नायक की तरह बोलि कै, बात
सुनाय सुनावौ, छल करि कार्य साध्यौ यातें, पर्य्यायोक्ति अलंकार।
छल करि कारज साधिए जों कछु चितहिं सुहात ॥ ४८५ ॥

प्रजर्‍यौ आगि वियोग की बह्यौ बिलोचन नीर ।
आठौं जाम हिए रहै उठ्यौ उसास समीर ॥ ४८६ ॥

प्रजर्‍यौ इति । सखी की उक्ति सखी सौं बिरह में । सखी
की उक्ति नायक सौं होय तौ, बिरहदसा–कथन, हियौ कैसौ है,
बियोग की आगि सौं प्रजर्‍यौ है, प्रज्वलित है, बह्यौ है, जामैं बि-
लोचन को नीर अश्रुपात बह्यौ है, ऐसो हियो तामैं आठौं पहर
निस्वास कौ समीर पौन उठ्यौ रहत है, वियोग कौ आगि सौं
बह्यौ । अत्युक्ति अलंकार । अद्भुत होय किंवा झूठी बात होत है ॥

पलनि प्रगट बरुनीनि बढ़ि नहिं कपोल ठहरात ।
अँसुआ परि छतिआनि पै छिनछिनाय छपि जात ॥

पलनि इति । पलक मैं प्रगट होय कैं बरुनीनि में बढ़ि कैं
कपोल पैं नहीं ठहरात है, आंसू छाती पर परिकैं बिरह सौं तपी
है तासौं छनछनाय कैं छपि जात है, सखी सौं सखी कहति है,
सखी नायक सौं बिरहनिवेदन करति है, छाती पैं छनछनाय छपै
झूठी बात है । अत्युक्ति अलंकार, अत्युक्ति जु अद्भुत झूठ कै बरनै
ताहि पहिचानि ॥ ४८७ ॥

करि राख्यो निरधार यह मैं लखि नारी ज्ञान ।
वही वेद औषध वहै वही जु रोगनिदान ॥४८८॥

करि राख्यो इति। विरहव्याकुल नायिका कौं देखि सखी सौं सखीवाक्य—नारी स्त्री ताकौं मैं ज्ञान सों लखि कैं, नारी नाड़ी ताकौं मैं ज्ञान सों लखि कैं देखि कैं, यह निरधार निश्चय करि राख्यौ, वही जु नायक सो रोग को निदान आदि कारन है, वाही के बिरह सौं रोग उपज्यौ है। नायक मिलै तौ रोग छूटै, यातें वही वैद्य है, वही नायक औषध है। "दोहा उलटै सोरठा कह जु सबै प्रवीन"। नायक हेतु रोग निदान आदि कार्य ताकी एकता करी। हेतु अलंकार—

"कारन कारज एक करि बरनै हैं है अङ्ग ॥ ४८८ ॥

मरिवे को साहस ककै वढ़े बिरह की पीर ।
दौरति है समुहै ससी सरसिज सुरभि समीर ॥४८९॥

मरिवे इति। सखी सों सखी—'बढ़ें बिरह की पीर', विरह की पीड़ा बाढ़ें, मरिवे कौं जोरावरी करि करि, ससि के साम्हने दौरति है, जाहि देखें दुख होत है, ताके साम्हने गए मृत्यु होयगी। सरसिज कमल ताको जो सुरभि सुगन्ध समीर पौन ताकें भी साम्हने दौरति। उद्दीपनविभाव है, ससि सों समीर सों सुख उपजत है, तासौं मृत्यु चाहति है। विचित्रालंकार—

"इच्छाफल विपरीत को करिये जतन विचित्र" ॥ ४८९ ॥

ध्यान आनि ढिग प्रानपति मुदित रहति दिन राति।
पल कम्पति पुलकति पलक पलक पसीजति जाति॥

ध्यान दूति । सखी सों सखीबचन—ध्यान में प्रानपति नायक ताकौं आपने ढिग नजीक आनि कैं, दिनराति राजी रहति है, एक पलक तौ काँपति है कंपा सात्विक है, एक पलक पुलकति है, एक पलक पसीजति है, पुलक स्वेद भी सात्विक है । ध्यान में मिलन सोहात है, नायक कौं स्मरण करति हैं । यातें स्मृति अलंकार ॥ ४९० ॥

सकै सताय न विरह तम निसदिन सरस सनेह ।
रहै वहै लागी दृगनि दीपसिखा सी देह ॥४९१॥

सकै दूति । नाइक को मानस विचार, किंवा, सखी सों कहति है—इमैं विरह सो है तम अंधकार सो सन्ताप दुख देइ नहीं सकै, रातिदिन में सरस है अधिक है स्नेह प्रीति तेल भी श्लेष में वह जो दीपसिखा सी नायिका को देह दृगनि सौं लागी रहै यद्यपि विरह सौं दुखी है तौभी साहस करि कहत है । इहां धृतसंचारी जानिए । किंवा, दीपसिखा सी देह दृगनि सौं लागी रहति है सदा वाही कौं देखत हौं, तौभी विरह रूप जो तम है, ताकौं सताय नहीं सकै, दूर करि नहीं सकै, औरि वही अर्थ । विरह सो तम, जहां दीप रहै तहां तम नहीं रहै, सनेह में श्लेष किंवा, सखीवचन नायक सों । विरह रूप तम तुमैं नहीं सन्ताप सकै है, सकै है यह अर्थ । जोभी दीपसिखा सी देह दृगनि लगी रहति है, देह उपमेय दीपसिखा उपमान, सरस सनेह धर्म, सी वाचक । पूर्णोपमा । दूसरे अर्थ में दीपसिखा तमनाम को कारन है तमनास कार्य नहीं होत है यातें, विशेषोक्ति—
"विशेषोक्ति जहँ हेतु सौं कारज उपजै नाहिं" । ४९१ ॥

विरहजरी लखि जीगनन कही न डहि कइ वार ।
अरी आव भाजि भीतरैं वरसत आजु अँगार ॥४९२॥

विरह इति। सखी की उक्ति विरहनी सों—संस्कृत में नाम खद्योत है, भाषा में जीगन, जुगनू, पटवीजन, अगिआ, चार नाम है। उद्दीपनविभाव है। जीगनानि कौं देखिकैं तूं विरह सों जरी है, मैं तोहि डहिकैं वरिकैं कुढ़िकैं कई वार नहीं कह्यो? कि अरी सखी तूं भाजिकैं भीतर घरमें आव, ये जीगन नहीं हैं, मेह मानो आजु अंगार वरसत है, जाहि देखत जरै, सो जो ऊपर परै तो कहा गति होय। किवा, हे सखि तू जीगन, खद्योत न लखि, मति जान कोई जीव को स्त्री है, सो विरह सों जरी है, अँगार होय रही है। मैं कई वार तोसों कह्यौ, न डहि, याको अर्थ तूं मति वरै, अरी सखी तूं भाजिकैं भीतर घरमें आव। तव क्रोध करि कहति है, न आवै है तो वरि वरो, सत कहिए भले आजु अंगार हैं, आगे कहैंगे 'फिरि न मरे मिलिहै अली ये निरधूम अँगार'। किंवा, जरी दोय तरह की होति है, वस्तु घटाइवे की वस्तु बढ़ाइवे की, कोई जरी ऐसो है कोठी में डारे तो अन्न घटै नहीं, तूं जीगन मति जानि, विरह वढ़ाइवे की जरी है। कह्यौ न डहि कई वार, कईएक लोगनि मोसों डहि करि कह्यौ तूं याकों, वार रोकौ, वाहिर मति सोइवे देहु, तूं अरी है हठ करि रही है, वाहिर सोइवे कौं, भीतर भाजि आव। किंवा, अरी आव, आव कहिए आयुर्वल ताको तूं अरी शत्रु है, आपनो आयुर्वल गँवायो चाहति है, भीतर कौं भाजि, मेह नहीं वरिसै है अङ्गार

बरिसै है, वाढ़ तो विरह तापैं मेह की वृष्टि अङ्गार तुल्य है, मानो अङ्गार बरिसै है । गम्योत्प्रेक्षालङ्कार । न कह्यौ कह्यौ, काकु जानिये ॥ ४९२ ॥

अरी परे न करे हियो खरे जरे पर जार ।
डारति वोरि गुलाव सौं मलै मिलै घनसार ॥४९३॥

अरी परे इति । उपचारकरती सखी सों नायिकावचन— गुलाब सों बोरि करि मलय चन्दन मिलाय घनसार कपूर डारति है, अरी सखी याकौं परे न करै है दूर नहीं करै है, हियो हृदय खरे अति जरे पर, विरह सौं जरि रह्यो है उपचार सो फेरि जारै है । किंवा, अरी चन्दन घनसार कौं हिया तें परें नहीं करै है दूरि करि हृदय पर धरै थी, खरे जरे पर फेरि तूं जार, सीतलता को उद्यम कियो उष्णताई भई । विषमालङ्कार—

"औरि भलो उद्यम किए होत बुरी फल आय" ॥ ४९३ ॥

कहे जु बचन बियोगिनी बिरहबिकल अकुलाय ।
कियेन को अँसुआ सहित सुआ सुबोल सुनाय ॥४९४॥

कहे जु इति । सखी सों सखी—एकान्त में कहे जो बचन वियोगिनी ने, विरह सों विकल दुखी होयकैं अकुलाय कैं जो बचन वियोगिनी ने कहे, कौन कौं, आंसू सहित नहि किये, किये हो यह अर्थ काकु स्वर सौं, सुवा ने सुबोल सुनाय, सुवाने सु कहिए वेही बोल सुनाय, ताहि बोल कौं सुनायकैं, सूवा को बोल कारन, आंसू कारज, हेत्वलङ्कार ॥ ४९४ ॥

सीरे जतननि सिसिर रितु सहि बिरहिनि तन ताप ।
बसिबे कौं ग्रीषम दिननु पर्‌यो परोसिनि पाप ॥४९५॥

सीरे इति । सखी सों सखी—सीरे जतननि, सीतल उपायन करि, बिरहिनी के तन के ताप सहे परोसिनि, ग्रीषम जेठ असाढ़ के दिननि में बसिबे कौं परोसिन कौ पाप पर्‌यौ, दुख भयो यह अर्थ । अत्युक्ति 'अत्युक्ति जु अद्भुत झूठ कै बरनै तहं पहिचानि । इहां झूठ बरन्यो है ॥ ४९५ ॥

प्रियप्राननि की पाहरू करति जतन अति आप ।
जाकी दुसह दसा पर्‌यो सौतिनि हूं संताप ॥४९६॥

प्रिय इति । सखी सों सखी—नायिका प्रिय के प्राननि की पाहरू चौकीदार है, राखनवाली है, जो यह मरैगी तौ नायक कभी जीवै नहीं, यातें, सौति आप आयकैं जतन करति है । किंवा नायिका आपुकौं पिय के प्रानन की पाहरू जानिकैं जतन करै है, नहीं तौ अबताईं सरीर छोड़ि देती, जाकी दुसह दसा सों सौतिनि कौं सन्ताप पर्‌यौ, सौतिनि कौं सौति के सन्ताप को जोग नहीं, तहां कह्यौ । सम्बन्धातिशयोक्ति—

'सम्बन्धातिसयोक्ति जहँ देत अजोगहि जोग' ॥ ४९६ ॥

आड़े दै आले बसन जाड़े हूं की राति ।
साहस कैकै नेह बस सखी सबै ढिग जाति ॥४९७॥

आड़े दै इति । सखी सों सखी—आले बसन पानी सों भीज्यौ कपड़ा ताकौं आड़े दैकै, वाके बिरह की आंच सही नहीं जाय तासौं, औ जाड़े हू की पूस माघ की राति है तोभी, साहस कैकै

सखी सब ढिग करिकै मन मैं सूरता धरि धरि प्रीति कै बस तें कहिये नजीक जाति हैं। अत्युक्ति। झूठ यातें ॥ ४९७ ॥

सुनत पथिकमुँह माह निस लुवैं चलति वहि गाम ।
विन बूझे विनहीं कहे जियति विचारी वाम ॥४९८॥

सुनत इति। सखी सों सखी—नायक पथिक के मुख सों सुनत है, कि माघ की निसा राति में वा गांव में लूवैं चलै हैं, जेठ में उत्काट गरम पौन चलै है, ताको नाम लूयें, पूरब में लूचि कहत है, पथिक सौं पूछें विना, वाके कहे बिना नायिका कौं जीवती विचारी, लूवैं चलै है तासौं जीवति है, यह निश्चय कियो। अनुमानालङ्कार ॥ ४९८ ॥

इत आवति चलि जाति उत चली छसातक हाथ ।
चढ़ी हिंडोरे सी रहै लगी उसासनि साथ ॥४९९॥

इत आवत इति। नायिका की लघुता स्वास की प्रवलता सखी सौं सखी कहति है—छै सात हाथ स्वास के निकरिबे के समै इत आगे चली आवति है, स्वास के प्रवेस में छ सात हाथ पीछें चली जाति है, हिंडोरा पर चढ़ी रहति है मानो, उसासनि की साथ लागी, चढ़ी रहति या पद सौं सी जो है मानो के अर्थ में ताको अन्वय। अनुक्तास्पदावस्तूत्प्रेक्षा ॥ ४९९ ॥

नेह कियो अति डहडहो विरह सुकाई देह ।
जरै जवासा जोज में जैसे बरिसै मेह ॥ ५०० ॥

नेह इति। सखी सों सखीवाक्य—विरह ने देह कौं सुखाई नेह कों अति डहडहो कियो अति पल्लवित कियो, बढ़ायो, जैसें

मेह के बरिसे जवासा, दुस्पर्श नाम संस्कृत है, पूरब में हिंगुआ कहत हैं, सो जरै है गलि जात है, वाको जौ कहिए जरि सौ जामत है, विरह में जवासा सरीर, जो नेह कोई कहत है, पारसी मैं जोज नाम असाढ़ को, जौन में जवासा जरत है, तहां नेह को दृष्टान्त नहीं मिल्यौ, तहा ऐसो अर्थ करिये । विरह ने देह कौं सुखाई, सूखी देह सौं शृङ्गार चेष्टा नहीं होय सकै, नेह कौं अति डहडहौ कियौ ताकौ दृष्टान्त। जैसे मेह बरिसै है, खेतनि में जव जामै है, वा जव सों गृहस्थ कौं जव की आसा जरै है, जाति रहति है, हमारे खेत में जव जामै है, दस बीस मन जौ आवैंगे यह आसा जाति है जौ तौ जामत है, नेह तौ भयौ है देह सूखि नेह सों शृङ्गार नहीं बनै ॥ ५०० ॥

इति श्रीहरिचरणदासकृतायां हरिप्रकाशाख्यसप्तसतीटीकायां
पञ्चशतक व्याख्या। ५ ॥

आनि इहां बिरहा धर्‍यो ज्यौं बिजुरी जनु मेंह ।
दृग जु वरत बरिसत रहत आठौं जाम अछेह ५०१

आनि इति । नायिका की उक्ति सखी सों । पूर्वानुराग में नायिकावचन दूती सों—नायक की उक्ति आछी नहीं लागै, ज्यौं को अर्थ सहित, बिजुरी सहित मेघ कौं आनि कैं इहां हमारे नेत्र में विरह ने धर्‍यो है मानौ, जनु कौ अर्थ मानौ आठौं पहर अछेह, छेह कहिए अन्त अछेह अनन्त निरवधि यह अर्थ। दृग नेत्र वरत है, यह बिजुरी को धर्म, औ वरसत रहत यह मेघ कौ धर्म, आँसू परत है, क्रिया के आगे जनु उत्प्रेक्षा व्यंजक कौ अन्वय है। अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ॥ ५०१ ॥

विरह बिपति दिन परतही तजे सुखनि सब अंग ।
रहि अबलौंऽब दुखौ भये चला चले जिय संग ॥५०२॥

विरह इति। नायिका की उक्ति सखी सों—विरह सो विपति के दिन ताकै परत ताकै आवत सब सुखनि ने हमारे अंग कौं छोड़, अवलों व, अवतांई भी रहिकैं दुख जो है सोभी चला चले चंचल भए जीव के संग, जीव जायगौ तब दुख भी जायगी, नायिका कौं जो विरह परिबौ है, सामान दूनौ वाक्यार्थ है, ताकौं जो शब्द करि एकता को आरोप कियो। निदर्सना भी होय, विरह बिपति दिन परिबो कारन, ताही समै सुखनि अङ्ग छोडे यह कार्य। चपलातिशयोक्ति—

"चपलात्युक्ति जु हेतु के होत नामही काज" ॥ ५०२ ॥

नये विरह बढ़ती बिथा खरी विकल जिय बाल ।
बिलखी देखि परोसिन्यौ हरष हँसी तिहि काल ॥

नये विरह इति। सखी की उक्ति सखी सों—भए विरह सौं बढ़ती व्यथा, खरी अति जिय में विकल दुखी है बाला। परोसिनि सों नायक की आसक्ति थी, ताकौं बिलखी देखिकै ताहि काल ताहि समै हरषि कैं हँसी, ईर्षा तें विषाद की शान्ति हर्ष हास संचारी। नायक के विरह सों ईर्ष्या बड़ी भई प्रेम की कमती दोष है, तहां ऐसो अर्थ। परोसिनि नायिका कों नए विरह में बिलखी देखि कैं विकल देखि हरष कैं हँसी, तहि नायिका की अवकाल मृत्यु होय है। याके तन ताप को हमारैं दुख छूटैगो, किंवा पीछैं कहे बसिबे को ग्रीषम दिननि पर्यो परोसिनि पाय। किंवा

नायिका कहै थी, तुमारे विरह सौं मरोंगी, सखी सब रोदन करै थी परोसिनि कौं भी बिलखी देखि कै जान्यौ निश्चय मृत्यु है, हमारो प्रतिज्ञा रही यातें हरषि हँसी, परोसिनि कौं बिलखी देखि हरष हँसी। विभावनालङ्कार—

'काहू कारन तें जबै कारज होय विरुद्ध' ॥ ५०३ ॥

छतो नेह कागद हिये भई लखाय न टाँक ।
विरह तचें उघर्‍यौ सु अब सेंहुँड़ कौ सौ आँक ५०४

छतो नेह इति। नायिका की उक्ति सखी सों—कागद कहिए हृदय सो कागद है, तामें नेह छतो प्रीति थी संयोग में, टांक थोरी भी लखाय नहीं भई लक्षित नहीं भई। अब विरह अग्नि सों तचें तपें पर उघर्‍यौ जैसे सेंहुड़ थूहर ताके दूध सों लिखे कागद पै, फेरि तपावै तब आंक अक्षर उघरै जाहिर होय। हृदय कागद रूपक। नेह उपमेय, सेंहुड़ को आंक उपमान, सो वाचक। नहीं लखायबो उघरिबो साधारनधर्म। पूर्णोपमा—"उपमानरु उपमेय जहँ वाचक धर्म सु चारि। पूरन उपमाहीन तहँ लुप्तोपमा विचारि"॥ नायिका को वचन है किंवा नायक को वचन है विभाव की व्यक्तता नहीं होति है सन्दिग्धदूषन है ॥ ५०४ ॥

कर के मींड़े कुसुम लौं गई विरह कुँभिलाय ।
सदा समीपिनि सखिन हूं नीठि पिछानी जाय ॥५०५॥

करके इति। सखी की उक्ति सखी सों—करके मीड़े कुसुम लौं हाथ के मसले फूल सी, ऐसें विरह सों नायिका कुंभिलाय गई है, सदा नजीक रहनवाली सखिन कौं, नीठि कोई तरह प-

छिचानी जाति है। नायिका उपमेय, कुसुम उपमान, लौं वाचक
कुंभिलानो धर्म। पूर्णोपमालंकार ॥ ५०५ ॥

लाल तिहारे विरह की अगिन अनूप अपार ।
सरसै बरसै नीर हूं मिटै न झरहूं झार ॥५०६॥

लाल इति। नायिका ने पाती में या दोहा लिख्यौ। किंवा
एकही ग्राम में विरह भयो है, दूतीवचन नायक सों—हे लाल
तिहारे विरह की जो है आगि सा अनूप है, आश्चर्य है, औ आ-
पार है, नीर के बरसिहूं भी सरसै अधिक होय यह अनूप। झार
लागैं झार ज्वाला नहीं मिटै यह अपारता। नीर बरसि सों सरसै,
विभावना—"काहू कारन तें जबै कारज होय विरुद्ध" ॥ ५०६ ॥

याके उर औरैं कछू लगी विरह की लाय ।
पजरैं नीर गुलाब के पिय की बात बुझाय ॥५०७॥

याके इति। सखी सों सखी—या नायिका के उरमें औरही
कछू तरह लाय आगि लगी है। गुलाब को नीर सींचे पजरैं प्र-
ज्वलित होय है, पिय की बात कहैं सों बुझाय है, शान्ति होति
है, गुलाब को नीर उद्दीपन है तासों कह्यो, औरनि कों औरि
तरह है, याके उर में औरि तरह है। भेदकातिशयोक्ति—

"औरै पद जहँ दीजिये अधिकाई के हेत।
अतिसयोक्ति भेदक इहै बरनत कवि सिरनेत" ॥ ५०७ ॥

मरी झरी कि टरी बिथा कहा खरी चल चाहि ।
रही कराहि कराहि अति अब मुख आहि न आहि ॥

मरी झरी इति। सखी सों सखी प्रोषितपतिका की दसा

कहति है—मरी भरो, मरी परी है, के वाको व्यथा टरी, कहाँ खरी, हे सखि तूं क्यों खड़ी है, चलिकैं चाहि देखि तूं अवताई कराहि कराहि रही है, कहरि कहरि अति रही है, अब वाके मुख में आहि यह शब्द पीड़ा द्योतकन आहि नहीं है, मरी परी है, के व्यथा टरी है। सन्देहालङ्कार—

'सुमिरन भ्रम सन्देह ये लच्छन नाम प्रकाश'। ५०८।

कहा भयो जौ बीछुरे मो मन तो मन साथ।
उड़ी जाति कितहूँ गुड़ी तऊ उड़ायक हाथ ॥५०९॥

कहा भयो इति। नायिका ने प्रोषितपति कौं पाती लिखी है, जौ तुम बिछुरे जुदे हुए तौ कहा भयौ, कछु हानि नहीं, हमारो मन तुमारे मन के साथ है, हमारी मनोमय देह तुमारे मन के साथ है, तुमारे साथ परदेश को कार्य्य किये पीछे चाहैंगे तब तुमारे मन कौं पकरि ल्यावैंगे, मन पकड़े तुम आपुही आवौगे। तहां दृष्टान्त। गुड़ी चंग कितहूं उड़ी जाति है तौभी उड़ायक उड़ावनिहार के हाथ में है, हाथ कौ अर्थ लच्छना करि वस में जानिये। तुम गुड्डी की ठौर तुमारो मन डोर की ठौर, हमारो मन उड़ावनहार की ठौर। गुड्डी नायक के दृष्टान्त दियें स्त्रीलिंग को दोष नहीं, उपमा होय तो दोष। दृष्टान्त अलङ्कार। मानो नायक सौं भी नायिका को उक्ति, जो तुम बिछुरे रूठे हौ औरि वही अर्थ ॥ ५०९ ॥

जब जब वे सुधि कीजिये तब सबही सुधि जाँहि।
आँखिन आँखि लगी रहै आँखे लागति नाँहि ॥५१०॥

जब जब इति। मन सौं किंवा सखिन सौं नायिकावचन।

किंवा नायकवचन—आँखिन आँखि लगी रहै, प्रिय की. किंवा प्रिया की आँखिन सों आँखि हमारी लगी रहति हैं। आँखें लागत नाहिँ, आंखि नहीं लगे हैं निद्रा नहीं आवति है। जब जब वे को अर्थ हमारो मन जानत है, ऐसो कोई आलिंगन विशेष ताको सुधि यादि कीजियत है, ता समै में तौ सब सुद्धि ज्ञान जातो रहत है, मोह दशा होति है। शब्दविरोध। आंखि सौं आंखि लागी रहति है, आंखि नहीं लागै। विरोधाभास—

"भासे जहां विरोध सो वहै विरोधाभास" ॥ ५१० ॥

कौन सुनै कासों कहौं सुरति विसारी नाह ।
वदावदी जिय लेत हैं ये वदरा वदराह ॥ ५११ ॥

कौन सुनै इति। नायिका की पाती नायक कौं—हे नाह हमारो दुख कौन सुनै औ कौन सों कहौं तुम हमारी सुरति यादि विसारी, वदावदी एक पैं एक तुरत तुरत आयकें ज्यौं प्रान जाकौं लेत हैं, लच्छना करि अति दुख देत हैं। ए वदरा, ए अषाढ़ के मेघ कैसे हैं वदराह हैं कुपथगामी हैं, स्त्री कौं दुख देने में प्रवृत्त हैं, तयार हैं। वदरा वदरा जमक। "जमक शब्द कौ फिरि श्रवन अर्थ जुदो ह्वै जानि'। वादर को विशेषन वदराह अभिप्राय है, जो वदराह होय तामें दया नाहीं, सो प्रान लेइ। परिकरअलकार—"है परिकर भासे लिये जहां विशेषन होय" ॥ ५११ ॥

औरै भाँति भएऽब ये चौसर चन्दन चन्द ।
पति बिन अति पारत ब्रिपति मारत मारुत मन्द ॥

औरैं इति। सखी सों नायिकावचन—हे सखि, व को अर्थ

अब, चौसर चार लर को मोती की माला औ चन्दन औ चन्द, औरैं भाँति और तरह के भये, पति बिना ये सब अति बिपति कौं पारै हैं, औ मन्द जोहै मारुत पौन सो मारत है। किंवा विरहव्याकुल देखि कोई सखी सीतल जानि कैं चौसर माला पहिराई है औ चन्द्रमा सों सीतल चन्दन नाम मलयागिर लगायो है, औ किवार खोलि कैं पौन लागिबे देति है, तहां प्रवीन सखी को बचन जानिये। बिरह तें अति को अर्थ अधिक बिपति पारत है, अब औरैं भये और समै और थे। औरैं पद तैं, भेदकातिशयोक्ति॥

नेकु न झुरसी बिरह झर नेह लता कुँमिलाति ।
निति निति होति हरी हरी खरी झालरति जाति ॥

नेकु न इति । सखी सों सखी की उक्ति। किंवा, नायिका की उक्ति सखी सों—विरह की झर ज्वाला तासों झुरसी अधबरी ऐसी जो नेहलता है सो नेकु थोरी भी नहीं कुँभिलाति है, म्लान नहीं होति है, नित नित हरी हरी डहडही होति है, खरी अति झालरति जाति है, फैलति जाति है। किंवा नेकु न याको अन्वय झुरसी सों औ कुंभिलाति सों करिये। झुरसिबो कारन है, कुँभिलानो कार्य नहीं उपजत है। विशेषोक्ति—

"विशेषोक्ति जो हेतु सो कारज उपजै नाहि। ५१३॥

यह बिनसत नग राखि कै जगत बड़ो जस लेहु ।
जरी बिषमजुरि ज्याइऐ आय सुदरसन देहु ॥५१४॥

यह बिनसत इति । नायिका की सखी की पाती प्रोषितपति कौं । यह नग सारीखो दुर्लभ, किंवा, नग रत्न कौं कहत

हैं, स्त्री रत्न सो विनसत है, ताकौं राखि कें रच। करिकैं जगत में बड़ो जस कौं लेहु, कैसी है, विषमज्वर सों जरी है वरी तुल्य है ताकौं जिआइये आयकैं, इहां सुदर्शन सुन्दर दरसन देहु। श्लेष में। जाकौं विषमज्वर होत है ताकौं सुदर्शन चूर्न देत हैं। श्लेषा लंकार ॥ ५१४ ॥

निति संसो हंसो बँचतु मनहुँ सु इहि अनुमान।
विरह अगिनि लपटनि सकत झपट न मींच सिचान॥

निति इति। सखी सों सखी की उक्ति—निति सदा संसो संशय सन्देह रहत है, या नायिका कौ हंसो प्रान बचत है यां बात कौ। "मनहु सु यह अनुमान" है सखि तूं मान, यह बात अनुमान है निश्चय है। किंवा, मानो यह अनुमान याकौ डौल सो, विरह सो है अग्नि, ताकी लपटनि सों, आगि की लपटनि बहुत ज्वाला तासों मीच मृत्यु सो है सिचानबाज, सो झपटि नहीं सकै है। हेतुउत्प्रेक्षा। मीच सो सिचान, रूपकअलङ्कार॥

करी विरह ऐसी तऊ गैल न छाड़त नीच।
दीने हूँ चसमा चखनि चाहै लहै न मीच ॥५१६॥

करी विरह इति। सखी सों प्रोषितपतिका की दसा सखी कहति है। किंवा सखी नायक सों कहति है—विरह मैन वा नायिका कों ऐसी करी है, तऊ तौभी वाकी गैल नहीं छोड़त है, वाकी पीछा नाहीं छोड़त है, विरह नीच है निकृष्ट है बुरो है यह अर्थ। मीच मृत्यु, चष नेत्र, तामें चसमा ऐनक दे करि चाहै है, देखै है तौभी नहीं लहै है नहीं पावै है, ऐसी करी है।

अत्युक्तिअलंकार—'अत्युक्ति जु अद्भुत झूठ कै बरनै तहँ पहिचान' ऐसी दूबरी करी झूठ। मीच चसमा दिये अद्भुत ॥ ५१६ ॥

मरन भलो वरु बिरह तें यह बिचार चित जोय ।
मरन मिटै दुख एक को बिरह दुहूँ दुख होय ॥५१७॥

मरन भलो इति। नायिका कों अति बिरह व्याकुल देखि वाके दुख सों दुखी होय सखी सों सखीवचन—बिरह तें मरन जो है सो बर श्रेष्ट है भलो है उत्तम है. बर बचन में बिश्राम भी है, पूरब में बलु कहत हैं. यह बिचार करि कैं तूं चित्त म जोय देख, नायिका कूं मति सुनाव। मरन सों एक को दुख मिटै है छुटै है, बिरह सों दुहुन कौं नायिका नायक कौं दुख होत है मरन दोष तामैं गुन मान्यो। लेशअलंकार। भाषा में लेष कहत हैं। 'जहां दोष में कीजिये गुन कलपन सुविशेष। कै गुनमें ठहराइये दोष सुजानहु लेष' ॥ मरन कौं युक्ति सौं भलो ठहरावत है। काव्यलिंग भी जानिये ॥ ५१७ ॥

बिगसत नव वल्ली कुसुम निकसत परिमल पाय ।
परसि पजारति बिरहि हिय बरसि रहे की बाय ॥

बिगसत इति। नायिका की उक्ति किंवा नायक की उक्ति। नव वल्ली नवलता ताके कुसुम कली विगसति है, फूलति है, तहां परिमल मनोहर गन्ध कौं पायकैं निकसै है चलै है। 'बरिसि रहे की बाय', बरषा होत रहे ता समै को पौन सो बिरही कौं परसि कैं लागि कैं हियौ हृदय कौं पजारत है, बरावत है। उद्दीपन है, सीतल पवन जारिबे कौ कारन नहीं तासौं जारिबौ भयौ।
विभावना—"जबै अकारन बस्तु तैं कारज परगट होय" ॥ ५१८ ॥

औंधाई सीसी सु लखि बिरह बरति बिललात ।
बीचहिं सूखि गुलाब गौ छींटौ छुयौ न गात ॥५१९॥

औंधाई इति । सखी सों सखी—गुलाब-भरी सीसी सीतल जानि नायिका पैं औंधाई उलटी करी, बिरह सों बरति है बिललाति है रोवति है कँहरति है, तब वाकी अंग की ज्वाला सौं बीचही गुलाब सुखि गयौ, पानी की छींटि ने वाके गात कूं नेक भी न छुई, बिललात पद सों नायक कौ बिरह भासै है। अत्युक्ति है ॥ ५१९ ॥

हौंहीं बौरी बिरहबस कै बौरो सब गाँव ।
कहा जानि ये कहत हैं ससिहिं सीतकर नाँव ॥५२०॥

हौंही इति । नायिका की उक्ति सखी सों—बिरह में चन्द्रमा गरम लागे है, मैंही बौरी बावरी हौं बिरह के बस सौं, कै किधौं संपूर्ण गाँव बावरो है, ये गाँव के लोग कहा क्या जानि कैं कहत हैं, सीत कर सीतल हैं कर किरन जाके, ऐसो नाम ससिहिं कौ कहत हैं । सन्देहालंकार ॥ ५२० ॥

सोवति जागति सुपन बस रस रिस चैन कुचैन ।
सुरति स्यामघन की सुरति बिसरैहूँ बिसरै न ॥५२०॥

सोवति इति । सखी सों सखीवचन—इतने समै में, घनस्याम श्रीकृष्ण ताकी सुरति यादि, सूरति स्वरूप सो बिसरायेहूं बिसरै नहीं, बिसारिबो हेतु है बिसरिबो कार्य नहीं होत है । विशेषोक्तिअलंकार—

"विशेषोक्ति जो हेतु सौं कारन उपजै नाहिं" ॥ ५२१ ॥

दृग मलंग डारे रहैं कीने वदन निमूँद ।
करि सांकरि बरुनी सजल कौड़ा आँसू बूँद ॥५२२॥

दृग इति । दृग सो मलंग फकीर है, सो कोई तकिया में आपु कौं डारे रहत हैं शरीर कौं गिराये परे रहत हैं. तैसैं विरहिनी के नेत्र चांचल्यरहित हैं। किंवा, आँसू बूंद है कौड़ा ताकौं डारें रहत है पहिरें रहत है, सजल बरुनी ताकौं साँकरि करिकैं वदन कौं निमूद किये मुद्रित करें। रूपकालङ्कार ॥ ५२२ ॥

जिहिं निदाघ दुपहर रहै भई माह की राति ।
तिहिं उसीर की रावटी खरी आवटी जाति ॥५२३॥

जिहि निदाघ इति । नायिकावचन सखी सों। सखी सों सखीवचन भी सम्भवै है—जाहि उसीर खस की रावटी तामें निदाघ ग्रीषम को दोपहरी सो माघ की राति भई रहै थी, ताहि उसीर की रावटी में मैं खरी अति आवटी जाति हौं अति गरम होति है। किंवा, खरी खडी होति हौं तौभी आवटी जाति हौं, बैठी सोय कौं न सकैं, उसीर की रावटी सों आवटी जाति है। विभावना—'काहू कारन तें जबै कारज होय विरुद्ध' ॥ ५२३ ॥

तच्यो आँच अति बिरह की रह्यो प्रेम रस भीजि ।
नैननि के मग जल बहै हियो पसीजि पसीजि ॥५२४॥

तच्यौ इति । गुलाब कौ पानी काढ़ै है यन्त्र बनाय कैं, ताकौ समता जानि परै है। नायिका की, किंवा, सखी की उक्ति सखी सौं—अति जो विरह है ताकी आँच सों तच्यौ है तप्यौ है। किंवा अति तप्यौ है, प्रेम सो है रस जल तासौं भीजि रह्यौ है, नैननि

के मग राह मों जल बहै है, आँसू चलै है यह अर्थ। हृदय प-
सीजि पसीजि कैं। किंवा, मानो नायक सौं सखीवचन, औरि
वही अर्थ। नैननि के मग जल बहै है हियो पसीजि कैं, यातें तूं
पसीजि राजी होय, प्यार करै, प्रेम सो रस। रूपकालंकार। गु-
लाव को पानी चुआयो जात है ता ठौर में नायक सौं सखी क-
हति हैं दोऊ बात प्रस्तुत है। प्रस्तुतांकुरअलंकार—
"प्रस्तुत अंकुर है किये प्रस्तुत में प्रस्ताव"। ५२४॥

स्याम सुरति करि राधिका तकति तरनिजा तीर।
अँसुअनि करति तरोंस के खिनक खरौंहौं नीर ५२५

स्याम द्रुति। सखी मों सखीवचन। किंवा, उद्धवजी को व-
चन श्रीकृष्ण सौं—तहां है स्याम तुमारी सुरति स्मरन करि कैं
राधिका जी तकति ताकति हैं, तरनिजा तरनि सूर्य ताकी कन्या
जमुनाजी ताकि तीर कौं, मन में विहार यादि आवत है, यातें
आँसू करति है तरोंस तट ताकौं खिनक छन एक में खरौं हौं
खारो सो नीर, आँसू खारो ताकि दोष सौं जल कौं खारो दोष
भयो। उल्लासअलंकार—"गुन औगुन जब एक तें औरि धरै उ-
ल्लास"। किंवा, स्याम राधिकाजी की सुरति करि। किंवा स्याम
श्री राधिकाजी की स्मरन करि सखी॥ ५२५॥

गोपिनि के अँसुअनि भरी सदा असोस अपार।
डगर डगर नै ह्वै रही बगर बगर के बार ॥५२६॥

गोपिन के द्रुति। उद्धवजी को बचन श्रीकृष्ण सौं—गोपिनि
के अँसुअनि सों भरी है सदा असोस कबही सूखै नहीं, फेरि अ-

पार है, डगर डगर राह राह मैं, तैं नदी होय रही है, वगर व· गर जेतने वास मोहल्ला। ताके वार में द्वार में। अत्युक्तिअलंकार, "अत्युक्ति जु अद्भुत झूठ बरनत तहँ पहिचानि" ॥ ५२६ ॥

वनवाटनि पिक वटपरा तकि विरहिनि मत मैन ।
कुहौ कुहौ कहि कहि उठै करि करि राते नैन॥५२७॥

वनवाट इति। वन के पथनि में पिक कोकिल सो वटपरा वटपार विरहिनि कौं ताकि कैं मैन काम ताके मत सौं सल्लाह सौं कुहौ कुहौ पिक की वोली है, कूहौ मारिवे को भी कहत है, कूहौ कूहौ मारौ मारौ कहि कहि उठत है। राते लाल नैन करि करि कोकिल के लाल नैन हैं, पिक सो वटपरा है। रूपकअ० ॥

दिस दिस कुसुमाति देखियत उपवन विपिन समाज।
मनौ वियोगिनि कौं कियो सरपंजर ऋतुराज॥५२८॥

दिसदिस इति। नायक की उक्ति किंवा नायिका की उक्ति— दिसा दिसा में कुसुमित फूलि देखियतु है, उपवन बाग, औ विपिन वन इनके समाज समूह ऋतुराज वसन्त मानो वियोगिनि कौं सर पंजर कियौ है। किंवा, कुसुमायुध काम को नाम है सो कुसमनि के वान काम ह्वै है वसन्त ह्वै नहीं यातें रतिराज ऐसो भी पाठ कहूं है। वन उपवन विषें सरपंजर की सम्भावना। वस्तुत्प्रेक्षा ॥ ५२८ ॥

हिये औरि सी ह्वै गई टली औधि के नाम ।
दूजे कर डारी खरी बौरी बौरे आम ॥५२९॥

हियें इति। सखी सौं सखी—हियें मन विषें औरि सी औरि

तरह की ह्वै गई मानो अति व्याकुल भई टली बीती जो औधि आयवे को ठिकानो ताको नाम सुनिकैं फलानो दिन टल्यो, एक तो यह दूसरे वौरे जो ऑम है मंजरसहित जे ऑम है ताने खरी अति वौरी विक्षिप्त करि डारी है, औरि सी भई, औरिही भई मानो, इहां सी मानो के अर्थ में। उत्प्रेक्षालंकार ॥ ५२८ ॥

भौं यह ऐसोई समौ जहां सुखद दुख देत।
चैत चांद की चांदिनी डारति किये अचेत ॥५५०॥

भौ यह इति। नायिका की उक्ति सखी सौं, किंवा सखी सों सखी की उक्ति—नायक विना यह ऐसोई समयी भयी जहां सुखदायक दुखदाई होत है। चैत की चन्द्रमा की चांदिनी अचेत कियें डारति है, अचेत करति है यह अर्थ। चैत की चांदनी अचेत करिबे को कारन नहीं है तासौं अचेत होनो कार्य भयो। विभावना—"जहां अकारन वस्तुतें कारज परगट होय" ॥ ५३० ॥

गनती गनिवे तें रहे छतहूं अछत समान।
अब अलि ये तिथि औंध लौं परे रहौ तन प्रान ५३१

विरहिनी—गनती इति। विरहिनी को वचन सखी सौं—गनती गननामें गनिवे तें रहे, हमारो प्रान गनना में नहीं, छतहू जो हैं तौभी अछत समान, अविद्यमान ताहि वरोवरि। हे अलि हे सखि औध तिथि को समान हानि तिथि की वरोवरि, तनमें प्रान परे रहौ, जो तिथि की हानि होति है, सो पत्रा में रहति है गनती में नहीं, तिथि उपमान, प्रान उपमेय, लौं वाचक गनती इत्यादि साधारनधर्म। पूर्नोपमालंकार ॥ ५३१ ॥

जाति मरी बिछुरति घरी जलसफरी की रीति ।
छिन छिन होति खरी खरी अरी जरी यह प्रीति ५३२

जात मरी इति। नायिका की उक्ति—जल की औ सफरी प्रोष्ठी नाम मछरी की यह रीति है, एक घरी बिछुरत के मरि जाति अरी सखी प्रीति जो है सो छन छन में खरी को अर्थ अति खरी दृढ़ होति है गाली देत है ऐसी यह प्रीति जरी। लोकोक्ति।

"लोकोकति तहिं जानिये लीने लोकप्रवाद" ॥ ५३२ ॥

मार सु मार करी खरी मरी मरीहि न मारि ।
सींचि गुलाव घरी घरी अरी बरीहि न वारि ॥५३३॥

मार सु मार इति। नायिका की उक्ति सखी सों। किंवा सखी सों प्रिय सखीवाक्य—मार काम ताने मारि कैं खरी अति सुमार करी दृढ़ चोट लगाई याते यह मरी न मारि फेरि क्यौं मारै है, घरी घरी मैं गुलाब सींचि कैं अरी सखी किंवा तूं अरी है हठि रही है मैं सीतल उपचार करि जिआवौंगी। हे सखि मैं या बात सों बरी हौं मोहि मति बारै। किंवा नायिकाहि मति बारै जारै ध्वनि मैं, गुलाब उद्दीपन है, यह अति दुखी है दुखी कूं दुखित मति करै। आवृत्तिदीपकअलंकार ॥ ५३३ ॥

रह्यौ ऐंचि अंत न लह्यौ अवधि दुसासन वीर ।
आली बाढ़त बिरह ज्यौं पंचाली कौ चीर ॥५३४॥

रह्यौ इति। सखी सों बिरहिनीवचन—स्त्री कौं स्त्री ब्रज में वीर कहति हैं, हे बीर सम्बोधन नायक को आइवे को दिन सो अवधि सो दुसासन है, किंवा दुसासन वीर है सो बिरह कौं

ऐंचि रह्यौ खैंचि रह्यौ छोड़ाय रह्यौ पै अन्त पार नहीं पायौ । है आली विरह वाढ़त है, जैसें पंचाली द्रौपदी कौ चीर वस्त्र, अवधि दुसासन रूपक । विरह उपमेय, चीर उपमान, ज्यौं वाचक, वा- ढ़िवौ धर्म । पूर्णोपमा ॥ ५३४ ॥

विरहविथाजल परस विनु वसियत मो जिय ताल ।
कछु जानत जलथंभ विधि दुरजोधन लौं लाल ५३५

विरह विथा इति । नायिका की पाती नायक कों है । वि- रह सों जो है विथा पीड़ा सो है जल ताकी परस विना हमारो जो जीव सो तलाव है, हमारो दुख तुमैं व्यापत नाहीं । हे लाल तु म दुर्योधन की तरह जलथम्भन विधि जानत हौ, जैसे दुर्योधन पानी में पैठे औ पानी नहीं लागै, व्यथा जल रूपक, दुर्योधन उ- पमान, लाल उपमेय, लौं वाचक जलथंभ विधि धर्म, पूर्नोपमा ॥

सोवति सुपने स्यामघन हिलिमिलि हरति वियोग ।
तवहीं टरि कितहूं गई नींदौ नींदन जोग ॥५३६॥

सोवति इति । नायिका की उक्ति सखी सों—घनस्याम श्री कृष्ण तिनकी संग सपना में सोवत कै हिलिमिलि कैं एक होय कैं वियोग कौं हरे थी, तवहीं ताही समै टरिकैं कितहू कहूं जाती रही नींदिहू निद्रा भी भूख प्यास तो आगेही जाति रही, नींदि- न जोग निंदिवे लायक, या समै में जाती रहै, किंवा निन्द्रा कों निद्रा जोग नहीं भयौ किंवा विरहिनी कों निद्रा आये निद्रा ने जान्यौ हमारी निन्दा को जोग होयगो । विषादअलङ्कार—

"सो विषाद चित चाहि तें उलटो ह्वै कछु जाय" ॥ ५३६ ॥

पिय बिछुरन को दुसह दुख हरष जात प्यौसाल ।
दुरजोधन लौं देखियत तजत प्रान यहबाल॥५३७॥

बाले को वर्नन—पिय इति । सखी सों सखी । पिय सों बिछुरिबे को दुसहदुख है, प्यौसाल पिता को घर, नैहर पूरब में कहत है, प्यौसाल जात के हरष है, दुर्योधन को सराप थो जब जब तुमैं हरष सोक एक बेर होयगो तब मरोगे, दुर्योधन की तरह देखियत है, यह बाला प्रान तजति है. हरष सोक की सन्धि भावसन्धि है, कहूं प्यौसार इहिँ बार ऐसो पाठ है र ल एक है, तहां यह भी अर्थ है, सखि यह नायिका प्रान छोड़ति है ताकों तूं बार रोको, प्रान मति छोड़िबे देहु, यह बार को अर्थ यां दिन में । दुर्योधन उपमान, बाल उपमेय, लौं वाचक, प्रान तजिबो धर्म । पूर्नोपमालंकार ॥ ५३७ ॥

कागद पर लिखत न बनत कहत सँदेस लजात ।
कहिहै सब तेरौ हियौ मेरे हिय की बात ॥५३८॥

सँदेस—कागद इति । नायिका की उक्ति । कागद पर लिखत नहीं बनत है, सँदेस कहत के हमारो मन लजात है, तिहारो हियौ मन सो हमारे हिय की सब बात कहिहै, आपने दुख सों हमारो दुख जानैगो, औरि के हृदय की बात औरि को हृदय क्योंकरि कहै । विरोधाभास—"भासै जहां विरोध सो वहै विरोधाभास' । किंवा पाती पर लिखति है सँदेस कहत नहीं बनत है लजाति है, आगे वही अर्थ । तहां सखी सों सखीवचन ॥

बिरह बिकल बिनुहीं लिखी पाती दई पठाय।
आँक बिहीनी यौं सुचित सूने बाँचत जाय ॥५३९॥

पाती वर्नन—विरह इति। सखी सों सखी। बिरह सों विकल नायिका ने नायक कों पाती पठाय दई है, सून्य चित्त सों पठाई है यातें आंक विहीनी है, वाको चित्त सो हमसों लग्यो है, यों या तरह सों वांचत जात है। किंवा दोऊ विरह विकल हैं नायिका ने विनुही लिखी विनही को अर्थ हृदय मन विना लिखी, ऐसी पाती पठाय दीनी, अङ्कविहीनी जो पाती यों या तरह चित्त करि सून्य जो है नायक सो वांचतो जाय है, वाकी दुख सो कहतो जात है, नायिका कों खबरि नहीं या विन लिखी पाती है, नायक कों खबरि नहीं बिना आंक की पाती बाँचत हौं। किंवा विरह विकल नायिका ने विनाहीं सों, विन मन सों पाती लिखी, पठाय दीनी, कैसी लिखी है, अंकविहीनी, वि कहिये दोय आंक अच्छर करिकैं हीन है, कम है, कागद में पहिलें स्वस्ति लिखिये है, स्वस्ति को अर्थ कल्यानता करि हम हीन हैं, तुम न आवोगे तो हमारी कल्यान नहीं। यौं यौं या तरह सूचित कियो। "लघु इच्छा अनुसार"। सूने एकान्त में वां अर्थ, 'अंकविहीनी यौं ', करि मैं विहीन त जात है। विना रन है यातें हेतु "हेतु

रँगराती राते हिये प्रीतम लिखी बनाय ।
पाती काती बिरह की छाती रही लगाय ॥५४०॥

रँगराती इति। नायक कोई दिनमें आवैगो तब पाती लिखी रंगीन कागद मैं। सखी को बचन सखी सों, रंग सों राती लाल, राते हिये अनुराग भयो हृदय सौं प्रीतम ने बनायकैं जाहि बात बिरह टूर होय ऐसी लिखी, पाती कैसी है बिरह काटिबे कौं काती तलवार है, या जानिकैं नायिका छाती सौं लगाय रही, हृदय में बिरहदुख देत है ताकौं काटै, पाती सो काती तरवार है, गौनी लचना सों कह्यौ। रूपकअलङ्कार ॥ ५४० ॥

तर झुरसी ऊपर गरी कज्जल जल छिरिकाय ।
पिय पाती बिनहीं लिखी बाँची बिरह बलाय ॥५४१॥

तर झुरसी इति। सखो सौं सखीवचन—हाथ की गरमी सों तर नीचे झुरसी है, ऊपर गरी है, गलि गई है, कज्जलसहित जो आँसू जल ताके छिरकाव सों, पाती लिखत कैं रोदन कियो है पिय ने बिना लिखेही पाती बाँची, बिरह रूप बलाय दुख वाको हैं, लिखी जाय तब बाँची जाय अच्छर कारन सो नहीं है। बिभावनालङ्कार—

"होति अभांति विभावना कारन बिनहीं काज" ॥ ५४१ ॥

कर लै चूमि चढ़ाय सिर उर लगाय भुज भेंटि ।
लहि पाती पिय की तिया बाँचति धरति समेटि ५४२

कर लै इति। सखी सों सखी की उक्ति—कर हाथ में लैकैं चूमै है, सिर पैं चढ़ावै है, उर छाती सौं लगावै है, भुजा सों भेंटि

कैं। पिय की पाती तिया नायिका लहि कैं बाँचति है, फेरि स-
मेटि धरति है। स्वभावोक्तिअलङ्कार। कारकदीपक भी जानिये॥

मृगनैनी दृग के फरक उर उछाह तन फूल ।
बिनहीं पिय आगम उमगि पलटन लगी दुकूल ५४३

पिय आगम बर्नन—मृगनैनी दूति। सखी सों सखी। मृग-
नैनी नायिका दृग के फरकै उर में उछाह है, तन शरीर किंवा
कुच सो फूले, बिनाही पिय के आगम उमगि कैं, दुकूल वस्त्र प-
लटि फेरिबे लगी, मृग के नैन से नैन है जाके मृग के नैन उप-
मान सो नहीं है वाचक नहीं है साधारन धर्म वहीं है, केवल नैन
उपमेय है। लुप्तोपमालङ्कार। अनुमानालङ्कार भी है।
"जहँ अदृष्ट कों हेतु सों जानि लेत अनुमान" ॥ ५४३ ॥

वाम बाहु फरकत मिलै जौं हरि जीवनमूर ।
तौ तोहीं सौं भेटिहौं राखि दाहिनी दूर ॥५४४॥

वाम बाहु दूति। आगमिष्यतपतिका की उक्ति बांई बाहु सौं।
हे वाम बाहु जो तोहि फरकत कै पिय जीवन कौ मूर मूल मिलै
तौ पहिले तोही सों भेटौंगी, दाहिनी बांह कौं दूरि राखि कैं,
जो मिलै तौ तोही सों भेटौं। सम्भावनाअलङ्कार ॥ ५४४ ॥

कियौ सयानी सखिन सौं नहि सयान यह भूल ।
दुरै दुराई फूल लौं क्यों पिय आगम फूल ॥५४५॥

कियौ दूति। परकीया नायिका को पति आयौ है। सखिन
सौं नायिका ने नहीं कह्यौ सखी जानि गई नायिका सौं कहति
हौं, तुम तौ सखिन सों सयानी चतुराई कियौ नहीं कह्यौ, च-

तुर के आगे चतुराई सुज्ञानता नहीं है भूलि है. पिय के आगम सों जो फूल है फूलनि है सो फूल की सी तरह दुराई छपाई क्यौंकरिकै छपै, फूल छपावै तो सुबास नहीं छपै। किंवा सयानी सखिन सौं तुम सयान कियो एक सयान को अध्याहार करि ऐसो सयान नहीं है यह भूल है पिय आगम फूल उपमेय। उपमालङ्कार। फूलि रही है. यह हेतु तासों पिय को आगमन को निश्चय करनो। अनुमानालङ्कार—

"जहँ अदृष्ट को हेतु सों जानि लेत अनुमान" ॥ ५४५ ॥

आयो मीत बिदेस तें काहू कह्यौ पुकारि ।
सुनि हुलसी बिहँसी हँसी दोऊ दुहुनि निहारि ५४६

आयौ मीत इति। पिय नर्म सखी सों नायिका पूछति है— सो हकीकति कोई औरि स्त्री औरि स्त्री सों कहति है, नायिका ने पूछौ। हे सखि मीत हमारो विदेस तें आयौ,? तब सखी कहति है, काहू ने तौ पुकारि कैं कह्यौ है, यह बात सुनिकैं नायिका हुलसी औ बिलसी. तब सखी ताकी देखि हँसी, दोऊ नायिका औ सखी दुहुनि निहारि आपुस में देखि कैं, दोऊ दुहुनि आपुस में प्रसिद्ध है। 'रुचि सों दुहुनि दुहूनि के चूमे चारु कपोल' इहां को दोहा है, कोई कहत है, हुलसी छाती बिहसी हँसो आँखें दोऊ दुहुनि कुचनि कौं निहारि कैं. प्रथम मिलन हमारो होइगो। किंवा. नायिका पास कोई ऊपरी सखी बैठी थी, तब काहू ने कह्यौ मीत आयौ, सो सुनि नायिका हुलसी बिहँसी, तब जाहि सखी सों छपावै थी सो हँसी. आजु तुमारो प्रीति

कैं । पिय की पाती तिया नायिका लहि कैं बाँचति है, फेरि समेटि धरति है । स्वभावोक्तिअलङ्कार । कारकदीपक भी जानिये ॥

मृगनैनी दृग के फरक उर उछाह तन फूल ।
बिनहीं पिय आगम उमगि पलटन लगी दुकूल ५४३

पिय आगम वर्नन—मृगनैनी इति । सखी सों सखी । मृगनैनी नायिका दृग के फरकै उर में उछाह है, तन शरीर किंवा कुच सो फूलै, बिनाही पिय के आगम उमगि कैं, दुकूल वस्त्र पलटि फेरिबे लगी, मृग के नैन से नैन है जाकै मृग के नैन उपमान सो नहीं है बाचक नहीं है साधारन धर्म वहीं है, केवल नैन उपमेय है । लुप्तोपमालङ्कार । अनुमानालङ्कार भी है ।

"जहँ अदृष्ट कौं हेतु सौं जानि लेत अनुमान" ॥ ५४३ ॥

वाम बाहु फरकत मिलै जौ हरि जीवनमूर ।
तौ तोहीं सौं भेटिहौं राखि दाहिनी दूर ॥५४४॥

वाम बाहु इति । आगमिष्यतपतिका की उक्ति बांईं बाहु सौं। हे बाम बाहु जो तोहि फरकत कै पिय जीवन कौ मूर मूल मिलै तो पहिले तोही सों भेटौंगी, दाहिनी बांह कौं दूरि राखि कैं, जो मिलै तौ तोही सों भेटौं । सम्भावनाअलङ्कार ॥ ५४४ ॥

कियो सयानी सखिन सौं नहि सयान यह भूल ।
दुरै दुराई फूल लौं क्यों पिय आगम फूल ॥५४५॥

कियौ इति । परकीया नायिका को पति आयौ है । सखिन सौं नायिका ने नहीं कह्यौ सखी जानि गई नायिका सौं कहति हौं, तुम तो सखिन सों सयानी चतुराई कियो नहीं कह्यौ, च-

तुर के आगे चतुराई सुज्ञानता नहीं है भूलि है, पिय के आगम सों जो फूल है फूलनि है सो फूल की सी तरह दुराई छपाई क्योंकरिकै छपै, फूल छपावै तो सुवास नहीं छपै। किंवा सयानी सखिन सों तुम सयान कियो एक सयान कौ अध्याहार करि ऐसो सयान नहीं है यह भूल है पिय आगम फूल उपमेय। उपमालङ्कार। फूलि रही है, यह हेतु तासों पिय को आगमन को निश्चय करनो। अनुमानालङ्कार—

"जहँ अदृष्ट को हेतु सों जानि लेत अनुमान" ॥ ५४५ ॥

आयो मीत विदेस तें काहू कह्यौ पुकारि ।
सुनि हुलसी बिहँसी हँसी दोऊ दुहुनि निहारि ५४६

आयो मीत इति। पिय नर्म सखी सों नायिका पूछति है— मो हकीकति कोई औरि स्त्री औरि स्त्री सों कहति है, नायिका ने पूछ्यौ। हे सखि मीत हमारो बिदेस तें आयो,? तब सखी कहति है, काहू ने तौ पुकारि कैं कह्यो है, यह बात सुनिकैं नायिका हुलसी औ बिलसी, तब सखी राजी देखि हँसी, दोऊ नायिका औ सखी दुहुनि निहारि आपुस में देखि कैं, दोऊ दुहुनि आपुस में प्रसिद्ध है। 'रुचि सों दुहुनि दुहूनि के चूमे चारु कपोल' इहां को दोहा है, कोई कहत है, हुलसी छाती बिहसी हँसी आँखें दोऊ दुहुनि कुचनि कौं निहारि कैं, प्रथम मिलन हमारो होइगो। किंवा, नायिका पास कोई ऊपरी सखी बैठी थी, तब काहू ने कह्यो मीत आयो, सो सुनि नायिका हुलसी बिहँसी, तब जाहि सखी सों छपावै थी सो हँसी, आजु तुमारी प्रीति

जानी परस्पर, निहारि कैं यह बात कोई सौं कोई कहति है। किंवा, दोय परकीया हैं, आपुस में प्रीति है, तहां काहू ने कह्यौ हैं, दोउ हुलसी दोउ बिहँसी दोऊ हँसी। स्वभावोक्तिअलङ्कार॥

मलिन देह वेई बसन मलिन विरह के रूप।
पिय आगम औरै चढ़ी आनन ओप अनूप ॥५४७॥

मलिन इति। सखी की उक्ति सखी सों—मलिन देह है, वेई बसन वेही वस्त्र हैं, मलिन विरह को रूप है, पिय को आगम आवनो सुनि, आनन मुख पै औरही ओप चमत्कार अनूप। और दिन और आजु और। भेदकातिशयोक्ति अलङ्कार—

"औरैं पद जह दीजिये अधिकाई के हेत॥ ५४७॥

कहि पठई जियभावती पिय आवन की बात।
फूली आँगन में फिरै आँग न आँग समात ॥५४८॥

कहि पठई इति। सखी सों सखी—पिय ने बिदेस तें, जिय भावती जीव कों भावै ऐसी आइवे की बात कहि पठाई, नायिका सुनिकैं आँगन में फूली फिरति है, है, आंग में आंग नहीं समात है, अथवा अँगिया अंग में नहीं समातो ऐसो भी लोग कहत हैं, लोकोक्तिअलङ्कार॥ ५४८॥

रहे बरोठे में मिलत पिय प्राननि के ईसु।
आवत आवत की भई बिधि की घरी घरी सु ॥५४९॥

रहे इति। सखी सों सखीवचन—दरवाजा तें बाहिर की ठौर सो बरोठा, प्रिय जो हैं प्राननि के ईस ईश्वर, सो बरोठे में हितुनि सों मिलें थे, आवत आवत की जो घरी है, अब आवत

हैं. अब आवत है, सु को अर्थ ह्रस्व करि पढ्यौ है. सो घरी अति प्रेम की आतुरता तें विधि को विधाता की घरी भई, अति वड़ी भई, विधि की घरी सी वड़ी भई, घरी या अर्थ में। लुप्तोपमा॥

जदपि तेज रोहाल बल पलको लगी न बार ।
तौ ग्वैड़ो घर को भयो पैड़ो कोस हजार ॥ ५५० ॥

यदपि इति। सखी सों सखी—जदपि तेज है, रोहाल सीघ्र चाल चलै है, बलयुक्त है, रवहाल सों अश्व जानिये। एक पलक बार विलम्ब नहीं लागी, तौभी घर कौ ग्वैड़े नजीक की भूमि हजार कोस कौ पैंड़ौ भयौ, औत्सुकता तें आगतपतिका नायिका जानियै, हजार कोस कौ पथ सो वड़ौ भयौ। लुप्तोपमालङ्कार। किंवा निदर्शनालङ्कार भी है॥ ५५०॥

बिछुरे जिये सँकोच यह बोलत बनै न बैन ।
दोऊ दौरि लगे हिये किये निचौंहे नैन ॥ ५५१ ॥

बिछुरि मिलन—बिछुरें इति। सखी सों सखी। बिछुरे सौं जिये में संकोच है तातें बैन वचन बोलत नहीं बनै, लाज सौं नीचे नैन किये दोऊ दौरि कैं हिय सौं लगे. बैन नहीं बोलत हैं याकौं दृढ़ कियौ, बिछुरे जिये सों। किवा, निचौंहैं नैन कारनो दृढ़ कियौ। काव्यलिङ्गअलङ्कार॥ ५५१॥

ज्यों ज्यों पावक लपट सी तिय हिय सों लपटाति ।
त्यों त्यों छुई गुलाब सों छतियां अतिसियराति॥५५२॥

ज्यौंज्यौं इति। सखी सों सखी—ज्यौंज्यौं जैसें जैसें पावक आगि की लपट ज्वाला सी, तिय हिय सौं लपटाति है, त्यौंत्यौं

तैसें तैसें गुलाब सों छुही सींची है मानो ऐसें छाती सियराति है सीतल होति है, पावकलपट सो उपमा कुही है, मानो जानिये। लुप्तोत्प्रेक्षा। पावक पलट सी नायिका सों सीतलता विरुद्ध तें कार्य्य। विभावनालंकार ॥ ५५२ ॥

पीठि दियेही नेकु मुरि कर घूँघट पट टारि।
भरि गुलाल की मूठि सों गई मूठि सी मारि॥५५३॥

फागु वर्नन—पीठि दिये इति। नायक की उक्ति सखी सों। पीठ दियेही नेकु थोरो मुरिकैं फिरिकैं, कर सों घूंघटपट टारिकैं, भरी है जो गुलाब की मूठी तासौं मूठि सी मारि गई, जैसें कोई मूठि चलावे है वाहि देखें बिना काल नहीं परत है वसीकरन है, मूठि मार गई है मानो। अनुक्तास्पदावस्तूत्प्रेक्षालंकार ॥५५३॥

दियो जु पिय लखि चखन में खेलत फागु खियाल।
बाढ़तहूँ अति पीर सु न काढ़त बनत गुलाल॥५५४॥

दियो जु इति। सखी सों सखीवचन—फागु को ख्याल खिलत हैं, अति को अन्वय लखि सों, पिय ने प्रिया कों अति लखि कैं, किंवा प्रिया ने पिय कों अति लखि कैं गुलाल दियो गुलाल डार्यो चखनि नैननि में, बाढ़तहू पीर पीड़ा बढ़े है देखिवे को बाधा भयो यह पीड़ा, सु को अर्थ सो, सो गुलाल प्रिय के हाथ को है, किंवा प्रिया के हाथ को, हाथ के स्पर्श को प्रीति सों काढ़त नहीं बनत है। किंवा अति पीड़ा बढ़े है, तोभी गुलाल काढत नहीं बनत है, करके स्पर्श की प्रीति की अधिकाई, किंवा पिय ने नायिका कों लखिकैं फागु खियाल में गुलाल दियो डार्यो

काहे के लिये चखन मैं. याकी चख नेत्र बैन मैं लच खाँहि, तातें सोभा बिशेष होय। "लोचन लचावै चित पी को ललचावै भरी देखन की चावै गारि गावै सुर तान पैं"। किंवा, नायक कोई और जो है, अति प्यारी तासों फाग खियाल खिलत है, जामौं थोरो प्यार है ताने यह लखिकैं देखिकैं नायक के चखनि में गुलाल दियौ, तब जा अति प्यारी थी सो या बात सों थाकौं अति पीड़ा बाढ़ै है, ईर्षा सों। किंवा, नायक हमारी ओर देखे यौ ताकौ अन्तर भयौ, किंवा नायक कौं दुख भयौ है तासों, पै या नायिका कौं नायक की नेत्र पर गुलाल काढ़त नहीं बनत है परकीया है. पीड़ा बाढ़िवो गुलाल काढिवे कौ कारन है, तौभी गुलाल काढ़िवो कार्य्य नहीं भयौ। बिशेषोक्तिअलंकार है।

"विशेषोक्ति जो हेतु सौं कारज उपजै नाहिं" ॥ ५५४ ॥

छुटत मुठी सँगही छुटै लोकलाज कुलचाल।
लगे दुहुनि एक बेरही चलि चित नैन गुलाल॥५५५॥

छुटत इति। सखी सों सखी—गुलाल की मूठी छुटत के सोभा विशेष सौं संगही छूटत है, लोक की लाज औ कुल की चाल रीति परपुरुष की ओर नहीं देखनो, दम्पति को एकही बेर लागे है। चलिकै जायकैं चित यौ नैन औ गुलाल। सहोक्तिअलंकार—"सो सहोक्ति जहँ साथही बरनै रस सरसाय" ॥ ५५५ ॥

जु ज्यौं उझकि झँपति वदन झुकति विहँसि सतरात।
तु त्यौं गुलाल झुठीमुठी झझकावत पिय जात॥५५६॥

जु ज्यौं उझकि इति। सखी सों सखी—ज्योंज्यौं उझकि कैं

वदन मुख कौं झाँपति है ढाँपति है, झुकै है विहसति है सतराति है, नायक कौं चेष्टा आछो लागो तासौं, त्यौंत्यौं गुलाल कौ झूठी मूठी सों पिय वाकौं भभकावत जात है, नायक छल करि इष्ट वाको चेष्टा ताकौं देखै है। पर्य्यायोक्तिअलंकार। स्वभावोक्ति भी जानिये ॥ ५५६ ॥

रस भिजये दोऊ दुहुनि तउ ठिक रहे टरै न ।
छवि सों छिरकत प्रेम रँग भरि पिचकारी नैन॥५५७॥

रस भिजये इति । सखी सों सखीवाक्य—रस अनुराग सौं किंवा गुलाब केसरि के जल सों पहिले भिजाये, अति अनुरागयुक्त किये दोउ नायक नायिका ने परस्पर दुहुन कौं अर्थ, तौभी ठीक रहै है टरै है नहीं, धृतिसंचारी कंप सात्विक नहीं होत है, छवि सों अदाय विशेष करि प्रेम सौं है, रंग तासौं छिरकत हैं, पिचिकारी सो नैन हैं ताकौं भरिकैं। रूपक अलंकार। उपमानरु उपमेय सौं एक जहां करै तहां रूपक ॥ ५५७ ॥

गिरे कम्प कछु कछु रहे कर पसीजि लपटाय ।
लीनी मूँठि गुलाल भरि छुटत झुठी ह्वै जाय ॥५५८॥

गिरे कंप इति। सखी सों सखी—कम्प सात्विक होय तासौं कछु गिरि परै है, कछू रहै सो कर मैं प्रस्वेद सात्विक होय तासौं लपटाय जात है, गुलाल की मूठी लीनी है भरि कैं, सो छूटत के झूठी होय जात हैं, डारत मूठि ऐसो भी पाठ है, गिरे इत्यादि करि झूठी होती कै समर्थन कियो। काव्यलिंग। ५५८ ॥

ज्यों ज्यों पट झटकति हठति हँसति नचावति नैन।
त्यों त्यों निपट उदारहू फगुआ देत बनै न ॥५५९॥

ज्योंज्यों इति। सखी सों सखी—नायक के पट कों नायिका ज्योंज्यों झटकति है हठ करति है, हँसै है नैन नचावति है, त्यों त्यों निपट उदार है, पै वाकी छबि देखिबे के लिये फगुवा देत बनै नहीं, किम्वा फगुआ देत में न यह जो शब्द है सो बनै है नहीं देहिंगे, विशेषोक्ति, उदारता कारन ते दान कार्ज नहीं भयो, किम्वा एक बेर बहुत भाव भरा पट झट कियो आदि यातें समुच्चय ॥ ५५९ ॥

झुकि रसाल सौरभसने मधुर माधुरी गन्ध।
ठौर ठौर झूमत झपत भौंर झौंर मधुअन्ध ॥५६०॥

वसन्त वर्णन—झुकि इति। वसन्त वर्णन में कविवचन, किम्वा सखीउद्दीपनभाव कहि मान छोड़ावे है। किम्वा सखी प्रथममिलन करायो चाहति है, मंजर के भार सौं रसाल आम झुकि रहे हैं, फेरि सौरभ सुगन्ध सौं सने हैं मिले हैं मधुर मनोहर माधुरी माधवी बासन्ती यह भी नाम है, ताकी गन्ध है ठौर ठौर मैं झूमत है फूलनि सौं लगि जात है झपत है आनि परै है मधु फूल को रस श्लेष में मदिरा तासौं अंध है गूंजै है भौंर ताको भौर शब्द झनत्कार है भौंरत यह पाठ है तहां झनत्कार करत जानिये। स्वभावोक्तिअलङ्कार ॥ ५६० ॥

यह वसन्त न खरी गरम अरी न सीतल वात।
कहि क्यों प्रगटे देखिये पुलक पसीजे गात ॥५६१॥

यह बसन्त द्रुति । लक्षिता सों सखीवचन, किंवा अन्यसम्भोगदुःखिता को वचन सखी सों, किंवा खण्डिता कोवचन— अरी सखी यह सम्बोधन देकें नायक कों सुनावै है, यह बसन्त ऋतु है, अरी सखी नहीं खरी अति गरमी है नहीं, अति सीतल बयारि है तूं कहूं क्यों प्रगट देखिवे है, गात अंग सो पसीजे है तामें पुलक देखिये है । किंवा, खण्डिता कहति है हैं सखि तूं कहौ गात में प्रगट पुलक देखियतु है, जानति हौं काह्नु सौं पसीजि रही भये । किंवा मान छोड़ायवे के लिये नायक सखी वेष धरि नायका को स्पर्श कियो पुलक देखि, नायिकावचन— कारन विना प्रस्वेद भयो । विभावना—

"होति छभांति विभावना कारन विनुही काज" ॥ ५६१ ॥

फिरि घर को नूतन पथिक चले चकित चित भागि।
फूल्यो देखि पलास वन समुहीं समुझि दवागि॥५६२॥

फिरि द्रुति । कवि की वक्ति—फिरिकैं घर कों नूतन नये पथिक चित्त में चकित होय आश्चर्य मानि घरकौं भागि कें चले, पलास कौ वन फूल्यौ देखिकें समुहैं साम्हने दावागिनि समुझि कैं, औ यात्रा में आगि को दरसन निषेध भी है, किंवा नायक परदेस चल्यौ है तब नायिका, किंवा सखी कहति है, फिरिको अर्थ फिरौ तुम परदेस मति जाहु, औरि वही अर्थ भ्रम है फूल में आगि को । भ्रान्तिमानअलंकार ॥ ५६२ ॥

अन्त मरैंगे चालि जरैं चढ़ि पलास की डार ।
फिरि न मरैं मिलिहैं अली ये निरधूम अँगार॥५६३॥

अन्त मरेंगे इति। नायिका प्रलाप करै है सखी सों—अन्त आखिर मरेंगे, चलौ जरैं पलास ढाक ताकी डार मैं चढ़ि कैं, हे अली फेरि मरें पर नहीं मिलेंगे, ए निरधूम अँगार। बहुत पोथी में यह दोहा नहीं है, फूल में अंगार को भ्रम। भ्रान्तिमान॥५६३॥

नांहिन ये पावक प्रबल लुवैं चलत चहुँपास ।
मानहुं विरह वसन्त के ग्रीषम लेत उसास ॥५६४॥

अथ ग्रीषमवर्नन—नाहिन इति। बिरहिनी की उक्ति, किंवा कवि की। पावक आगि तातैं प्रवल जोरावर लुयें झर्झरानिल पूरब में लूचि कहत हैं, नाहिन को अर्थ नहीं है, चहुंपास चहुं-ओर, वसन्त के विरह सौं ग्रीषम नै गरम उसास लीनो है मानो, क्रिया आगे मानौ को अन्वय है। अनुक्तास्पदवस्तुत्प्रेचा। लुयें वस्तु विषैं गरम उसास वस्तु की सम्भावना यातैं। उक्तास्पदावस्तूत्प्रेचा॥ ५६४॥

कहलाने एकत वसत अहि मयूर मृग वाघ ।
जगत तपोवन सौं कियो दीरघदाघ निदाघ ॥५६५॥

कहलाने इति। दोपहरी में नायिका कौं अभिसार करावत कै सखी कहति है—कहलाने दुखी होय कैं, विरोधी परस्पर, एकत्र वसत हैं, अहि सर्प मयूर मृग वाघ, जगत कौं तपोवन सो कियौ, तपस्या के बन में कोऊ काहू कौं मारै नहीं, दीरघ है दाघ दाह जामै ऐसो निदाघ ग्रीषम। तपोवन उपमान, जगत उपमेय, सो वाचक, बिरोधी को एकत्र वसिबो धर्म। उपमालङ्कार॥ ५६५॥

बैठि रही अति सघन बन पैठि सदन तन मांह ।
निरखि दुपहरी जेठ की छाहौं चाहत छांह॥५६६॥

बैठि रही इति । कविवचन—अति सघन बन में बैठि रही है दोपहर में बाहिर छाया नहीं रहति है, सदन घर में, तन में सरीर में बैठि रही है, दुपहरी जेठ की देखि कैं छाया भी छाया कौं चाहति है, औरि की क्या बात? अद्भुत बर्नन किंवा झूठ तें अत्युक्तिअलङ्कार ॥ ५६६ ॥

तिय तरसौंहैं मन किये करि सरसौंहैं नेह ।
घर परसौंहे ह्वै रहे झर बरसौंहे मेह ॥५६७॥

अथ बर्षाऋतु बर्नन—तिय इति । मानी कौं राजी करिकैं सखी नायक सौं कहति है । तिय ने तरसौंहैं, चाह भयौ चित कियौ । तुमकौं तरसैं हैं, याकौ अर्थ चाहैं हैं । नेह कौं सरसौंहैं करिकैं अधिक करिकैं, झरि लगाय कैं बरिसौंहैं, मेघ है बरिसनवालौ है, तुम पराये घर के सौंहैं साम्हने होय रहे हौ, औरि नायिका पास जाने कौं चाहत हौ । छेकानुप्रास है, वही अक्षर समता पद में परी है, बरिसौंहैं, सरिसौंहैं ॥ ५६७ ॥

पावस सघन अँधारि में रह्यौ भेद नहिं आन ।
रात द्यौस जान्यौ परत लखि चकई चकवान॥५६८॥

पावस इति । सखीवचन नायक सौं—पावस बर्षा समै घन मेघन के अन्धकार में औरि भेद नहीं रह्यौ है, चकई चकवा कौं लखि कैं राति दिवस जान्यौ परै है, दिनमें मिले रहत हैं, राति

में बिछुरत हैं। किंवा हे सखि तूं लखि जान, कि चकई चकवा कौं राति द्यौस नहीं जान्यौ परत है, किंवा चकवानि इकारान्त भी पाठ है, चकई औ चक्र नाम चकवा को है, ताकी बानी शब्द सौं राति दिन जान्यौ जात है, या बात कौं तूं लखि नाम जान, राति में कूकत है। काव्यलिंग अलङ्कार ॥ ५६८ ॥

छिनक चलति ठठकति छिनक भुज प्रीतम गर डारि।
चढ़ी अटा देखति घटा विज्जुछटा सी नारि ॥५६९॥

छिनक इति। सखी सौं सखीवाक्य—छिनक चलति है, एक छन ठठकि रहति है, भुज प्रीतम के गर में डारि कैं, अटारी पर चढ़ी घटा देखति है, बिजुरी को छटा चाकचक्य सी जो नारि है, किंवा औरि की हकीकति कहि सखी मान छोड़ावति है। उपमाधर्मलुप्तालङ्कार ॥ ५६९ ॥

पावकझर तें मेहझर दाहक दुसह बिशेष।
दहै देह वाके परस याहि दृगनिहीं देख ॥५७०॥

पावक इति। बिरही की उक्ति—पावक आगि ताकी झर ज्वाला तातें मेह की झर वृष्टि अधिक है, बिशेष दाहक है, औ दुसह है सह्यौ नहीं जात है, वाके पावक के झर ज्वाला के परस सौं छूये सौं देह दहत है, याहि मेघझर कौं तो आँखिनहीं सौं देखि कैं देह बरत है, दाहक बिशेष है या बात कौं दृढ़ करै है। यातें काव्यलिंगअलङ्कार। व्यतिरेक भी है ॥ ५७० ॥

कुढँग कोप तजि रँगरली करति जुवति जग जोय।
पावस बात न गूढ़ यह बूढ़नहू रँग होय ॥५७१॥

[illegible] मानिनी सौं—है कुढंग तो
[illegible] ताकौं तजिकैं रंग अ
[illegible] कै संग करति है ता
[illegible] यह बात गूढ़ गुप्त नहीं,
[illegible] सौ विष रंग अनुराग
[illegible] है, ताकौ भी रंग
[illegible] रसोल्लास।

[illegible]

गाँठि सन की मूंज की सौ घुटि जाति है घुर जाति है गाढ़ी होय जाति है, मान की जो गाँठि है दृढ़ता सो छूटि जात है। हठीली हठ नहीं करति है ताकौं पुष्ट कियौ पावस रितु उद्दीपन मैं। काव्यलिंग ॥ ५७३ ॥

वेई चिरजीवी अमर निधरक फिरौ कहाय ।
छिन बिछुरैं जिनकी नहीं पावस आयु सिराय ॥५७४॥

वेई इति। विरही की उक्ति—वेई वेही लोग चिरजीवी कहाय कैं फिरौ, बहुत दिन जीवै सो चिरजीवी, कबही नहीं मरै सो अमर अमर कहाय कैं निधरक निसंक फिरौ, छन एक बिछुरे सों जिनकी पावस वर्षा रितु मैं आयुर्बल नहीं सिराय नहीं घटै, पावस पहिलैं नायिका ने नायक कौं पाती लिखी है, कोई ऐसैं भी कहत है, कोई कहत है, गमिष्यत्पतिका की उक्ति है। अत्युक्तिअलंकार है ॥ ५७४ ॥

अब तजि नाव उपाव कौ आयो सावन मास ।
खेल न रहियो खेम सौं कैम कुसुम की वास ॥५७५॥

अब तजि इति। परकीया नायिका है रूठी है, सखी नायक सों कहति है, मैं वाकूं कुंज मैं बहकाय कैं ले आवति हैं। तुम मिलौ, किंवा तुम सखी कौ भेष करि चलौ तहां नायक को वचन। अब तूं मिलायवे के उपाय को नाम तजि दै, कामोद्दीपक सावन मास आयौ। वह खेलनि सौं आपनौ मन बहरावै खेल जो है सो खेम सौं कल्यान सौं नहीं रह्यौ, कैम कदंब के कुसुम की वास सौं, कदंब कुसुम को सुवास ने औरि सब क्रीड़ा

कुढंग इति । सखी की उक्ति मानिनी सौं—हे कुढंग तोमें गुन नहीं आछे, किंवा कुढंग जोहै कोप ताकों तजिकें रंग अनुराग सौं जगत में रली रमन क्रिड़ा नायक के संग करति है ताकौ तूं जोय देखौ, पावस वर्षा ऋतु में यह वात गूढ़ गुप्त नहीं, बूढ़नहू कौं बुढनिहू कौं रंग होत है, नवीन स्त्री विषं रंग अनुराग होत है, वूढ़ बीरवधूटी इन्द्रवधू भी कहत हैं, ताकौ भी रंग लाली होति है । श्लेष वूढ़ में औ अर्थान्तन्यास ।

"कह्यौ अर्थ जहँ पोखिये औरि अर्थ सौं मोत ।
सो अर्थान्तरन्यास है बुधजन करत प्रतीत" ॥ ५७१ ॥

धुरवा होंहिं न अलि इहै धुंआँ धरनि चहुँकोद ।
जारत आवत जगत कौं पावस प्रथम पयोद ॥५७२॥

धुरवा इति । विरहिनी की उक्ति सखी सौं—हे अलि हे सखि धुरवा मेघ नहीं यह है चहुंकोद चहुंओर धरनी भूमि ताको धुवाँ है, जगत कौं जारत आवत है, पावस वर्षा ऋतु को प्रथम दिन कौ पयोद मेघ, जरि सौं उठै मेघ सो धुरवा ताको धूवाँ को आरोप करि छपायो । शुद्धापह्नुतिअलङ्कार—

"धरम दुरे आरोप तें सुद्धापह्नुति जान" ॥ ५७२ ॥

हठ न हठीली करि सकै यह पावस ऋतु पाय ।
आँन गाँठ घुटि जाति ज्यों माँन गाँठ छुटि जाय ॥

हठ न इति । मानिनी सौं सखीवचन—हठीली जे है नायिका सो हठ नहीं करि सकति है नायक सौं, यह नवजोवन है औ पावस वर्षा रितु है ताकौं पाय कें, वर्षा में ज्यों जैसें आन

फिरि सुधि दै सुधि द्याय प्यौ यह निरदई निरास।
नई नई बहुरौं दई दई उसास उसास ॥५७८॥

फिरि सुधि इति । मूर्छा मैं नायिका थी, सखिनि ने मूर्छा छोड़ाई तब नायिका कहति है, फेरि हमैं सुधि चेतन देकैं मूर्छा छोडाय कै, सुधि द्याय प्यौ नायक कौं सुधि यादि दिवाय कैं, बहुरौ फेरि, हे दैव नई नई उसास ऊपर कौं सास सो उसास देइ उकसाय दई फेरि हमैं उपरदमी चलौ, कैसो सखी निरदै है पूरब मैं निरास गाली है, लुगाई कौं लुगाई निरासी गाली देति हैं, किंवा यह जो पिय निरदई ताकी सुधि दिवाय कैं, मैं कैसी हौं निरास हौं जीवन की आसा नहीं है, औरि वही अर्थ। किंवा यह जो निरदयतारहित है, दैव विधाताताही ने हमैं सुधि चैतन्य देकें फेरि पिव की सुधि द्याय कै मैं निरास हौं जीवन की आसा नहीं है, औरि वही अर्थ। निरदई सखी को विधाता को नायक को विशेषन साभिप्राय है, जाकौं दया न होय सो ऐसो करै। परिकरालङ्कार—

"है परिकर आसै लिये जहां विशेषन होय" ॥ ५७८ ॥

घनघेरा छुटिगौ हरषि चली चहुँदिसि राह।
कियो सुचैनै आय जग सरद सूर नरनाह ॥५७९॥

अथ सरद ऋतु वर्नन—घनघेरा इति । कवि की उक्ति—सरद जो है सो सूर नरनाह राजा है, सो आयकैं जगत कौं सुचैनो सुन्दर सुख कियो दियो जानिये। घन मेघ छूटि गयौ, औ घेरा छूटि गयौ, जहाँ राजा आछो नहीं तहाँ प्रजा पर घेरा शत्रु

उठाय दीनी। एक नायक सौं बिहारही रह्यौ, खेल खेम सौं नहीं रह्यौ। इहां लोकोक्तिअलंकार है ॥ ५७५ ॥

बामा भामा कामिनी कहि बोलौ प्रानेस ।
प्यारी कहत लजात नहिं पावस चलत बिदेस ५७६

बामा भामा इति। गच्छत्पतिका की उक्ति नायक सौं—हे प्रानेस कान्त, हमैं बामा भामा कामिनी कहिकै बोलो, बामा को अर्थ दुष्ट भामा को क्रोधी, प्यारी कहत कै लजात नहीं हौ? पावस वर्षा रितु में बिदेस चलत कै? बामा भामा प्यारी बिशेषन नायिका बिशेष्य। परिकरअलङ्कार, बामा भामा बिशेष्य लीजिये तो परिकराङ्कुर—'साभिप्राय बिशेष्य जहँ परिकरअङ्कुर नाम॥५७६॥

उठि ठकठक इतनो कहा पावस के अभिसार ।
देखि परी यौं जानिवी दामिनि घन अँधियार॥५७७॥

उठि इति। सखीवचन नायिका सों—उठि उठौ चलौ ठक ठक बिलम्ब, यह भूषन पहिरौं यह वस्त्र पहिरौं या तरह को बिलम्ब कहा क्यौं? पावस वर्षा काल कै, अभिसार में नायक पास जाने मैं, देखि परी तूं काहू कौं देखिवे में आई तौ यौं जानिवी यौं जानैगे दामिनी बीजुरी है घन मेघ कै अँधियार मैं दामिनी है मानो, तौ गम्योत्प्रेक्षा। किंवा भ्रान्ति, किंवा नायक नजीक प्रस्थानो कियौ है तब सखी अभिसार करावति है, देखि परी देखी किनहूं तौ परी अप्सरा जानैंगे, या तरह लगाये प्रसंग मिलै है औ पावस के प्रसंग करि लिख्यौ ॥ ५७७ ॥

फिरि सुधि दै सुधि द्याय प्यौं यह निरदई निरास।
नई नई बहुरौं दई दई उसास उसास ॥५७८॥

फिरि सुधि इति। मूर्छा मैं नायिका थी. सखिनि ने मूर्छा छोड़ाई तब नायिका कहति है, फेरि हमैं सुधि चेतन देकैं मूर्छा छोडाय कै, सुधि द्याय प्यौ नायक कौं सुधि यादि दिखाय कैं, बहुरौ फेरि, हे दैव नई नई उसास ऊपर कौं सास सो उसास देइ उकसाय दई फेरि हमैं उपरदमो चलो, कैसो सखी निरदै है पूरब मैं निरास गालो है, लुगाई कौं लुगाई निरासी गालो देति हैं, किंवा यह जो पिय निरदई ताकी सुधि दिखाय कैं, मैं कैसी हौं निरास हौं जीवन की आसा नहीं है, औरि वहो अर्थ। किंवा यह जो निरदयतारहित है, दैव विधाताताही ने हमैं सुधि चैतन्य देकें फेरि पिव की सुधि द्याय कै मैं निरास हौं जीवन की आसा नहीं है, औरि वही अर्थ। निरदई सखी को विधाता को नायक को विशेषन साभिप्राय है, जाकौं दया न होय सो ऐसी करै। परिकरालङ्कार—

"है परिकर आसै लिये जहां विशेषन होय" ॥ ५७८॥

घनघेरा छुटिगौ हरषि चली चहुँदिसि राह।
कियो सुचैनै आय जग सरद सूर नरनाह ॥५७९॥

अथ सरद ऋतु वर्नन—घनघेरा इति। कवि की उक्ति— सरद जो है सो सूर नरनाह राजा है, सो आयकैं जगत कौं सुचैनो सुन्दर सुख कियो दियो जानिये। घन मेघ छूटि गयो, औ घेरा छूटि गयो, जहाँ राजा आछो नहीं तहाँ प्रजा पर घेरा शत्रु

को परै है, आछे राजा के आये छूटि जात है । किंवा मेघ को घेरा छूटि गयौ चहूँदिसा मैं राह चलो, राह का चलनो नहीं, संभवे है तहां लछन लछना करि राहगीर लिये, सरद सो नरनाह राजा । रूपकअलंकार ॥ ५७९ ॥

ज्यौं ज्यौं बढ़ति विभावरी त्यौं त्यौं बढ़त अनंत ।
ओक ओक सब लोकसुख कोक सोक हेमंत ॥५८०॥

हिमन्त वर्नन—ज्यौं ज्यौं इति । मानिनी सौं सखीवचन—डर दिखाय सुख सुनाय मान छोड़ावति है, ज्यौं ज्यौं जैसे जैसे बिभावरी राति बढ़ति है, त्यौं त्यौं तैसे तैसे इतनी वस्तु अनन्त बढ़े है, सब लोक के ओक ओक में घर घर में सुख बढ़े है, कोक चकवा ताकौं सोक बाढ़े है, अग्रहन पौष की राति बड़ी होति है, यातें सुख बढ़े है, औ सोक बढ़े है, बढ़त बढ़त की आवृत्ति है यातें आवृत्तिदीपक । बढ़त है यह क्रिया, सुख सों सोक सों लागै है, यातैं दीपकअलंकार है ॥ ५८० ॥

कियौ सबै जग कामबस जीते जिते अजेय ।
कुसुमसरहि सर धनुष कर अगहन गहन न देह ॥

कियौ इति । सखीवचन मानिनी सौं—ऐसो अग्रहन में तूं मान करै है, सब जग कौं काम के बस कियो, जितने अजेय जोगी मुनि ताकौं जीते जो मन साभी नहि जीते जाहि कुसुमसर काम ताकौं सर औ धनुष कर में हाथ में अग्रहन गहनै लेनै नहीं देत है, यह तुमारो सेवक हमहीं जीति लियौ. काम कौं सर धनुष नहीं गहिबे देय है, याकौ समर्थित कियौ. काव्यलिंग।
'काव्यलिंग जहँ युक्ति सो अर्थ समर्थन होय' ॥ ५८१ ॥

मिलि विहरत बिछुरत मरत दम्पति अति रसलीन।
नूतन विधि हेमन्त ऋतु जगत जुराफा कीन ५८२॥

मिलि इति। सखीवचन मानिनी सों—जुराफा पच्छी ईरान तुरान की ओर होत है. एक एक ओर पाँख होति है, एक ओर एक कौं अंकुस होत है, एक ओर एक कौ कुलावा होति है। अंकुस कुलावा में डारिकैं दोऊ उड़त हैं, मिलिकैं विहरत उड़त हैं चरत हैं बिछुरे सों मरत हैं। दम्पति स्त्री पुरुष कैसे हैं, अति रस मैं शृङ्गार में लीन हैं, मग्न हैं, हेमन्त ऋतु की नूतन नई विधि क्रिया है जगत कौं जुराफा कियौ है। किंवा हेमन्त रितु विषें नयी विधि ब्रह्मा हैं, किंवा हेमन्त रितुही नयो विधि है, जानै जगत कौं जुराफा कियौ है। रूपक। जुराफा सौं, औरि पद में श्लेष है ॥ ५८२ ॥

आवत जात न जानिये तेजहि तजि सिअरान ।
घरहिं जवांई लौं घट्यौ खरौ पूस दिनमान ॥५८३॥

आवत इति। सखीवचन मानिनी सों—दिन आवत जाति नहीं जानिये। जवाई दमाद को नाम, जवाई भी आवत जात नहीं जानिये, स्त्री कौं मान भी आवत जात छुटत नहीं जानिये, दिन भी आवत जात नहीं जानिये है, जवाई ने भी तेज कौं तजिकैं सियरानि लच्छना सों गरिवौलिनी, स्त्री भी तेज तजि सुसीलता लीनी, दिन ने भी तेजहि तजिकैं सीतलता लीनी। घर जवाई घर दमाद को सो लेखो घट्यौ पूस मास में खरौ अति दिन औ मान आदर औ मान स्त्री को रूठनो। पूर्णोपमालंकार श्लेष भी है ॥ ५८३ ॥

लगत सुभग सीतल किरन निसि सुख दिन अवगाहि।
माह ससी भ्रम सूर त्यौं रही चकोरी चाहि ॥५८४॥

सिसिर ऋतु वर्णन—लगत इति। पूर्वानुराग में नायिका कौं सखी नायक की ओर दिखावै है। अपूर्व बात कहिकैं सुभग सुन्दर सीतल किरन लागति है निसा राति कौ सुख दिन मैं अवगाहि कैं बिचारि कैं, प्राय कैं यह अर्थ। माघ में ससि चन्द्रमा के भ्रम तें सूर त्यौं सूर्य्य की ओर चकोरी चाहि रही देखि रही, भ्रान्ति तौ दोहाई मैं कह्यौ, माह जानि ससि ऐसौ पाठ होतो तौ होतौ इहां शब्द वाच्य भयौ, सूर्य्य की ओर चाहि रही याको समर्थन कियौ। काव्यलिंग ॥ ५८४ ॥

तपनतेज तापन तपन अतुल तुलाई माह।
सिसिर-सीत किहुं ना मिटै बिन लपटै तिय नाह॥५८५॥

तपन तेज इति। पूर्वानुरागवती सौं किंवा मानिनी सौं सखीवचन—तपन सूर्य्य कौ तेज, औ तापन तपन तपनि को तापिवो, तप का रस को अलाव लगावत है, पूर्व में कोऊ धूर कहैं कोड़ कहत हैं, तिनको तापिवो माघ में तुलाई रजाई ये सब अतुल हैं, संजोग स्त्री पुरुष को ताको वरोवरि नहीं, सिसिर सीत किहुं ना मिटै, सिसिर को सीत कोई तरह नहीं मिटै, तिय औ नाह के लपटे बिना, तौरि[illegible] संजोग सौं सीतहानि। [illegible]

परिसंख्या इक

रहि न सकी सब जगत मैं सिसिर सीत के त्रास ।
गरमी भाजि गढवै भई तिय कुच अचल मवास ॥५८६॥

रहि न सकी इति । मानी नायक सों सखीवचन—सब जगत में संपूर्न जगत में किंवा तीनो लोक में, सिसिर के सीत के त्रास सों रहि नहीं सकी, गरमी जो है सो भाजि कैं गढ़वै भई है, तिय के कुच सो अचल पर्वत सों मवास दुर्गम भूमि तामें रहति है । किंवा अचल मवास है काहू सों छोड़ाय नहीं जात है, तिय कुच सो अचल पहार है सो मवास है । रूपकालङ्कार ॥

द्वैज सुधादीधिति कला वह लखि डीठि लगाय ।
मनो अकास अगस्तिआ एकै कली लखाय ॥५८७॥

चन्द्रोदय वर्नन—द्वैज इति । गुरुजन पास नायिका है, घूंघट मों थोरो मुख उघारो है, नायक अटारी पर है, ताकों सखी दिखावति है, आजु द्वैज है वह जो सुधादीधिति चन्द्रमा ताकी जो कला है ताकौं डीठि लगाय देखौ, वह कहै सों यह जो चन्द्रकला है ताकौं कहा देखत हौ, यह चन्द्रकला तो मानो आकाश मे अगस्ति वृक्ष ताकी एक कलीहीं सरीखी लखाति है, कली है मानो, सखी नायिका कौं चन्द्रमा दिखावति है, तहां सूधौ अर्थ, छल करि इष्ट साधै है । पर्यायोक्ति । चन्द्र में अगस्ति वृक्ष की कली की संभावना । उक्तास्पदवस्तूत्प्रेचा ॥ ५८७ ॥

धनि यह द्वैज जहां लख्यौ तज्यौ दृगनि दुख दन्द ।
तो भागनि पूरब उग्यौ अहो अपूरब चन्द ॥५८८॥

धनि यह इति। सखी को बचन नायिका सौं—धन्य यह दैज है, जहां लख्यौ जहां दैज में लख्यौ नायक कौं द्दगनि ने दुखदन्द, दुखदन्द बोली है, दुख छोड़यौ किंवा दुख को जोड़ा द्वन्द नाम जोड़ा को अकुलानि औ बरनि, तो भागिनि तेरे भाग सौं पूरब ओर उग्यौ दैज के दिन अपूरब चन्द्रमा नायक जानिये, प्रस्तुत चन्द्रमा तासौं प्रस्तुत नायक कौं जतायौ। प्रस्तुताङ्कुर अलङ्कार—"प्रस्तुतअंकुर प्रस्तुतहि प्रस्तुत देइ जताय" ॥ ५८८ ॥

जोह्न न हो यह तम वहै किए जु जगत निकेत ।
होत उदै ससिके भयौ मानहु ससिहर सेत ॥५८९॥

जौह्ननहीं इति। विरहिनी को वचन सखी सौं—जौह्न चांदिनी यह नहीं है, वह तम अन्धकार है किंबा तम राहु है, कौन नायक गये पीछे जिनने जगत में निकेत कियो है, घर कियो है चन्द्रमा को अर्थ आनन्द देनिहारो, यह दुखदाई, स्याम चाहियै जो तम है तो ससि कै उदै होत मानो ससिहरि कैं डरपि कैं सेत ऊजरो भयो है, ससिहरि मानो क्रिया सौं मानो को अन्वय यातें। अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षालङ्कार ॥ ५८९ ॥

रनित भृंग घंटावली झरत दान मधु नीर ।
मंद मंद आवत चल्यौ कुंजर कुंज समीर ॥ ५९० ॥

पौन वर्नन—रनित इति। कविवचन। रनित भृङ्ग शब्द करत जो हैं भृङ्ग भौंरा, सो घण्टावली है, घण्टा हाथी को होत है ताकी अवली पँक्ति है, दान मद सो नीर झरत है, सो मधु है फूल को रस है, मन्द मन्द चल्यो आवत है कुञ्ज में समीर सो कुञ्जर हाथी है। पौन सों हाथी सों रूपक ॥ ५९० ॥

रही रुकी केंहूं सु चलि आधिक राति पधारि ।
हरति ताप सब द्यौस कौ उरलगि यारि बयारि ॥५९१॥

रही इति। कविवचन—बयारि सोइ यारि है, सो उर छाती सों लागि कें संपूर्ण दिन को ताप दुख ताकौं हरति है, कहूं कोई तरह सों दिनमें रोकी रही नायिका गुरुजन के डर सौं, आधी राति के पौन चली नायिका आधी राति कें पधारी । रूपक अलङ्कार । किंवा नायक कहत है कि तूं ताप कौं हरति है उपरी सखी घर बाहिर सुनति है वह पूछति है, तुमारी इयारि है, नायक छपावै है नहीं बयारि, पधारि को अर्थ आई चलि आई, औरि वही अर्थ, या अर्थ में, छेकापह्नुति ।

'छेकापह्नुति युक्ति करि पर सौं बात दुराय" ॥ ५८१ ॥

चुवत स्वेद मकरंद कन तरु तरु तर बिरमाय ।
आवत दक्षिन देस तें थक्यौ बटोही बाय ॥ ५९२ ॥

चुवत स्वेद इति । कविवचन—मकरन्द फूल को रस ताकी कनी चुवत है, सो स्वेद पसीना है, वृक्ष वृक्ष के नीचे बिलम्ब करै है, आवत है, दक्षिन देश तें थाक्यौ बयारि सो बटोही पथिक । रूपक अलंकार ॥ ५८२ ॥

लपटी पुहुप पराग पट सनी स्वेद मकरंद ।
आवति नारि नवोढ़ लौं सुखद बायु गति मंद ॥५९३॥

लपटी इति । फूल को जो पराग रज सो पट है तासौं लपटी है । किंवा जुदा २ पुहुप औ पराग सौं लपटी है, नायिका पट सौं लपटी है, मकरन्द सौं सनी है, स्वेद सौं सनी है, ऐसो

क्रम चाहिए। नवोढ़ा नई व्याही नारि की तरह आवै है सुखद जो है वायु सो मन्दगति सों, पङ्कप की रज सो पराग पङ्कप पद अधिक है। पूर्णोपमालंकार ॥ ५९३ ॥

रुक्यौ साँकरे कुंजमग करत झांकि झुकुराति ।
मंद मंद मारुत तुरंग खूंदनि आवत जात ॥ ५९४ ॥

रुक्यौ इति । कविवचन—संकीरन ठौर कुंज तामें रोक्यौ साँकरि लगाम से होत है, तासौं पथ में रोक्यौ है दौरिवे नहीं पावै है। 'करत झाँक झुकुरात' झाकत हैं झझकत है, मन्दमन्द गति सौं मारुत पवन सो तुरंग घोड़ा है, खूंदनि सों खुरी सौं आवत जात हैं। रूपकअलङ्कार ॥ ५९४ ॥

कहति न देवर की कुवति कुलतिय कलह डराति ।
पंजरगत मंजार ढिग सुक लौं सूकति जाति ॥५९५॥

अथ कुलवधू वर्नन—कहति न इति। सखी सौं सखीवचन, देवर भौजाई सौं मिल्यौ चाहत है। "रसाभास दूखन गनौ अनुचित वर्नन माहि"। देवर की कुबात बुरी बात सो नहीं कहति है, कुलतिय कुलवधू सो कलह सौं डराति है, पींजरा के ढिग नजीक गत गयो मञ्जार बिलाव तासौं सुक जैसे सूखे तैसे सूखती जाती है। किंवा, जेठानी पूछति है, देवरानी सौं तूं हमारे देवर की कुबात कहति है नहीं क्यौं, तोसौं रुठ्यौ है, कै अवरि सौं आसक्त है, किंवा उनसौं भई कलह ताकौं क्यौं न कहै डराति है कहति कै, आगे वही अर्थ। उपमालंकार ॥ ५९५ ॥

पहुँला हार हिए लसै सन की बेंदी भाल।
राखति खेत खरी खरी खरे उरोजनि बाल ॥ ५९७ ॥

गवारि बर्नन—पहुला इति। सखा नायक सों कहत है। पहुला फूल विशेष ताके हार हियमें सोभै है, औ सन के फूल की बेंदी भाल में है, खरी खड़ी खेत राखति है, किंवा जाकौं निहारति है ताकौं खेत राखै है ठौर राखै है खेत राखति है। श्लेष औ स्वभावोक्ति ॥ ५९६ ॥

गोरी गद कारी परैं हँसति कपोलनि गाड़।
कैसी लसति गँवारि यह सुनकिरवा की आड़ ॥५९७॥

गोरी इति। सखा नायक कौं दिखावत है—गोरी है गदकारी भरे अंग है, हँसति के कपोलनि में खाड़ा परत है, कैसी अच्छी लसै है सोभै है, यह गँवारि नायिका, सुनकिरवा जनावर होत है ताकी पाँखि सबुज होत है ताकी आड दिये हैं। स्वभावोक्ति। जो ऐसो अर्थ करे यह गवारि सो सोनकिरवा की आड़ कैसी लसै है तौ अन्योन्यालङ्कार ॥ ५९७ ॥

गदराने तन गोरटी ऐपन आड़ लिलार।
हूठ्यो दै इठलाय दृग करै गँवारि सुमार ॥ ५९८ ॥

गदराने इति। नायकवचन सखी सों—गदराने वाके तन है कच्चा होय ताकौं गदरा कहिये परिपक्क जोवन नहीं है, गोरटी गोरी पीस्या चाँवर औरि हरदी डार्यो सो ऐपन ताकी आड़ लिलार में है, हूठ्यो दै मूठी बाँधि कटि में हाथ लगाय अठिलाय

आंग मरोरै है, दृग नेत्र सौं गँवारि नायिका सुमार करै है मूर्छित करति है । स्वभावोक्ति अलङ्कार ॥ ५९८ ॥

सुनि पग धुनि चितई इतैं न्हात दिएई पीठि ।
चकी झुकी सकुची डरी हँसी लजीसी डीठि ॥५९९॥

स्नान वर्नन—सुनि पग इति । सखी सों सखीवचन । परकीया नायिका, नायक के पाव की ध्वनि सुनिकैं, चितई इतैं नायक की ओर पीठि दिये नहाय थी चकी बोली क्यौं हमैं नहात में देखी, झुकी नीची भई संकोच कियो, डरी कोई चौरि मति देखै, फेरि हँसी लजी सी डीठि दृष्टि लज्जित है मानौ । किलकिञ्चितहाव के सब लछन नहीं है भाव साबल्य है, क्रिया के आगे सी है यातैं । अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा । अनेक भावन की आदि उपजै यातैं । समुच्चय अलङ्कार । "होय समुच्चय भाव बहु कहुं इक उपजै अंग" । साहित्यदर्पन के मत में तो होय तीनि मिलै तोभी हावकिलकिञ्चित होय ॥ ५९९ ॥

नहि अन्हाय नहि जाय घर चित चुहुट्यौ तकि तीर ।
परसिफुरहुरी लै फिरति बिहँसातिधसति न नीर॥६००॥

नहि अन्हाय इति । सखी की उक्ति सखी सौं—नायक को आवनो देखति है, नहीं नहाति है नहीं घर कौं जाति है, हे सखि तूं तकि ताकौ वाकौ चित्त निर्जन जो है तीर तामै चुहुट्यौ है लागि गयो है, जल कौं परसि कैं छूइ कैं फुरहुरी लै कैं आंग कँपाय कैं फिरति है, बिहँसै है नीर में नहीं धसै है । किंवा नायक वा ठौर मैं तीर मैं नायक ने वाकौं ताकिकैं वाको चित्त कौं

हस्यो है, किंवा तीर में नायक कौं ताकि कैं वाको चित्त चिहुंघ्यो चिपि गयो, नायक में आसक्त भयो, सीत के छल करि नायक कौं देखै है। पर्यायोक्ति अलंकार—

"मिसि करि कारज साधिये जो कछु चितहि सुहात"। ६००।

इति श्रीहरिचरणदासकृतायां हरिप्रकाशाख्यसप्तशतीटीकायां
षष्ट शतक व्याख्या। ६॥

मुँह पखारि मुड़हर भिजै सीस सजल कर छ्वाय।
मौर उचैं घूंटे नचैं नारि सरोवर न्हाय ॥ ६०१ ॥

मुह पखारि इति। सखी सौं सखी—मुख धोय कैं मुड़हर पूरब में मथहर कहत हैं ताहि भिजायकैं सीस कौं सजल जो है कर हाथ ताकों छुआय कैं, मोर ग्रीवा के पीछें ताकों ऊंचो करिकैं घुटना पूरब में ठेहुन कहत हैं, तासौं नय करि नीचो होय करि नारि सरोवर में नहाति है। स्वभावोक्ति ॥ ६०१ ॥

बिहँसति सकुचति सी हिये कुच आँचर बिच बाँहि।
भीजे पट तट कौं चली न्हाय सरोवर माँहि ॥६०२॥

बिहँसति इति। सखी सौं सखी—बिहँसति है हृदय में मानो सकुचति है, कुच औ बाँहि आँचर के बीच में है, किंवा कुच औ आँचर के बीच में बाँहि है, दोऊ हाथ मोरि कैं गला सौं लगाये है, तब बाँहि कुच के बीच में आवै, भीजे पट सौं तट कौं तीर कौं चली है नहाय कैं सरोवर मांहि सौं, इहां सकुचत

सी क्रिया के आगे सी है मानो के अर्थ में। अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा औ स्वभावोक्ति भी है ॥ ६०२ ॥

मुँह धोवति एड़ी घँसति हँसति अनगवत तीर ।
धँसति न इन्दीवरनयनि कालिंदी के नीर ॥६०३॥

मुह धोवति इति। नायिका नायक कौं देखति है सो बात जानि कैं सखी नायिका सौं परिहास कर कहति है—मुह धोवति है तूं एड़ी घसै है, औ अकारन हँसति है, औ तीर मैं अनगवति है विलंब करति है, हे इन्दीवरनयनि नीलोत्पलनयनि! कालिन्दी यमुना के नीर में क्यौं नहीं धँसति है ?। इन्दीवर उपमान, नैन उपमेय, वाचक धर्म लुप्ता। उपमालङ्कार। नायिका क्रिया विदग्धा, किंवा तीर में अनंग काम तुल्य जो है नायक ताकौं देखि कैं नीर मैं नहीं धसति है ॥ ६०३ ॥

न्हाय पहिरि पट डटि कियौ बेंदी मिस परनाम ।
दृग चलाय घर कौं चली बिदा किये घनस्याम ॥

न्हाय पहिरि इति। सखी सौं सखी—न्हाय कैं पट पहिरि कैं नायक की ओर डटि कैं अटकरि करिकैं देखि कैं यह अर्थ। बेंदी टीको देने के मिस सों छल सों प्रनाम कियौ, दृग सों नायक कौं चलाय कैं घरैं मिलाप होयगो आपने घर कौं चली। किंवा, मानी नायक थो ताकौं प्रनाम करि मनायौ घर संकेत बतायौ, पराये के अभिप्राय कौं जानै तासौं अभिप्राय सहित चेष्टा करै। सूक्षम अलङ्कार—

"सूक्षम पर आसै लखे सैननहीं में भाव" ॥ ६०४ ॥

चितवति जितवति हित हिये किये तिरीछे नैन ।
भीजे तन दोऊ कँपत क्योंहूँ जप निबरै न ॥६०५॥

जप में स्नेह वर्णन—चितवत इति । सखी सों सखीवचन—दम्पती नदी में स्नान करि तहांई भीजे वस्त्र सौं जप करत हैं, परस्पर देखत हैं, हिये में जो हित है ताकौं उत्कर्ष करै हैं बढ़ावत हैं, किंवा सीत भयो है तासौं हित कौं जितवत हैं, हित सों मीत कौं दबावत है, किंवा हित के हृदय मन ताकौं बढ़ावत हैं, तिरछौंहे नैन किये हैं, दोऊ के तन भीजे हैं तासौं कांपै हैं, कोई तरह सौं जप निबरै है घटै है नहीं । आधा दोहा में स्वभावोक्ति । कांपा जप छोड़िवे को हेतु है तौभी जप नहीं छूटत है । विशेषोक्ति—

"विशेषोक्ति जो हेतु सों कारज उपजत नाहिं" । ६०५ ॥

दृग थिरकौंहे अधखुले देह थकौंहे हार ।
सुरत सुखित सी देखिये दुखित गर्भ के भार ॥६०६॥

गर्भिनी बर्नन—दृग थिरकौंहें इति । सखी सौं सखी । दृग स्थिर से हैं अधखुले देह थकी सी तहां बहुत भूषन नहीं है हार मात्र है, सुरत में भी यह दसा होति है, सुरतसुखी सी देखिये है, गर्भ के भार सो दुखी है, सुरतसुखी उपमान, गर्भिनी उपमेय सी वाचक थिरकौंहें आदि धर्म । पूर्नोपमालङ्कार ॥ ६०६ ॥

ज्यों कर त्यों चुहटी चलै ज्यों चुहटी त्यों नारि ।
छवि सों गति सी लै चलै चातुरि कातिनिहारि ॥

कातिनिहारि वर्नन—ज्यौं कर इति । नायिका की उक्ति सखी सौं । जैसें हाथ चलै है तैसें चिकुटी चलै है, जैसें चिकुटी चलै तैसेंही नारि छबि सौं गति सौं लै चलै है, नाच में गति जैसें लेति है, यह चतुरि जो कातिनिहारि है । किंवा नायक कहै हैं, हे चातुरि सखी हमारे मन की बात जानति है कातिनिहार सौं मिलाव यह अर्थ । स्वभावोक्ति । गति सौं गति मानो लै चलै है । अनुक्तास्पदवस्तूत्प्रेक्षा ॥ ६०७ ॥

अहे दहेड़ी जिन धरे जिनि तू लेहि उतारि ।
नीके है छीके छुवै ऐसेही रहि नारि ॥ ६०८ ॥

छीका तें दही उतारै है । अहे इति । नायिका के अंग देखि नायकवचन—अहे सम्बोधन, अहे नारि दहेंड़ी कौं, जनि धरै जनि तूं उतारि लेहि तूं नीकै है छीका कौं छूये, छीका कौं पूरब में सिकहर कहत हैं, ऐसेही रहो । किंवा तूं छीकत में छूयो है, तासौं ऐसेही रहौ, छीकत में जो काज आरंभिये सो वैसेही राखिये । स्वभावोक्ति अलंकार ॥ ६०८ ॥

देवर फूल हने जु हठि उठे हरखि अँग फूलि ।
हँसी करति औषध सखिनु देह ददोरनि भूलि ॥

अथ स्त्री चरित्र वर्नन—देवर इति । परोसिनि को वचन कोई स्त्री सौं—मेरे देवर ने वा नायिका कौं हठि कैं हम फूल सौं मारैंगे, ऐसे हठि कैं फूल हन्यौ फूल सौं मार्यो, नायिका के अंग हरषि कैं फूल उठे, देह का ददोरा सौं भूलि कैं सखी औषध करति है, ताकौं परोसिनि हँसी । मेरे देवर सौं आसक्त है,

कहूं मिसु ऐसो पाठ होय तौ सिसु को अन्वय सखी सों कीजिये सिसु अज्ञान जो सखी है ताकौं हँसी। किंवा नायक ने परोसिनि के सिसु देवर के हाथ फूल दिये, वा नायिका पर डारि आवौ तहां परोसिनिवचन, नायक के कर कौं स्पर्श फूल सों थो तासौं सात्विक भयौ। भ्रान्ति अलंकार ॥ ६०९ ॥

तिय निज हिय जु लगी चलत पिय नखरेख खरोट।
सूखन देत न सरसई-खौंटि खौंटि खत खोट ॥

तिय निज इति। सखी सौं सखी—हे तिय वाके निज कहिये आपने हृदय में जो लगी चलत के पिय के नख की रेखा तासौं खरोट छत, ताकी सरसाई सूखिबे नहीं देति है, फेरि फेरि खत कौं खौंटै है, नायक के हाथ को है यातें। किंवा तिय के हिय में निज पिय के चलत नख लग्यौ है निज पिय परपति तहां निज पद निरर्थक नहीं, तीनि बार खौंटि आयौ है सोभी निरर्थक होय बार चाहिये। सखी कहति है यह वा नायिका में खोट कहिये दोष है सरसाई सूखिबे नहीं देति है खोटति रहति है, नायक के हाथ को छत है यासौं खोटै है, सखी दोष ठहरावै है, यातें लेस अलंकार ॥ ६१० ॥

पाऱ्यो सोर सुहाग को इन विनुहीं पिय-नेह ।
उनदौहीं अँखिया ककै कै अलसौहीं देह ॥ ६११ ॥

पाऱ्यो इति। सौति की सखी को वचन—ईर्षा सों काहू स्त्री सों। या नायिका ने पिय के नेह विना सोहाग को सोर पाऱ्यौ, सौभाग्य प्रसिद्ध कियौ, उनोंदी आँखें करि करि, आलस

भरी देह करिकैं, राति नायक के संग जागी है याते आँखि में नींद लगी है, पिय कौ नेह सोहाग प्रसिद्ध होने को कारन है सो नहीं है। विभावनालंकार—"होति छभाँति विभावना कारन विनही काज"। किंवा सोहाग प्रसिद्ध होनो इष्ट है ताकौं छल करि साध्यौ, यातें पर्य्यायोक्ति अलंकार। "छल करि कारज साधिये जो कछु चितहि सुहात"। सन्देह जहां अलंकार को होइ तहां संकर जानिये ॥ ६११ ॥

बहु धन लै अहिसान कै पारो देत सराहि ।
वैद वधू हँसि भेद सौं रही नाह मुख चाहि ॥६१२॥

व्यङ्ग्यवचन—बहु धन लै इति। काहू को वचन। बहुत तौ धन लेकर अहिसान उपकार करि कैं पारा देहि तौ गुन होय कच्चा पारा देइ तौ फूटि निकरै जौ कछु वस्तु देत हैं ताकौं, पारा सराहि देत है, यह दूसरो पारा है पारा खाहु भावे याहि खाहु, तब वैद्य की वधू भेद सों अभिप्राय सों हँसि कैं, तुम क्यौं नहीं खात हौ नाह को मुख चाहि रही देखि रही। किंवा स्त्री कोई आपने पति सौं कहति है, हे नाह अर्थ तें आपने पति को मुख चाहि रही भेद सों हँसी तुम यही रोज खात हौ, यातैं तुमैं वहुत रति सक्ति है निन्दा मिटी। किंवा जाको भगवान अनुग्रह करे ताके चित्त कौं हरे है, ऐसें भी कोई पुरान बचन को अर्थ करे है, मुख्य अर्थ तो है ताको वित्त पहुंचावत है. सुदामा दृष्टान्त, वहुत धन कौं लेकैं हरि कैं, फेरि वाके ऊपर अहिसान उपकार करि कैं पारौ देत है, संसार समुद्र ताको पार देत है

फिरि सराहि कैं, हम तेरो धन हर्‍यो तूं हमारी भक्ति नहीं छोड़ी स्याबास तोहि, वैद्यनारायन, संसार रूप रोग कौं दूर करत हैं, तिनकी वधू लक्ष्मी सो भेद सों हँसि कैं, वाकी लक्ष्मी तो तुम हरी, मत्त ताको कारन जानिकैं, तुम हमैं छाती सों लगाये क्यौं रहत हौ, नाह को मुख देखि रही। किंवा दूती नायक कौं ल्याय नायिका सौं मिलायो है तहां सखी को वचन नायिका सौं, धनी नायक को लछन है, रसिक प्रिया में कह्यौ है, "भव्यक्रमी सुन्दर धनी सुचि रुचि सदा कुलीन", बहुधन जो यह नायक है ताकौं तू लै अंक सौं लगाय, मैं तेरो कार्य्य कियो अब हमारो अहिसान उपकार करो, सखी नहीं मागै दूती मागै यह भेद दूती सौं सखी सौं, ये नायक पारो देत थे यमुना में नाव चलावै थे, मैं तेरो रूप सराहि कैं ल्याई हौं लै यह पद कह्यौ है तासौं ल्याई हौं येतना निकर्‍यो तब वैद्य जो वधू है जाननवाली रूप गुन की समुझन-वाली जो वधू है, सो भेद सा' दूती की ओर हँसी, जैसो तारीफ तूं करै थी तैसोई सुन्दर नायक है यह भेद, तब नाह को मुख चाहि देखि कैं रही यथास्थित रही छकि रही। स्तम्भ सात्विक भयो। किंवा देखि रही, किंवा वहु बहू वधू कौं कहत हैं हे वधू धन्य है तू ऐसो नायक तेरे रूप गुन जोग्य आयो अब लै मिलौ और वही अर्थ, पहिला अर्थ में। सूक्ष्म अलंकार, और श्लेष।

"सूछम पर भासै लखै ताहि बतावै भाव" ॥ ६१२ ॥

ऊँचे चितै सराहियत गिरह कबूतर लेत।
दृग झलकत मुलकत वदन तन पुलकित किहि हेत॥

ऊँचे चितैं द्युति। नायक अटारी पर चढ़ि गिरहवान जो है

भरी देह करिकैं, राति नायक के संग जागी है यातें आँखि में नींद लगी है, पिय को नेह सोहाग प्रसिद्ध होने को कारन है सो नहीं है। विभावनालंकार—"होति छभाँति विभावना कारन बिनही काज"। किंवा सोहाग प्रसिद्ध होनो इष्ट है ताकौं छल करि साध्यौ, यातें पर्य्यायोक्ति अलंकार। "छल करि कारज साधिये जो कछु चितहि सुहात"। सन्देह जहां अलंकार को होइ तहां संकर जानिये ॥ ६११ ॥

बहु धन लै अहिसान कैं पारो देत सराहि।
बैद बधू हँसि भेद सौं रही नाह मुख चाहि ॥६१२॥

व्यङ्ग्यवचन—बहु धन लै इति। काहू कौ वचन। बहुत तौ धन लेकर अहिसान उपकार करि कैं. पारा देहि तौ गुन होय कच्चा पारा देइ तौ फूटि निकरे जौ कछु वस्तु देत हैं ताकौं, पारा सराहि देत है, यह दूसरो पारा है पारा खाहु भावे याहि खाहु, तब वैद्य की बधू भेद सों अभिप्राय सों हँसि कैं, तुम क्यौं नहीं खात हौ नाह को मुख चाहि रही देखि रही। किंवा स्त्री कोई आपने पति सौं कहति है, हे नाह अर्थ तें आपने पति को मुख चाहि रही भेद सों हँसी तुम यही रोज खात हौ, यातैं तुमैं बहुत रति सक्ति है निन्दा मिटी। किंवा जाको भगवान अनुग्रह करे ताके चित्त कौं हरे है, ऐसें भी कोई पुरान बचन को अर्थ करे है, मुख्य अर्थ तो है ताको वित्त पहुंचावत है. सुदामा दृष्टान्त, बहुत धन कौं लेकैं हरि कैं, फेरि वाके ऊपर अहिसान उपकार करि कैं पारो देत है, संसार समुद्र ताको पार देत है

फिरि सराहि कैं, हम तेरो धन हर्यौ तूं हमारी भक्ति नहीं छोड़ी स्याबास तोहि, वैद्यनारायन. संसार रूप रोग कौं दूर करत हैं, तिनकी वधू लक्ष्मी सो भेद सों हँसि कैं, वाकी लक्ष्मी तौ तुम हरी, मत्त ताको कारन जानिकैं, तुम हमैं छाती सों लगाये क्यौं रहत हौ, नाह को मुख देखि रही। किंवा दूती नायक कौं ल्याय नायिका सौं मिलायो है तहां सखी को वचन नायिका सौं, धनी नायक को लछन है, रसिक प्रिया में कह्यौ है, "भव्यक्रमी सुन्दर धनी सुचि रुचि सदा कुलीन", वहुधन जो यह नायक है ताकौं तू लै अंक सौं लगाय, मैं तेरो कार्य्य कियो अब हमारो अहिसान उपकार करो, सखी नहीं मागै दूती मागै यह भेद दूती सौं सखी सौं, ये नायक पारो देत थे यमुना में नाव चलावे थे, मैं तेरो रूप सराहि कैं ल्याई हौं लै यह पद कह्यौ है तासौं ल्याई हौं येतना निकस्यौ तव वैद्य जो वधू है जाननवाली रूप गुन की समुझन-वाली जो वधू है, सो भेद सों दूती की ओर हँसी, जैसी तारीफ तूं करै थी तैसोई सुन्दर नायक है यह भेद, तव नाह को मुख चाहि देखि कैं रही यथास्थित रही छकि रही। स्तम्भ सात्विक भयो। किंवा देखि रही, किंवा वहु वज्ञ वधू कौं कहत हैं हे वधू धन्य है तू ऐसो नायक तेरे रूप गुन जोग्य आयो अब लै मिलौ औरि वही अर्थ, पहिला अर्थ में। सूक्ष्म अलंकार, औरि श्लेष।

"सूछम पर पासै लखै ताहि बतावै भाव" ॥ ६१२ ॥

ऊँचे चितै सराहियत गिरह कबूतर लेत ।
दृग झलकत मुलकत वदन तन पुलकित किहि हेत॥

ऊँचे चितैं इति। नायक अटारी पर चढ़ि गिरहवाज जो है

कबूतर ताकौं उड़ावै है, नायिका कबूतर के छल करि नायक कौं देखै है, सो बात जानि कैं सखी परकीया सौं कहति है, ऊँचे चितैं ऊपर दृष्टि करिकैं सराहै है, कहा अच्छा कबूतर गिरह लेत है, गिरह उड़नि विशेष, दृग नेत्र झलकत है चमकत है, वदन मुलकत है, कछु हँसी सहित होत है, तन तेरो पुलकत है कौन कारन सौं, किंवा नायक के कबूतरही कौं देखि कैं सात्विक, जो सखी नायिका सौं कहति हैं, नायक कौं सुनावति हैं, यह तुमसौं आसक्त है तो, गूढ़ोक्ति । कबूतर के छल सौं नायक कौं देखै है । पर्य्यायोक्ति ॥ ६१३ ॥

कारे वरन डरावने कत आवत इहि गेह ।
कइ बा लख्यो सखी लखे लगै थरहरी देह ॥६१४॥

कारे वरन इति। ऊपरी कोई स्त्री बैठी है तहां नायक आयो है, नायिका कौं कांपा सात्विक भयो, ताकौं छपावति है यह जानि न जाय, ऊपर बात रूखी है, दूसरे अर्थ में रूखी नहीं, हा कारे वरन डरावने भयकारी दूसरो अर्थ कारे जितने हैं मेघ औ नीलोत्पल अलसी कुसुम तासौं तुम बर ही श्रेष्ट हो न डरावने तुम आनन्दकारी हौ 'कत आवत इहि गेह' प्रथम अर्थ, क्यौं आवत है यह पुरुष घर में, दूसरो अर्थ, यह जो हमारो घर है तहां तुम क्यौं आवत हो कुंजभवन में चलो हमहीं आवति हैं, यह गेह पद मौं ध्वनि, प्रथम अर्थ । हे सखी मैं कई वार देख्यो है, इन्हैं देखि सौं देह में थरथरी कांपा लगै है, नायक ने समुझावै है, तुम ऐसे सुन्दर हौ, तुमैं देखे हमारैं सात्विक होत है देह मैं । श्लेषा-

लंकार—"श्लेष अलंकृति अर्थ बहु जहां शब्द में होय" व्याजोक्ति भी है। "व्याजोकति कछु औरि विधि कहै दुरै आकार" अवहित्था संचारी गुप्ता नायिका ॥ ६१४ ॥

औरि सबै हरखी फिरैं गावति भरी उछाह ।
तुँही बहू बिलखी फिरै क्यों देवर के व्याह ॥६१५॥

औरि सबैं इति। अपने देवर सों रति वरनै तो रसाभास दोष होय परोसिनि के देवर सों नायिका की आसक्ति थी, एक गांव की नववधू कुं तौ बहु अबही कहै है यह रीति है, परोसिनि को वचन नायिका सौं। औरि सबैं हरखी फिरैं हैं उछाहभरी गावति हैं, हे बहु तुही एक बिलखो क्यौं फिरै है? मेरे देवर के व्याह सौं, व्याह गुन तासौं याकौं दोष भयौ। उल्लास अलंकार, किंवा देवर की स्त्री आये नायक स्वच्छंद घर में नाहीं आवैगो, यातैं स्वकीया सों सखी पूछति, किंवा नायिका बहुत सुन्दरी है, ताकी पति दूसरो विवाह करिबे चल्यौ है, तासौं सखीबचन। औरि जो तेरी सबै कहिये-सखी सो तौ हरषी फिरति हैं, नायिका पूछति है कहां फिरै है लुगाई सब जहां तेरो नायक के व्याह के गीति उछाहभरी गावति हैं तहां ऐसी स्त्री दूसरी नहीं मिलैगी यातें तूं बहु कहिये बहुत बिलखी क्यौं फिरति है क्यौं देवर आज्ञा नायक कौं, तूं व्याह करि, मोहि सी नहीं मिलैगी यह अर्थ ॥६१५॥

रवि वन्दौ कर जोरि के सुनत स्याम के वैन ।
भए हँसौंहैं सबनि के अति अनखौंहैं नैन ॥६१६॥

चीरहरन को प्रसंग—रवि वन्दौ इति। रवि सूर्य्य कौं वन्दौ

हाथ जोरि कै, यह कृष्ण के वचन सुनत कै, अनखोहैं नैन थे कछु क्रोध की लेससहित सब गोपिन के नैन थे, वस्त्र विना रवि वन्दौ या वात सौं, अति हँसौहैं भये, किंवा अति अनखौहैं ऐसे जानिये। इहां हास्यरस मुख्य भयो ताको अंग कोपजन्य रौद्र रस भयो यातैं, रसवत अलङ्कार। "अंग जहां रसभाव को रस तहँ रसवत जानि" मृदुहास अनुभाव विनु वस्त्र को समय विभाव। पहिलें कोप, पीछें हँसी एक विषैं अनेक भाव। पर्याय अलङ्कार।

"है पर्याय अनेक को क्रम तें आश्रय एक" ॥ ६११ ॥

तन्त्री नाद कवित्व-रस सरस राग रस रङ्ग ।
अनबूड़े बूड़े तिरे जे बूड़े सब अङ्ग ॥ ६१७॥

अथ प्रस्ताविक दोहा। तन्त्रीनाद इति। कविवचन—तन्त्री वीना ताको नाद ध्वनि औ कबित्व को रस मजा सो सरस होय नवो रस जामैं भगवद्विषयक होय, औ राग रस को जो रंग, आजु फलाना के गाइवे में रंग भयो, आजु रंग वरिसै है रंग को अर्थ लच्छना सौं सुख कै चमत्कार यामें जे अनबूड़े नहीं मग्न भये, वै संसार में बूड़े, औ जो यामैं सब अंग सौं, मनवचक्रम सौं बूड़े मग्न भये, वै संसार सागर कौं तिर पार भये पैरि कैं। विरोधाभास—"भासै जहां बिरोध सो वहै विरोधाभास" ॥ ६१७ ॥

गिरते ऊँचे रसिक मन बूड़े जहां ।
वहै सदा पसु नरनि के प्रेम १८॥

नीरस वर्नन—गिर तें

ऊंचे जो रसिक भग

जाकौं लौकिक विषय नहीं छूय सकै सो जहां हजारनि बूड़े, वहै जो भगवद्विषयक प्रेम कौ पयोधि समुद्र सो पसु जो न रहै जिनकौं ज्ञान दृष्टि नहीं तिनकौं पगार होत है। पाव जामैं बूड़े सो पगार, तुच्छ विषय मैं आसक्ति है, लोकविषयक प्रेम कौं मानत हैं, साधारन अर्थ में। जाको मन ललना सौं लग्यौ ऐसे जे रसिकनि के मन ऐसे जानिये। "नौन जुगुति पिय मिलन की धूरि मुकुति मुख दीन"। पसु से नर विचारै है हित। लुप्तोपमा अलङ्कार। प्रेमपयोधि रूपक ॥ ६१८ ॥

चटक न छाड़त घटतहूं सज्जन नेह गँभीर ।
फीकौ परै न बरु घटै रँग्यौ चोल रँग चीर ॥६१९॥

अथ सज्जन वर्नन—चटक इति । चटक चमत्कार पर को मनोरंजन ताकौं नहीं छाड़त है, सज्जन जिनमें स्नेह गम्भीर है, जौंभी घटि जाय सम्पति जाति रहै, तौभी चोल रंग चीर वस्त्र जैसें. खरुया को रंग सो चोल रंग, वह घटै वाको बल तौ घटि जात है, पै फीका नहि परत है, मित्र मनोरंजन नहीं छाड़ै, वस्त्र चटक नहीं छाड़ै। दृष्टान्त अलङ्कार—

"जहां दुहुनि के धरम को होय बिम्ब प्रतिबिम्ब"। ६१९।

सम्पति केस सुदेस नर बढ़त दुहुनि इक बानि ।
विभव सतर कुच नीच नर नरम बिभौ की हानि॥६२०॥

सम्पति इति। अब कविवचन जानिये। सम्पति वृद्धि तासौं केस नमत है, सम्पति दौलति तासौं सुदेस नर सुपुरुष नम्र होत है. नमिबो एक बानि टीज मै है, कुच औ नीच नर विभव सौं

संतर होत हैं, पकड़ि जात हैं, औ जहां विभव को हानि है तहां नरम होत है, जोबन संपति गये। किंवा नरमाई जो है सोई विभव की हानि है विभव संपति शब्द भेद अर्थ एक। आवृत्तिदीपक। औ जो नरमाई है सोई विभव की हानि है. जोसो करि दोऊ वाक्य को एकन्वय आरोपित कियो। निदर्शनालंकार॥

नये विससि यहि लखि नये दुर्जन दुसह सुभाव।
आँटे परि प्राननि हरैं काँटें लौं लगि पाव॥६२१॥

दुर्जन वर्नन—नये इति। ये सम्बोधन ये मित्र दुर्जन कौं नये नम्र लखि कैं नहीं विससिये नहीं बिस्वास कीजिये इनको सुभाव दुसह है। किंवा लक्षना सौं निकृष्ट है, आँटे में दाव में परे प्राननि कों हरे हैं, जैसें काँटा पाय सौं लागे प्राननि कौं हरैं दुख देइ। किंवा कोई न ... गैं ... रिवे के लिये सपती नम्र भई है। तहां साखी ... यक ताकौं न हरै, हरै ...

होत है, पोत नाम दाव को, बार को नाम पोत, एक पोत एक वार इहां लच्छना सों तरह जानिये गेंद की तरह गहैं, जैसें जैसें माथे श्री गेंद के ऊपर मारिये है, तैसें तैसें ऊँचो होत है, गेंद उछलै है। नीच आपु की बड़ाई मानत है, गेंद की समता गहै जैसो गेंद तैसो नीच। आर्थउपमा ॥ ६२३ ॥

कवै न ओछे नरनि सों सरै वड़े को काम ।
मढ्यौ दमामो जात क्यों कहि चूहे के चाम ॥६२४॥

कवै न इति। कवहुं श्राछे छोटे नरनि सों वड़े पुरुष के कार्य्य नहीं सरै नहीं सिद्ध होय चूहा मूषक के चाम सों दमामा नगारा मढ्यौ जात है, क्या यह बात तूं कहौ, ? स्वर भेद सों नहीं मढ्यौ जात है, इहां अर्थ में काकु है, यह जानिये। वक्रोक्ति—"वक्रोकति स्वरश्लेष सों अर्थ फेर जो होय"। अर्थान्तरन्यास ॥ ६२४ ॥

कोरि जतन कोऊ करो परै न प्रकृतिहि बीच ।
नल वल जल ऊँचैं चढ़ै तऊ नीच को नीच ॥६२५॥

कोरि जतन इति। कोटि जतन कोऊ करो तौभी प्रकृति सुभाव ताहि मे बीच विशेष नहीं, बुरी प्रकृति सों भली प्रकृति नहीं होय, फुहारा छूटै है तहां नल के वल सों जल ऊंचे चढ़ै है तौभी नीच को स्वभाव नीचेहीं परिवे को है। किंवा बोलनि है, नीच सो नीचही है, 'को इहां सो के अर्थ में' नीच सो न.चही है, सामान्य अर्थ कौं पुष्ट करिवे कौं विशेष अर्थ कह्यौ। अर्थान्तर्न्यास ॥ ६२५ ॥

लटुआ लौं प्रभु कर गहैं निगुनी गुन लपटाय ।
वहै गुनी कर तें छुटै निगुनीयै ह्वै जाय ॥६२६॥

अथ नृपस्तुति—लटुआ इति। लटुआ डोरि लगाय कैं बालक पटकै है, धरती में नचावत है. प्रभु राजा श्रीजयसिंह जी निगुनी गुनरहित जो है ताकौं आपनो गुन लपटाय कैं लटुआ की तरह कर में गहैं हैं, वह जो गुनी है सो नृप के कर तें छूटै अर्थात जो हजूर तें जातो रहै, तो निगुनीही होय जात है. लटुआ पच्छ मैं, वालक आपनो गुन डोरि लपटावै है. फेरि बालक के कर तें छूटे निगुनी होत है । लटुआ उपमान, लौं वाचक, निगुनी पुरुष उपमेय, निगुनी होय जानो धर्म। उपमालंकार॥

चलत पाय निगुनी गुनी धन मनि मुक्तामाल ।
भेंट होत जयसाह सौं भाग चाहियत भाल ॥६२७॥

चलत इति। निगुनी होउ किंवा गुनी होउ सो धन अश्व, गज, मुद्रा, मनि हीरा पन्ना पुखराज औ मुक्ता की माल पाय कैं चलत हैं. ऐसो बड़ो दरबार है जो भाल मैं भाग्य कौं अङ्क होत है, तौ जैसाह सौं भेंट होत है। किंवा काकुस्वर सौं, जैसाह सौं भेंट होत है तो कहा भाल मैं ललाट में भाग्य चाहियत है. भाग्य होउ न होउ जैसाह सौं भेंट भयौ चाहियत है। काकु करि वक्रोक्ति अलङ्कार॥ ६२७॥

यों दल काढ़े बलक ते तैं जैसाह भुआल ।
उदर अघासुर के परे ज्यौं हरि गाय गुआल ॥६२८॥

यौं दल इति। बलख का पातिसाह सौं साहिजादा सौं वि-

रोध भयो, तहां पातिसाह की भौरि दिल्ली की फौज गई थी
कथा बड़ी है, तहां लराई भई महाराज जैसिं हजो लरि कैं पा-
तशाही फौज निवाही । यों या तरह दल बल ह तें काढ़े तैसे ही
जैसाह भूपाल, जैसे अघासुर के उदर में परे जै सैं हरि ने गोपिन
कौं गोपालनि कौं काढ़े । दृष्टान्त अलङ्कार ॥ ६२८ ॥

रहति न रन जैसाह-मुख लखि लाखनि की फौज ।
जाँचि निराखर हू चलै लै लाखन की मौज ॥६२९॥

रहति न इति रन में जैसाह को मुख देखि कैं लाखनि श-
त्रुनि की फौज नहीं रहि सकै भाजै, जो निराखर मूर्ख सों भी
जाचि कैं लाखनि की मौज बकसीस लेकें चलत हैं । अत्युक्ति
अलङ्कार ॥ ६२९ ॥

प्रतिबिम्बित जैसाह दुति दीपति दर्पन धाम ।
सबजग जीतन कौं कर्‍यौ काय व्यूह मनु काम ॥६३०॥

प्रतिबिम्बित इति । प्रतिबिम्बित भासमान जयसाह की दुति
दीपति है, सोभति है दर्पन के धाम में सीसमहल में सब ज-
गत जीतिबे कों मनो काम काय सरीर ताकौं, व्यूह किये है च-
नेक सरीर कियो है । व्यूह रचना, जगतजीतिबो हेतु । असिद्धा-
स्पदाफलोत्प्रेक्षा ॥ ६३० ॥

अनी बड़ी उमड़ी लखें असिवाहक भट भूप ।
मङ्गल करि मान्यौं हिये भौ मुह मङ्गलरूप ॥६३१॥

अथ वीररस वर्नन—अनी बड़ी इति । अनी सेना बड़ी उ-
मड़ी चहुंओर तें आई ताकौं देखि कैं असिवाहक तरवार के च-

लावनिहारे ऐसे भट योद्धा हैं जामें, तब भूप जो हैं मह
जयसिंहजी सो मंगल करि कल्यान करि मान्यो मनमें आ
करि मान्यो यह अर्थ, मुख जो है सो मंगल के रूप भयो मं
लाल है लाल भयो, उत्साह सों, शत्रु सों मंगल विरुद्ध तें का
की सिद्धि । विभावनालङ्कार ॥ ६३१ ॥

दुसह दुराज प्रजानि कौं क्यौं न बढ़ै अति दन्द
अधिक अँधेरो जग करत मिलि मावस रवि चन्द

अथ दुराज वर्नन—दुसह इति । एक देस में दोय को
दोय को हुकुम सों प्रजानि कौं दुसह है, तहां अति दन्द
झगरा क्यौं न होय ? लोग तहां दुखी होतही हैं यह अर्थ
मावस में रवि चन्द्र मिलि कैं जगत में अधिक अँधेरो करा
दृष्टान्त अलंकार ॥ ६३२ ॥

बसै बुराई जासु तन ताही को सनमान
भलो भलो करि छोड़िये खोटे ग्रह जप दान ॥६

लोकरीति वर्णन—बसै इति । जाके सरीर में बुराई
ताही को लोक सनमान आदर करत हैं; भलो ग्रह आवें
भलो आछे कहि छोड़े, खोटा बुरा ग्रह आवै ताके लिये
रातें दान देत हैं । दृष्टान्त अलंकार ॥ ६३३ ॥

कहै वहै सो स्रुति सम्रति वहै सयाने लोग
तीनि दबावत निसँकही पातक राजा रोग ॥६

कहै इति । वही बात कौं श्रुति वेद स्मृति धर्मशा
मिताक्षरा आदि कहत हैं, वही बात कौं सुज्ञान लोग

पातक पाप औ राजा औ रोग ये तीनि जो है सो निसंकही कौं दवावत है, दान देकैं तीर्थ जाय कैं औरि भी प्रायश्चित करि कैं पाप काटिवे कौ सामर्थ्य नहीं ताकौं दवावत हैं, औ ऐसे राजा वलहीन कौं दवावत, पद सों यह जानियै है, वलहीन है थोरो कुपथ्य करै तौ रोग दवावै, वलवान कौं सब पथ्य है यह वचन है, शब्द प्रमान करि। प्रमानालंकार ॥ ६३४ ॥

वड़े न हूजे गुननि विनु विरद वड़ाई पाय ।
कहत धतूरे सों कनक गहनौ गढ़्यौ न जाय ॥६३५॥

वड़े न इति। गुन विना वडो नहीं होत है, विरद की वड़ाई पाय कैं, जैसे भगवान को पतितपावन विरद है। धतूरा कौं कनक कहत हैं, पै गहना नहीं गढ्यौ जात है, सोनेही सो गहनो होत है। अर्थान्तर्न्यास अलंकार ॥ ६३५ ॥

गुनी गुनी सव कोउ कहै निगुनी गुनी न होत ।
सुन्यो कहूँ तरुअर्क तें अर्क समान उदोत ॥ ६३६ ॥

गुनी गुनी इति। निगुनी कौं सव कोऊ गुनी गुनी कहै तौ गुनी नहीं होय जाय, अर्कतरु आक के वृक्ष तें अर्क सूर्य के समान उदोत प्रकास कहूं सुन्यौ है? नहीं सुन्यौ अर्थ में काकु जानिये, सामान्य वात कहि विशेष वात कहै तासौं। अर्थान्तन्यास अलङ्कार ॥ ६३६ ॥

नाह गरज नाहर गरज वोलि सुनायो टेरि ।
फँसी फौज के वन्द विच हँसी सवनि तन हेरि ॥६३७॥

नाह इति। जयद्रथ द्रौपदी कों हरी, किंवा रुक्मिनीहरन की

प्रसंग में। किंवा शङ्खचूड़ के प्रसंग में नाहर को गर्ज समान शत्रु कों भयकारी, नाह को जो गरजिबो है तहां बोल को जो टेरि ऊँचो ध्वनि सुनाई, फौज में बन्दबिच फँसी रुकी थी, सबन को तन ओर हेरि कैं हँसी, नाहर को गरज समान नाह को गरज, नायक बोल सुनायौ नाहर को टेरि ध्वनि सो। लुप्तोपमा॥६३७॥

सङ्गति सुमति न पावहीं परे कुमति के धन्ध ।
राखौ मेलि कपूर में हींग न होति सुगन्ध ॥६३८॥

संगति इति। जे लोग कुमति के धन्धा कार्य्य में परे हैं वह संगति संग तासों सुन्दर मति नहीं पावै है, कपूर में मेलि राखौ डारि राखौ तौभी हींगु सुगन्ध नहीं होय। अतद्गुन अलंकार— "सुअतद्गुन जहँ संग को कछु गुन लागति नाहिं"। औ दृष्टान्त अलंकार भी है॥ ६३८॥

परतिय दोष पुरान सुनि लखी मुलकि सुखदानि ।
कस करि राखी मिश्रहूं मुँह आई मुसुक्यानि॥६३९॥

परतिय इति। पुरान बाँचै थो ताही सों नायिका को आसक्ति थी, परस्त्री को संग किये दोष यह पुरान में सुनि कैं सुखदानि जो नायिका मुलकि कैं हँसी देखी, मिश्रह्न के मुख मे मुसुक्यानि आई, सो कसि कैं खैंचि कैं राखी, पौरानिक की निन्दा बचावै तो यौं अर्थ करै, पुरान बाँचै थो तहां परकीया नायिका उपपति भी सुनै थो, परतिय दोष पुरान में सुनि कैं सुखदानि नायिका नायक को आर मुलकि कैं देखो, मिश्र चेष्टा सों जानि गयो तब मिश्र ने आपनी मुसुक्यानि कसि कैं राखी। सूक्ष्मालङ्कार—

"सूछम पर आसै लखै सैननि मैं कछु भाय"। ६३९।

सबै हँसत करताल दै नागरता के नाँव ।
गयो गरब गुन को सबै बसै गँवारे गाँव ॥ ६४० ॥

सबै इति। सब हाथ सों ताली दे कैं हँसत है, यह नागर प्रबीन है याकि नाम सौं, गँवारे गांव में बसे, हे सबे! हे सखा हमारो गुन को गरब गयो, सबकि अर्थ फेरें पुनरुक्ति नहीं, गँवारे गाँव बसिबो हेतु, गुन जाइबो हेतुमान तासौं। हेतु अलङ्कार ॥

फिरिफिरि बिलखी ह्वै लखति फिरिफिरि लेति उसास।
साईं सिर कच सेत लौं चूनत वित्यो कपास॥६४१॥

फिरि फिरि इति। इहां अनुसयना नायिका है, 'सन सूक्यौ बीत्यौ बनो' इहां यह दोहा चाहिये। कपास को खेत संकेत थो ताको नास देखि नायिका दुखी भई है, सो बात सखी सौं सखी कहति है, फेरि फेरि बिलखाय कैं देखति है, फेरि फेरि दीरघ सास दुख सौं लेति है, कपास के चूनत वाकौं ऐसो दुख बीत्यौ, जेसे स्त्री मरि गये पति दूसरौ ब्याह करै, नायिका जुवती होय पति के माथे में स्वेत केस आवे ताकौं चूनत के ऊपरि लेत के जैसो दुख होय तैसो दुख बीत्यौ भयो। पूर्णोपमालङ्कार ॥ ६४१ ॥

नर की अरु नलनीर की गति एकै करि जोइ ।
जेतो नीचो ह्वै चलै तेतो ऊँचो होइ ॥ ६४२ ॥

नर की इति। नर मनुष्य की फुहारा के नल के नीर जल की गति एकैं करि जोय, गति तरह सौं एकै करि निपट सम करि तूं जोय देखि, जितनो नीचो होय करि चले है, पुरुष सबसों

नम्र होय चलै, तैतनो बड़ो कहावत है, औ नल कौ नीर तैतनो ऊंचो होय उछलै। दृष्टान्त अलङ्कार ॥ ६४२ ॥

**बढ़त बढ़त सम्पति सलिल मन सरोज बढ़ि जाय ।
घटत घटत सु न फिरि घटै बरु समूल कुँमिलाय॥६४३॥**

बढ़त बढ़त इति । संपति औ सलिल जल बढ़त बढ़त कै मन औ सरोज कमल बढ़ि जात है। संपति सलिल के घटत कै मन औ सरोज नहीं घटै, बरु समूल मूलसहित कुम्हिलात है. सम्पति सो जल मन सो सरोज, ऐसे किये । रूपक अलङ्कार । उपमान उपमेय में अभेद ॥ ६४३ ॥

**जौ चाहत चटक न घटै मैलो होय न मित्त ।
रज राजस न छुवाइये नेहचीकने चित्त ॥ ६४४ ॥**

जौ चाहत इति। जौ चाहत है कि चटक चमत्कार नहीं घटै, औ मित्र मैलो न होय बेराजी नहीं होय यह अर्थ । रज धूरि सोई है राजस रजोगुन नहीं छुआइये, उन पर हुकुम नहीं चलाइये, नेह प्रीति औ श्लेष में तेल तासौं चीकनो चित्त है पट ध्वनि मैं निकरत है, पट कौं भी तेल देकैं धोवत है चीकनो रहै, श्लेषालंकार। रज सो राजस रूपक ॥ ६४४ ॥

**अति अगाध अति ओथरे नदी कूप सर वाय ।
सो ताको सागर तहां जाकी प्यास बुझाय ॥६४५॥**

अति अगाध इति । अति अगाध अथाह अति औथरे अति उथल नदी औ कूप औ सरोवर औ वाय वापी सोई ताकौं सागर जहां जाहि ठौर में लाकी प्यास बुझाय मिटै, जो छोटे राजा

सों वड़ी प्राप्ति होय तौ वड़ी राजा ले कहा करै, जहां कछु मिलै नहीं। गूढ़ोक्ति अलंकार—

गूढ़ोकति मिस और के कीजै पर उपदेश" ॥ ६४५ ॥

मीत न नीति गलीत है लै धरिये धन जोरि ।
खाये खर्चे जो जुरै तो जोरिए करोरि ॥ ६४६ ॥

मीत न इति। हे मीत आपु गलत होय कैं कुचाल होय कैं बुरी दसा बनाय कैं धन लेकैं जोरि धरिये, यह नीति नहीं, खाये और खर्च किये जो जुरै संग्रह होय तौ करोरि जोरिये, जौ जोराय तौ करोरि जोरिये। सम्भावना अलंकार ॥ ६४६ ॥

टटकी धोई धोवती चटकीली मुखजोति ।
लसत रसोई के बगर जगरमगर दुति होति ॥६४७॥

टटकी इति। 'सहज सेत पँचतारिया' या दोहा के आगे यह दोहा चाहिये। टटकी तुरत की धोई धोती है, किंवा तुरत की भिजाई दालि को धोअति है, चटकीली चमत्कृत मुख की जोति है, रसोई के आस पास फिरति है, दुति जगमगाति है। स्वभावोक्ति। औ जगर मगर सौं, लोकोक्ति ॥ ६४७ ॥

सोहत सङ्ग समान कों इहै कहैं सव लोग ।
पान पीक ओठन बनै काजर नैनन जोग ॥ ६४८ ॥

सोहत इति। वरावरि सों संग किये सोहत है, इहै सव लोक कहे हैं। ओठ में लाली है यातें पान की पीक वनै है सोहै है, नैन में स्यामता है यातें काजर कौ नैननि सों जोग संजोग सो-

हत है। किंवा खण्डिता की उक्ति नायक सौं। तुमारे पान पीक नैननि सौं लगी है, ओठ में काजर है, किंवा बरोबरि की नायिका सौं संग सोहत है, वह रूप जाति करि हीन है, अधीरा की उक्ति तहां पान पीक दृष्टान्त है, पहिला अर्थ में, समालंकार।

अलकार सम तीनि विधि जथाजोग को संग ॥ ६४८ ॥

चित पितुमारक जोग गनि भयो भएँ सुत सोग ।
फिरि हुलस्यो जिय जोयसी समुझ्यो जारज जोग॥६४९॥

चित पितु इति। पिता कौं मारै ऐसौ जोग गनि कैं सुत पुत्र भये चित्त में सोक भयो, फेरि गनि कें जिय मैं हुलस्यौ जोतिषी, जारज जोग समुझ्यौ जार परपति तासौं उत्पन्न भयो है वहै मरैगो, हास्यरस, दोष में गुन मान्यौ। लेश अलंकार। गुन मैं दोषरु दोष में कल्पनासुश। किंवा जोतिषी की निन्दा छोड़ावै तो ऐसो अर्थ करै। कोई जोतिषी सौं पूछिबे आयो हमारे पुत्र कैसो भयो है, कोई सौं कोई कहत है, जोसी ने पितृमारक जोग गन्यो, सो सुनि कैं, जाकौ सुति भयो थो ताकें चित्त में सुत भये सोग भयो, फेरि हुलस्यौ जीव में जब जोसी सौं जारज जोग समुझि लियो। तासौं लेश अलंकारही है ॥ ६४९ ॥

अरे परेखो को करै तुहीं विलोकि बिचारि ।
किंहिं नर किंहिं सम राखिये खरे बड़े परिवार॥६५०॥

अरे परे इति। अरे सम्बोधन काहू सौं, कौन पारिख करै, तुही बिचारि देख, कौन नर कौं कौन की बरोबरि राखिये, खरो अति जब परिवार बढ़े। प्रत्यक्ष अलंकार ॥ ६५० ॥

कनक कनक ते सौगुनो मादकता अधिकाय ।
वह खाये बौरात है यह पाये बौराय ॥ ६५१ ॥

कनक इति । कनक सोना कनक धतूरा सों सौगुनौ मादकता करिकैं अधिकात है, धन मद बड़ो है यह अर्थ, वह धतूरा खाये बावरो होत है यह सोना पाये बौरात है, सौगुनो मादक है याको समर्थन कियो । काव्यलिंग अलंकार ॥ ६५१ ॥

ओठ उचै हाँसी भरी दृग भौंहनि की चाल ।
मो मन कहा न पी लियो पियत तमाखू लाल ॥६५२॥

ओठ उचै इति । 'रूप सुधा आसव छक्यौ' या दोहा के आगे यह दोहा चाहिये । सखी सों नायिका की उक्ति । ओठ को ऊंचौ करिकैं औ हँसी भरी जो दृग भौंहनि की चलनि है या तरह सों मेरो मन कहा नहीं पी लियो है तमाखू पीवत कै लाल ने । किंवा है लाल नायक सौं नायिका कहति है, मेरो मन कहा न पी लियो है, स्वर भेद सौं । वक्रोक्ति अलंकार ॥ ६५२ ॥

बुरो बुराई जौ तजै तो चित खरो सँकात ।
ज्यौं निकलङ्क मयङ्क लखि गनैं लोग उतपात ॥६५३॥

बुरो इति । बुरा दुष्ट जो पुरुष सो बुराई दुष्टता कौं तजै तौ चित्त अति डरपै, जैसे चन्द्रमा निकलंक देखि कें लोग उत्पात गनें जानें । किंवा खंडिता में । प्रात आय कें नायक हाथ जोरि कहै है मैं अब औरि पास नहीं जाँवगो तहां सखी सों नायिका-वचन । दृष्टान्त अलंकार ॥ ६५३ ॥

भाँवरि अनभाँवरि भरे करौ कोटि बकवाद ।
अपनी अपनी भाँति को छुटै न सहज सवाद ॥६५४॥

भाँवरि इति । जो बात सोहाय सो भाँवरि, नहीं भावै सो अनभाँवरि, भाँवरि अनभाँवरि सों भरे जे है लोग वै कोटिक बकवाद करी बको आपनी आपनी भाँति इहां स्वभावताकों जो सहज को सवाद है, देह के संगही उपज्यो है सवाद स्वादु सो नहीं छूटै, सवाद छूटिबे को हेत है सवाद नहीं छूटै है । विशेषोक्ति अलंकार ॥ ६५४ ॥

जिन दिन देखे वे सुमन गई सु बीति बहार ।
अब अलि रही गुलाब की अपत कटीली डार ॥६५५॥

अन्योक्ति । जिन दिन इति । सम्पतिहीन पुरुष गतजोवना स्त्री इत्यादि पर जानिये । जिन दिन चैत्र वैशाख के दिन में वे मनोहर फूल देखे सो बहारि बीति गई । हे अलि भौंरा अब गुलाब के अपत पानहीन कटीली काँटे भरी डार रही है, गुलाब के छल करि औरि कौं कहत हैं । गूढ़ोक्ति अलंकार । याकों अन्योक्ति भी कहत हैं ।

"गूढ़ोक्ति मिस औरि के कीजे पर उपदेस" ॥ ६५५ ॥

इहि आस अटक्यो रहै अलि गुलाब के मूल ।
ह्वैहैं बहुरि वसन्त ऋतु इन डारनि वे फूल ॥६५६॥

इहीं आस इति । कोई राजा की संपति गई है गुनी वाकौं सेवै है, तापर कहत है, येही आसा सों अलि भौंरा गुलाब के मूल सौं अटक्यो रहत है लग्यो रहत है, फेरि वसन्त ऋतु में इन

डारनि में वे वा तरह के मनोहर फूल ह्वै हैं होंहिगे । गूढ़ोक्ति अलंकार। भौंरा जरि में नहीं वैठत है, तहां ऐसो अर्थ । आब पानी ताकौ मूल जो है गुल फूल गुलावही को पानी होत है औरि को नहीं किवा आवदारी जामै वहुत है ॥ ६५६ ॥

सरस कुसुम मँड़रात अलि न झुकि झपटि लपटात।
दरसत अति सुकुमारता परसत मन न पत्यात ॥६५७॥

सरस इति । सरस वेस कुसुम है तापें अलि भौंर मँड़रात है झुकि कैं झपटि कैं लपटाति है नहीं, अति सुकुमारता दरसै है, यातें परसत कै मन नहीं प्रतीति करत है । आछौ राजा है कविजन आवै है, राजा को सेवन नहीं करत है, समुझ वारीही दीसै है, दान सक्ति नहीं है कवित्व है, सबकी विद्या कौं सवही के गुन सीखे है, सेवन करिवे कौं मन नहीं पत्याय है, ये हमैं क्या देहिगे, ध्वनि को अर्थ । कोई सुकुमार मुग्धा पर लगावै है कहूं सिरिसि कुसुम ऐसो भी पाठ है । गूढ़ोक्ति ॥ ६५७ ॥

वहकि वड़ाई आपनी कत राचति मति भूल ।
विन मधु मधुकर के हिये गड़ै न गुड़हर फूल ॥६५८॥

वहकि इति । कोई कृपन पुरुष सो कहै है । आपनी वड़ाई झूठी करिकैं सुनि कै वहहि कैं कत क्यौं राजो होत है, यासौं मति भूल जनि भूलै तू । किंवा, हे मतिभूल हे अज्ञान मधु फूल को रस सुगन्ध विना मधुकर भौंरा के हिये मनमें गुड़हर को फूल नहीं गड़ै, चित्त में नहीं आवै, गुड़हर जपापुष्प पूरव में ओड़हुल कहत हैं, दानसक्ति विना तोहि जाचक नहीं चाहैं, यह

व्यञ्जनावृत्ति को अर्थ। वक्ता बोधव्यवचन के प्रभाव तें। आर्थी-व्यंजना। 'जहां न अभिधा लच्छना तात्पर्या न समर्थ। शव्द अर्थ को व्यञ्जना रचै सुऔरें अर्थ'॥ पदार्थ को अन्वय वुझावै सो तात्पर्या, अन्योक्ति में दूसरो अर्थ निकरै है सो व्यञ्जनावृत्ति सौं। गूढ़ोक्ति अलंकार ॥ ६५८ ॥

जदपि पुराने वक तऊ सरवर निपट कुचाल ।
नये भये तु कहा भयौ ये मनहरन मराल ॥६५९॥

जदपि इति। यद्यपिभी पुराने वक हैं तौभी हे सरोवर तोमें निपट कुचाल हैं, ऐसे कौं राखै है, यह कुचाल कुरीति है। किंवा कुचाल वुरी है चाल जाकी ऐसे पुराने वक हैं तो कहा नये भये तौ क्या भयौ? ये मराल हंस मन के हरनेवाले हैं, कोई मूर्ख राजा कौं वहुत दिन सौं सेयो तासौं राजा प्रीति करै है, नवीन कोई वड़ो गुनी आयौ तासौं थोरे दिन को आयौ जानि कम प्रीति करै है तहां यह दोहा। व्यंजनावृत्ति सौं यह अर्थ। गूढ़ोक्ति॥६५९॥

अरे हंस या नगर में जैऔ आप विचारि ।
कागनि सौं जिन प्रीति करि कोकिल दई विड़ारि ॥६६०॥

अरे हंस इति। कोई गुनी गँवार के गांव में चल्यौ है तहां कोई कहत है। अरे हंस या नगर में आपु विचारि के जाइगे। कागनि सौं प्रीति करि कोकिल कौं विड़ारि दिये हैं, काक मूर्ख कोकिल गुनी। व्यंजना सौं जानिये। गूढ़ोक्ति ॥ ६६० ॥

को कहि सकै वड़े न सौं लखै वड़ीही भूल ।
दीने दई गुलाव कौं इनि डारनि ये फूल ॥६६१॥

को कहि इति। बड़े पुरुष सों को कहि सकै बड़ी भूल भोराई देखि कैं, दैव बिधाता ने गुलाब कों ऐसी काँटा भरी डारनि में ऐसे सुन्दर फूल दीने हैं, दुष्ट कों सम्पति, नास्तिक कों वैष्णवपुत्र कृपन कों दातापुत्र। गूढ़ोक्ति अलंकार॥ ६६१॥

वे न इहां नागर बड़े जिन आदर तें आब।
फूल्यौ अनफूल्यौ भयौ गँवई गांव गुलाब॥६६२॥

वे न इहां इति। वै बड़े नागर प्रवीन इहां नहीं है, जिनके आदर किये सौं तुमें आब चढ़ै, पानिप चढ़ै, इज्जति बाढ़ै यह अर्थ, गँवई गँाव में हे गुलाब तूं फूल्यौ सो बिना फूल्यौ सो भयौ अज्ञान के गांव में गुनी जाय तहां जानिये। फूल्यो अनफूल्यौ। बिरोधाभास। गूढ़ोक्ति॥ ६६२॥

कर लै सूँघि सराहि कैं रहे सबै गहि मौन।
गंधी अंध गुलाब कौ गँवई गाँहक कौन॥६६३॥

कर लै इति। गुलाब कों हाथ में लेकैं सूंघि कैं सराहि कैं सब गँवार मौन गहि रहे, यह क्या है, रे गन्धी तूं अन्ध है बुधिहीन है नहीं जाने है, गँवई में गुलाब को कौन गाहक है? गँवार के गाँव में तेरौ गुन कौन जानै?। गूढ़ोक्ति॥ ६६३॥

को छूट्यौ यहि जाल परि कत कुरंग अकुलाय।
ज्यौं ज्यौं सुरझि भज्यौ चहै त्यौं त्यौं अरुझत जाय ६६४

को छूट्यौ इति। या जाल मैं परि कैं कौन छूट्यौ है हे कुरंग हरिन तूं क्यौं अकुलात है? जैसें जैसें सुरझाय कैं भाज्यो चाहत

है, तैसें तैसें अरुझात जात है, स्त्री पुत्रादिक माया जाल है, स्त्री पुत्रादिक कौं सम्पति आनि दै कैं निकसौ तहां उपदेश । गूढ़ोक्ति अलङ्कार ॥ ६६४ ॥

पट पांखैं भख कांकरैं सफर परेई संग ।
सुखी परेवा जगत में एकै तुही विहंग ॥६६५॥

पट पाँखैं इति । पाँखि सो तेरो पट है कपरा है, काँकर सो तेरो भच है, अनायास सर्वत्र मिलै है, सफर मोसाफिरी तामें परेई स्त्री संग में है । हे परेवा ! जगत में एक तूं जो विहंग पच्ची सो सुखी है, कोई परदेसी पेट के लिये मेहनति करत, ताकी उक्ति किंवा ताकौं देखि कोई कहत है । पटपांखैं रूपक । औ गूढ़ोक्ति अलंकार ॥ ६६५ ॥

स्वारथ सुकृत न श्रम वृथा देखि, विहंग विचार ।
वाज पराये पानि परि तूं पच्छीहिं न मारि ॥६६६॥

स्वारथ इति । हे वाज तूं विहंग है आकास मे तेरी गति है, चाहै तहां उड़ि जाय पराये के हाथ में परि कैं परवस होय कैं, पच्छिन कौं मति मारै, स्वारथ नहीं औरि ले जात हैं। सुकृत पुन्य भी नहीं है, यातैं तेरो श्रम व्यर्थ है, तूं विचारि कै देखि, दुष्ट के चाकर पैं यह उक्ति। विहंग विशेषन साभिप्राय है, यातैं परिकर अलंकार । गूढ़ोक्ति ।

"है परिकर आसै लिए जहां विशेषन होय" ॥ ६६६ ॥

दिन दस आदर पाय कैं करि लै आपु वखान ।
जौलौं काग सराध पख तौलौं तौ सनमान ॥६६७॥

दिन दस इति। दिन दस आदर पाय कैं थोरे दिन आदर पाय कैं, आपनी वखान वड़ाई तूं करि लेहि, हे काग जौलौं श्राद्ध पच्छ है, तवतांईं तेरो सन्मान आदर है कोई प्रिय कामदार रूठ्यौ है ताकी ठौर कोई औरि कौं राख्यौ है ताहिँ प्रति, सराध पख कहे जवतांई वह नहीं आवै। गूढ़ोक्ति ॥ ६६७ ॥

मरत प्यास पिंजरा पर्यौ सुवा समैं के फेर ।
आदर दै दै वोलियत वायस वलि की वेर ॥६६८॥

मरत इति। पिँजरा में पर्यौ सुक प्यास सौं मरै है यह समय को फेर है समय फिर्यौ है। वलिदान की वेर वायस कौवा कौं आदर देकैं वोलाइये है, कोई कार्य वस सौं नीच को आदर करै है, सतपुरुष कौं नहीं पूछै है तहां, किंवा परदेस नायक गयो है ताको आइवे के लिये सगुन लेति है। सखी सौं सखीवाक्य गूढ़ोक्ति अलंकार ॥ ६६८ ॥

जाकै एकौ एकहू जग व्यौसाय न कोय ।
सो निदाघ फूलै फलै आक डहडहौ होय ॥६६९॥

जाकैं इति। जाके लिये एको पुरुष कोई एकहू एक भी व्यवसाय उद्यम कोई नहीं करै है, न पानी सौं सींचै है, न पशु सौं रच्छा करैं है, सो आक निदाघ ग्रीषम में फूलै है फलै है डहडहो होत है, अनाथ को रच्छक परमेश्वर है। गूढ़ोक्ति ॥६६९॥

नहिं पावस ऋतुराज यह सुनु तरवर मति भूल ।
अपत भये विन पाय हैं क्यौं न वदल फलफूल ॥६७०॥

नहि पावस इति। हे तरवर तूं मति भूल, मतिभ्रम कौं तजि

छोड़, यह पावस वरिषा ऋतु नहीं है ऋतुराज वसन्त है, अपत भये विना पतहीन भये विना पातहीन भये विना, पहिली संपति दिये विना नवदल औ फल औ फूल। किंवा फूलि राजी होयकैं पहिली सम्पति को दान करैगो तब नई सम्पति मिलैगी। 'ऋतु वसन्त जाचक भयौ झारि दिये द्रुम पात। यातैं नवपल्लव भये दियो दूरि नहि जात'॥ किंवा बहुत कष्ट सहैगो तब या राजा सों फल पावैगो। गूढ़ोक्ति। ६७०॥

सीतलता रु सुगंध की महिमा घटी न मूर।
पीनसवारे ज्यौं तज्यौ सोरा जानि कपूर॥ ६७१॥

सीतलता इति। रु को अर्थ अरु औरि, सीतलता को औ सुगन्ध को महिमा बड़ाई मूर कछू भी नहीं घटी पीनस जाकों रोग होत है, ताने सोरा के भ्रम सों कपूर कों छोड़्यौ तौ कहा भयौ, कपूर की बड़ाई नहीं घटी, जो अज्ञान ने गुनी कों नहीं पहिचान्यौ तौ कहा भयौ। भ्रान्ति अलंकार, गूढ़ोक्ति॥ ६७१॥

गहै न नेकौ गुन-गरब हँसै सकल संसार।
कुच उच पद लालच रहै गरैं परैंहू हार॥ ६७२॥

गहै न इति। मोती को हार, चन्द्रमा को औरं लक्ष्मी को भाई है, समुद्र सौं उत्पन्न है, गुन में श्लेष गुन डोरा कों भी जानिये। नेक भी थोरो भी गुन के गरब कों नहीं गहत है, औ सकल संसार हँसै है, हार कहि कैं हार बन्धन को कहिये लच्छना सों बँध्यो होइ ताकों जानिये। भाषाभूषन—'गुन निधनी कैं देत तूं तिय कों यरि कों हार'। कुच जो है ऊंचो स्थान ताके लालच

सों गरें परें भी अनादर सों भी हार रहत है, बड़े राजाकों कोई प्रतिष्ठा के लिये सेवै है, राजा बहुत आदर नहीं करै है, तहां जानिये। गूढ़ोक्ति अलङ्कार ॥ ६७२ ॥

मूंड चढ़ाएऊं रहै पर्यो पीठ कचभार ।
रह्यौ गरे परि राखिए तऊ हिए पर हार ॥ ६७३ ॥

मूंड़ इति। माथा पै चढ़ाये भी, कच केस ताको भार इहां समूह सो पीठ पैं रहै है पीछे रहै है, नीच स्वभाव है, गर परति रह्यौ है तोभी हार कों हिये पर हृदय पर राखिये है, बड़ो जो आपु सों आय रहै तोभी नीच पद कों नहीं जाय। गूढ़ोक्ति॥६७३॥

जो सिर धरि महिमा मही लहियत राजा राव ।
प्रगटत जड़ता आपनी मुकुट पहिरियत पाव ॥६७४॥

जो सिर इति। जो मुकुट कों सिर पैं धरि कैं महिमा बड़ाई मही भूमि में राजा राव लहत है, आपनी जड़ता जाहिर होय 'मुकुट पहिरियत पाय' मुकुट पाव मैं पहिरै, जासौं सब प्रतिष्ठा पावै जाको सब आदर करै ताकों अनादर किये आपनी मूर्खता है। गूढ़ोक्ति अलङ्कार ॥ ६७४ ॥

चले जाहु ह्यां को करै हाथिनि को व्यौपार ।
नहिं जानत या पुर बसैं धोबी औड़ कुँभार ॥६७५॥

चले जाहु इति। चले जाहु इहां कौन करै हाथिनि कौ व्यौपार खरीदि नहीं जानत हौ या गाँव मं वसत है, धोबी, औड़ बेलदार औ कुंभार, तीनौ गदहा राखत हैं, कोई गँवार के गाँव में गुनी रह्यौ चाहत, है ताहिँ प्रति। गूढ़ोक्ति ॥ ६७५ ॥

करि फुलेल कौ आचमन मीठो कहत सराहि ।
रे गंधी मतिअंध तूं अतर दिखावत ताहि ॥६७६॥

करि इति। फुलेल पी कैं सराहि कैं कहा आछौ है, बहुत मीठौ है कहत है, रे गन्धी मतिअन्ध तूं ताहि अतर दिखावत है। कोई अज्ञान ने गुनी को छोटो गुन जान्यो नहीं, ताकों गुनी बड़ो गुन जाहिर करत है ताहिँ प्रति। गूढ़ोक्ति ॥ ६७६ ॥

विषमवृषादित की तृषा जिए मतीरनि सोधि ।
अमित अपार अगाध जल मारौ मूढ़ पयोधि ॥६७७॥

विषम इति। विषम सह्यौ नहीं जाय ऐसौ जो वृष को सूर्य जेठ मास को तामें लगी जो प्यास। किंवा विषम जो तृखा तहां मतीरा तरवूज कौं सोधि करि जिये है, मतीरा कौं सोधि कैं खाय कैं जिये हैं, ते कहत हैं, कि अमित अप्रमान अगाध गहिरो, ऐसो जल है जाहि पयोधि समुद्र में ताहि मूढ़ को मारौ ताको अनादर करौ, थोरीही दौलति के मनुष्य सौं काहू कौ कार्य्य सिद्ध होय तहां गूढ़ोक्ति ॥ ६७७ ॥

जम-करि मुह तरहरि पर्‌यौ यह धर हरि चित लाय।
विषै तृषा परिहरि अजौं नरहरि के गुनगाय॥६७८॥

अथ सान्त रस। निर्वेदस्थाईभाव वर्नन—जम इति। जम जो सो है करी हाथी, ताकै मुह कै तरहरि को अर्थ तरें पर्‌यौ मैं हौं, यह बात मनमें धारन करिकैं हरि विषैं चित्त लगाव, किंवा यह जो धरहरि है बचाव है, तामैं चित्तलगाव, कौन धरहरि, अब भी विषयइन्द्रिय को सुख कौं परिहरि छोड़ि कैं नरहरि न-

रसिंहजी तिनके गुन को गान कर, सिंह सों हाथी भाजै है किंवा
है नरहरि के गुन गान करि सिंहरूप जो भगवान है ताकौ।
जम सौं करी रूपक ॥ ६७८ ॥

जगत जनायौ जिहि सकल सो हरि जान्यौ नाहि ।
ज्यौं आंखिनि सब देखिए आँखि न देखी जाहि॥६७९॥

जगत इति। जिनि हरि ने जगत संसार कौं जनायौ उपजायौ सो हरि कौं रे मूढ़ तूं जान्यौ नाहि, जैसें आँखि सौं सब देखिये है, आँखि देखी नहीं जाति है। दृष्टान्त अलंकार ॥६७९॥

जपमाला छापा तिलक सरै न एकौ काम ।
मन काँचै नाचै वृथा साँचै राँचै राम ॥ ६८० ॥

जप माला इति। अक्षरार्थ। जप की माला औ छापा औ तिलक यातें एक भी काम नहीं सरै, कच्चा मन सौं नाचै है सो वृथा है, राम तौ साँचे कहे राचै राजी होय, यह अर्थ वैष्णव के मत सौं विरुद्ध है, दूसरो अर्थ, जाके जप माला छापा तिलक है वैष्णव को वेस धरे हैं, तासौं जो नये हैं नम्र भये हैं तिनकौं जिनि प्रनाम कियौ है, ताको काम सरै सिद्ध होत है ताकौं मोक्ष मिलै है, औ कोई कच्चा मन सौं वृथा नाचत है, वैष्णव को नकल करि नाचत है। तो भी राम सांच मानि के राजी होत है, यह हमैं राजी करिवे के लिये नाचत है। किंवा, अज्ञान सिष्य गुरु सौं पूछै है, जप माला छापा तिकल सों एक भी काम नहीं सरै नहीं सिद्ध होय, चारि कार्य्य है, अर्थ धर्म काम मोक्ष, गुरु कहत है, जप माला छापा तिलक सौं नए जे वैष्णव भए है, तु-

रत जिननैं वैराग्य लियौ है ताकौ कार्य सिद्ध होय। फेरि सिष्य पूछै है, कच्चा मन सौं जो वृथा नाचै? गुरुवचन—राम तो वाकै नृत्य कों सांच मान राजी होय. पहिला अर्थ मैं. परिसंख्या अलंकार, औरि सौं राजी नहीं होय सांच सौं राजी होय,—"परिसंख्या एकथल वरजि दूजै थल ठहराय, गुरु सिष्य के वचन मैं—

चित्र प्रश्न उत्तर दुहूं एक वचन मैं होय ॥ ६८०॥

यह जग काँचो काँच सौ मैं समुझ्यौ निरधार।
प्रतिबिम्बित लखिये जहां एकै रूप अपार॥६८१॥

यह जग इति। मैं निरधार निश्चय समझ्यौ कि यह जो जगत है सो काच सरीखो कच्चा है दृढ़ नहीं है, एक रूप सगुन ब्रह्म को सो अपार वड़ो जामैं प्रतिबिम्बित भासमान जहां लखिये है लक्षित कीजिये है, काच सो कच्चा उपमा, औ सब्दालंकार सर्व जगत विष्णुमय है शब्द प्रमाण है ॥ ६८१ ॥

बुधि अनुमान प्रमान श्रुति किये नीठि ठहराय।
सूछम गति परब्रह्म की अलख लखी नहिं जाय॥

बुधि इति। अनुमान को अर्थ निश्चय करनो, बुद्धि तैं निश्चय किये औ श्रुति के प्रमान सौं निश्चय किये नीठि कोई तरह ठहरत है, तौभी परब्रह्म की सूक्ष्म गति है। ब्रह्मादि देवतानि कौं अलख है सो औरि सौं नहीं लखी जाति है. द्वैतवादी विशिष्टाद्वैतवादी अद्वैतवादी आपुस मैं सदा वाद करत रहत हैं. वचन अनुभाव तैं शान्तरस व्यङ्ग्य लखी नहीं जाति है याकौं दृढ़ कियौ. यातैं काव्यलिंग ॥ ६८२ ॥

तौं लगि या मन सदन मैं हरि आवै किंहि बाट ।
विकट जटे जौलौं निपट खुटै न कपट कपाट ॥६८३॥

तौ लगि इति। तवतांई यह जो मन सो सदन घर है तामैं हरि कौन बाट कौन पथ सों आवै ? जौलों जबतांई विकट जो निपट कठिन जड़े जो कपट रूप कपाट खूटै नही छूटै नहीं। मन सदन रूपक अलंकार ॥ ६८३ ॥

या भव पारावार कौं उलँघि पार को जाय ।
तियछबि छायाग्राहिनी गहै बीचही आय ॥६८४॥

या भव इति। यह जो भव संसार सो पारावार समुद्र है ताकौं लांघि कैं कौन पार जाय मुक्त होय यह अर्थ। तिय स्त्री ताकी छवि सो छायाग्राहिनी राक्षसी है, छायाग्राहिनी ने हनुमान कौं पकस्यौ, बीचही आय कें पकरै है। छवि छायाग्राहिनी रूपक अलंकार ॥ ६८४ ॥

भजन कह्यौ तासौं भज्यौ भज्यौ न एकौ वार ।
दूर भजन जासौं कह्यौ सौ तूं भज्यौ गँवार॥६८५॥

भजन इति। गुरुवचन—जो भगवान कौं भजिवे कौं सेइवे कौं कह्यौ तासों तू भाज्यौ। विषय रूप रसादि सों दूर भाजिवौ कह्यौ रे गँवार तूं भज्यौ। जमक अलंकार ॥ ६८५ ॥

पतवारी मालाय करि औरि न कछू उपाव ।
तरि संसार पयोधि कौं हरिनामैं करि नाव ॥६८६॥

पतवारी इति। पतवारी नौका के पाछे होत है, वाही के

बल नाव चले है। माला सो पतवारी है, ताकों तूं पकरि, और कछू उपाव नहीं। संसार पयोधि संसार समुद्र कों तर, हरिनाम कों नाव करिकैं, जहां पार उतारनो होत है तहां पतवारी लागै है। इहां रूपक अलंकार ॥ ६८६ ॥

यह बिरिआ नहिं औरि की तूं करिआ वह सोधि ।
पाहननाव चढ़ाय जिनि कीने पार पयोधि ॥६८७॥

यह बिरिआ इति। यह वेर समय और की नहीं है, तूं वह करिया केवट श्रीरामचन्द्रजी तिनकों सोधि विचार, पाहन पत्थर सो भयो नाव तापर चढ़ाय कैं बाँदरनि कौं पयोधि समुद्र के पार किये, रामजी को सोधिवो समर्थित कियो। काव्यलिंग। पाहननाव रूपक ॥ ६८७ ॥

दूरि भजत प्रभु पीठ दै गुन विस्तारन काल ।
प्रगटत निर्गुन निकटही चंग रंग गोपाल ॥ ६८८ ॥

दूरि इति। पीठि देवो लोकोक्ति। प्रभु गुन के विस्तारन समय विषें पीठ देकैं दूर भाजत है, जब सगुन कौं खोजै है कहां है, कोई छीर समुद्र में वतावै है, कोई वैकुण्ठ विषें वतावै है, जब निर्गुन रूप ठहराइये है, तब सब यह ब्रह्म है, यातें चंग को रंग कहिये, तरह समान गोपाल है, चंग गुन विस्तारिवे की वेर आकास की ओर पीठ दै करि कैं दूर भाजै है, जब चंग की डोरि खींचि लीजिये है, तब नजीक प्रगटै है, कहूं भूपाल यह भी पाठ है, राजा तहां भी भूपाल गोपालही जानिये। राजा पक्ष लगाये चमत्कार नहीं निकरै। उपमालङ्कार। चंग को सो रंग तरह है

जाकी तहां वाचकता को लोप । किंवा जब आपनो गुन विस्तारिबे लागै, मैं वेदपाठी उत्तमकुल तब प्रभू दूर भाजै, जब पुरुष निर्गुन रूप होय अहो प्रभो मैं कछु जानत नाहिँ, तब प्रगटत ताकों प्रत्यक्ष होत है ॥ ६८८ ॥

जात जात वित होतु है ज्यौं जिय में संतोष ।
होत होत ज्यौं होय तौ होय घरी में मोष ॥ ६८९ ॥

जात जात इति । वित धन के जात जात जैसे जीव में सन्तोष होत है, तैसे जो धन के होते होते में सन्तोष होय तौ एक घरी में मोक्ष होय, घरी को अर्थ थोरे काल में, वचन अनुभाव तें शान्तरस व्यंग्य । सम्भावना अलंकार ॥ ६८९ ॥

ब्रजबासिनि कौं उचित धन सो धन रुचत न कोय ।
सुचित न आयो सुचितई कहौ कहां तें होय॥६९०॥

ब्रज इति । ब्रजवासिन कों जो धन उचित है जोग्य है, श्रीकृष्ण किंवा श्रीकृष्णविषयक प्रेम सो धन काहू कों नहीं रुचै, सो जो चित्त में नहीं आयो, तौ सुचितई चित्त की स्थिरता । किंवा निर्मलता कहौ कहां ते होय सकै, आठौं पहर मन उद्विग्न रहै, औधनधन । आवृत्तिदीपक ॥ ६९० ॥

नीकी दई अनाकनी फीकी परी गुहारि ।
तज्यौ मनो तारन बिरद बारक बारन तारि ॥६९१॥

नीकी दई इति । भक्तवचन—नीकी भली अनाकनी दीनी, देखत हौ तौभी मटिआये हौ, आगे भक्तन की गोहारि करै थे,

सो अब तुमें फीकी परो, वासौं अरुचि भई यह अर्थ, मानो तुम तारिबे को विरद प्रतिष्ठा को नाम, अधमोद्धारन दीनदयाल इत्यादि ताको छोड़्यौ, वारक एकवार वारन हाथी ताकौं तारिकैं जाकौं ग्राह ने गह्यौ थो। उत्प्रेक्षालङ्कार ॥ ६९१ ॥

दीरघ साँस न लेहि दुख सुख साँई नहिं भूल ।
दई दई क्यौं करत है दई दई सु कबूल ॥६९२॥

दीरघ इति। गुरु की उक्ति शिष्य सौं—दुःख में तूं दीरघ स्वास जनि लेहि, औ सुख में साँई स्वामी भगवान ताहि मति भूल। दैव दैव क्यौं पुकारत है, दैव कर्म दैव जो है भगवान तिन ने जो दियो सो कबूल है, परमेश्वर कों पुकारु यह अर्थ। जमक अलङ्कार ॥ ६९२ ॥

कौंन भाँति रहिहै विरद अब देखिबी मुरारि ।
बीधे मोसों आन कै गीधे गीधहिं तारि ॥ ६९३ ॥

कौन इति। हे मुरारि तुमारो विरद अधमोद्धारन इत्यादि क्योंकरि रहैगो, ? अब हम देखिबी देखहिंगे। मोहि अधम जानि कैं बीधे हौ लगे हौ, अति आसक्त भये हौ, गीध कौं तारि कैं गीधे हौ मेड़राये हौ। असम्भव अलङ्कार ॥ ६९३ ॥

बन्धु भए का दीन के को तार्‌यो रघुराय ।
तूठे तूठे फिरत हौ जूठे विरद बुलाय ॥६९४॥

बन्धु भये इति। तुम दीनदुखी के बंधु भये हौ का ? नहीं भये हौ यह अर्थ, हे रघुराय रघुकुलश्रेष्ट कौन को तार्‌यो है ? तूठे तूठे राजी राजी फिरत हौ, तारिबे को झूठो बिरद बुलाय कैं। काक्वोक्ति। किंवा वक्रोक्ति ॥ ६९४ ॥

थोरेई गुन रीझते बिसराई वह बानि ।
तुमहूँ कान्ह मनों भए आज कालि के दानि ॥६९५॥

थोरेई इति । आगे हे प्रभु तुम थोरेई गुन सौं रीझते थे, वह बानि कों बिसराई है, कान्ह तुम भी मानो आजु कालि के दाता भये । किंवा नट नाचे तहां दूसरो नट कहे है येभी कलान वहीं जाको नाम के दानि, सो हे कान्ह तुम थोरेही गुन सौं रीझते थे वा बानि बिसराय कें तुम आँजु कालि के दानि भये हो मानो के दानि नट रूपक, याते लोकोक्ति अलङ्कार । किंवा उत्प्रेक्षा अलङ्कार ॥ ६९५ ॥

कब को टेरत दीन ह्वै होत न स्याम सहाय ।
तुमहूं लागी जगतगुरु जगनायक जगबाय ॥६९६॥

कब को इति । कब को कितनी बेर को तुमकौं दीनदुखी होय कें टेरत हौं पुकारत हौं, हे स्याम सहाय नहीं होत हो । हे जगतगुरु जगत कौं शिक्षा के देनवाले जगत के नायक, जगत के पति, जगत की बयारि तुमकौं भी लगी यह बोलनि है, संसार को सो स्वभाव तुमारो भी भयो यह अर्थ । किंवा जगत विषें गुरु बड़ी जो है सबके मन कौं फेरति है, ऐसी जो जगत की बाय सो तुमहूं को लागी तुमहूं कौं मानो लागी है । रटि पाठ में टेरों हों रटि बार बार । गम्योत्प्रेक्षा । जगबाय लोकोक्ति ॥६९६॥

प्रगट भए द्विजराजकुल सुबस बसे ब्रज आय ।
मेरे हरो कलेस सब केसो केसोराय ॥६९७॥

प्रगट इति । केसव बिहारी को पिता, श्री केशवराय भगवान

द्विजराज चन्द्र ताके कुल में जो भगवान प्रगट भये सोई द्विज-राज ब्राह्मनश्रेष्ट कुल में, केसव प्रगट भये सुजस ब्रज में आयकें बसे हैं, अब ब्रज में आय भये हैं, हमारे कलेस कों हरौ। श्लेषालङ्कार। किंवा मेरे कलेस कौं हरौ, सबकी सौ जैसें सबके गज ग्राह आदि के कलेस हरे हौ, सौ को अर्थ तैसें ॥ ६९७ ॥

घर घर डोलत दीन ह्वै जन जन जाँचत जाय ।
दियें लोभ चसमा चखनि लघु पुनि बड़ो लखाय ॥

घर घर इति। घरघर में डोलत फिरत दीनदुखी होय कैं, औ जना जना कौं जाचतौ जात है, लोभ सोई है चसमा उपनेत्र ताकौं दिये लघु छोटो पुरुष बड़ो लखात है, देख्यौ जात है। किंवा लोभ चसमा दिये डारि दिये काहू कौं दे डारे गुरु जो है सो लघु दिखात है, लोभ सौ चसमा। रूपक ॥ ६९८ ॥

कीजे चित सोई तिरौं जिहि पतितनि के साथ ।
मेरे गुन औगुन-गननि गनौ न गोपीनाथ ॥६९९॥

कीजे इति। सोई उपाय चित्त में कीजिए जिहिँ जिस तरह सौं पतित तरत हैं, ताकि साथ मैंभी तिरौं, बाधास्पष्ट, तरिबे कों दृढ़ कियौ। काव्यलिंग ॥ ६९९ ॥

जौ अनेक पतितन दियो मोहूं दीजे मोष ।
तौ बाँधौ अपने गुननि जौ बाँधेही तोष ॥७००॥

ज्यौं अनेक इति। जैसें अनेक पतितन कौं दिये हौ, मोकौं भी मोक्ष दीजिये। जो तुमें हमकौं बाँधेही सौं सन्तोष है, तौ

आपने गुननि सौं बाँधौ, गुन डोरि गुन गुन। किंवा पांच प्रकार की मुक्ति भगवान देत हैं, भक्त सेवाही चाहत है, मुक्ति नहीं चाहत है, ऐसो वचन है। हे अनेकपति! अनेक के पालक! ज्यौं हमैं तन दियो है, तन रूप बन्धन दियो है तौ हमैं मोच दीजिये। जौं बांधेही सौं तोष है तौ आपने गुननि सौं बांधौ। रामानुज मत में भक्ति कौं साधन मानत है, मुक्ति कौं फल मानत है, संकार मत वाला कहत है, तो आपने गुननि कौं बांधि राखौ धरि राखौ, गुन डोरि गुन गुन। श्लेषालङ्कार। किंवा आक्षेपालङ्कार।

"पहिलें आपु जु कछु कहै फिर फेरैं आक्षेप," ॥ ७०० ॥

श्रीबिहारीजी की करी प्राचीन पोथी है तामें सात सौ दोहा हैं, और दोहा बीच में और लोगनि ने राखे हैं तासौं बढ्यो है।

कोऊ कोरिक संग्रहौ कोऊ लाख हजार ।
मो सम्पति जदुपति सदा बिपति बिदारनहार ॥७०१॥
ज्यौं ह्वैहौं त्यौं होंउगो हौ हरि अपनी चाल ।
हठ न करौ अति कठिन है मो तारिबौ गुपाल ॥७०२॥
करै कुगति औ कुटिलता तजौ न दीनदयाल ।
दुखी होहुगे सरलहिय वसत त्रिभङ्गी लाल ॥७०३॥
मोहि तुमैं वाढ़ी बहस कौ जीतै जदुराज ।
अपने अपने बिरद की दुहुनि निबाहन लाज॥७०४॥
निज करनी सकुचत हियें कत सकुचत इहिं चाल ।
मोहू से अति बिमुख त्यौं सनमुख रहौ गुपाल॥७०५॥

तौं अनेक औगुनभरी चाहै याहि वलाय ।
जौं पति सम्पतिहू बिना जदुपति राखे जाय ॥७०६॥
हरि कीजत तुमसौं यहै बिनती बार हजार ।
जिहिं तिहिं भाँति डर्यौ रहौं परो रहौं दरबार ॥७०७॥
तौं बलि है भलि है बनी नागर नन्दकिसोर ।
जौं तुम नीकैं करि लखौ मो करनी की ओर ॥७०८॥
समैं पलटि पलटै प्रकृति कौन तजै निज चाल ।
भौ अकरुन करुनाकरन यह कपूत कलिकाल ॥७०९॥
अपने अपने मत लगे बाद मचावत सोर ।
ज्यौं त्यौं सबही सेइबो एकै नन्दकिसोर ॥७१०॥
नन्द नन्द गोविन्द जय सुखमन्दिर गोपाल ।
पुण्डरीकलोचन ललित जै जै कृष्ण रसाल ॥७११॥
हुकुम पाय जैसाह को हरिराधिकाप्रसाद ।
करी बिहारी सतसई भरी अनेक सवाद ॥७१२॥
जद्यपि है सोभा घनी मुक्ताफल ।
गुहे ठौर की ठौर मे लर
वृजभाषा बरनी
सब की भूषन करी

कविनिवासस्थानवर्णनम् ।

सालग्रामी सरजु जहँ मिली गंग सो आय ।
अंतराल में देस सो हरि कवि को सरसाय ॥ १ ॥
सेवी जुगलकिसोर के प्राननाथ जी नाँव ।
सप्तशती तिन सों पढ़ी वासि सिगारवटठाँव ॥ २ ॥
जमुनातट शृंगार वट तुलसी विपिन सुदेस ।
सेवत संत महंत जहिं देखत हरत कलेस ॥ ३ ॥
पूरोहित श्रीनन्द के मुनि साण्डिल्य महान ।
हम हैं ताके गोत मैं मोहन मो जजमान ॥४॥
मोहन महा उदार तजि औरि जाँचिये काहि ।
ऋद्धि सुदामा कौं दई इन्द्र लही नहिं जाहि ॥५॥
गही अकस मनु तात तैं बिधि के बंस लखाय ।
राधा नाम कहै सुनैं आनन कान बढ़ाय ॥ ६ ॥
संवाति अठारह सौ बितै तापर तीस रु चारि ।
जनमाठै * पूरो कियो कृष्णचरन मन धारि ॥ ७ ॥

इति श्रीहरिचरणदासकृतायां हरिप्रकाशाख्यसप्तशतीटीकायां सप्तशती व्याख्यासमाप्ता ७ ॥ समाप्तोयं ग्रन्थः ।

---

* जन्माष्टमी ।